नवीन पूजा पाठ-संग्रह

संग्रहकर्त्ता एवं प्रकाशक

"सेठी बन्धु"

श्री वीर पुस्तक मंदिर

श्री महावीरजी

(राजस्थान)

महावीर जयन्ति
वी. नि. २४९१

★

मूल्य
रु० ३)

वीर पुस्तक मंदिर
श्री महावीरजी
(जि० सवाई माधोपुर)
राजस्थान

विषय-सूची

सं०	विषय	पृष्ठ
	प्रथम अध्याय	
१.	दर्शनपाठ तथा दर्शनविधि	१
२.	णमोकार मंत्र	२
३.	मङ्गल पाठ	२
४.	वर्तमान २४ तीर्थङ्कर	२
५.	विद्यमान २० तीर्थङ्कर	२
६.	भूतलकाल के २४ तीर्थङ्कर	३
७.	भविष्यत के २४ तीर्थङ्कर	३
८.	चांवल चढाने का छन्द	३
९.	लोंगवादामफल चढानेकाछंद	३
१०.	अर्घ्य चढाने का छंद	३
११.	स्तुति (मैं तुव चरण)	४
१२.	दर्शनपाठ संस्कृत (दर्शनंदेव)	४
१३.	चैत्य वंदना	५
१४.	विनतीबुधजनजी (प्रभुपतित)	६
१५.	विनती भूधरदासजी (अहो)	६
१६.	दर्शन पाठ दौलतरामजी (सकलज्ञेय)	८
१७.	गंधोदक लेने का श्लोक	९
१८.	शास्त्र स्तुति	९
१९.	अभिषेक पाठ	१०
२०.	पञ्च मङ्गल पाठ	११
२१.	गर्भ कल्याणक मङ्गल	११
२२.	जन्म कल्याणक मङ्गल	१२
२३.	तप कल्याणक मङ्गल	१४
२४.	ज्ञान कल्याणक मङ्गल	१५
२५.	निर्वाण कल्याणक मङ्गल	१७
२६.	पंचामृत अभिषेकपाठसंस्कृत	१९
२७	लघु पंचामृतभिषेकपाठ भाषा	२३
	दूसरा अध्याय	
	नित्य नियम पूजा	
२८	पूजन प्रारम्भ विधि	२५
२९.	विनय पाठ दोहावली	२६
३०.	पूजा प्रारम्भ	२८
३१.	पंचकल्याणक अर्घ्य	२९
३२.	पंचपरमेष्ठी का अर्घ्य	२९
३३.	सहस्र नाम का अर्घ्य	३०
३४.	स्वस्ति मङ्गल	३०
३५.	देव शास्त्र गुरु की पूजा	३२
३६.	बीस तीर्थङ्कर पूजा	३५
३७.	अकृत्रिम चैत्यालय अर्घ्य	३८
३८.	सिद्धपूजा द्रव्याष्टक	४०
३९.	सिद्धपूजा भावाष्टक	४४
४०.	सिद्धपूजा (परम०)	

सं०	विषय	पृष्ठ
४१.	ज्ञानावरणी कर्मनाशक सिद्ध जयमाल	४८
४२.	दर्शनावरणी कर्मनाशक"	४९
४३.	वेदनी कर्मनाशक "	४९
४४.	मोहनीकर्मनाशक "	५०
४५.	आयु कर्मनाशक "	५१
४६.	नाम कर्मनाशक "	५२
४७.	गोत्र कर्मनाशक "	५३
४८.	अन्तराय कर्मनाशक "	५४
४९.	अष्ट कर्मनाशक "	५४
५०.	सिद्धचक्र पूजा (अष्टकरम)	५५
५१.	बीस तीर्थङ्कर पूजा	५९
५२.	सोलह कारण का अर्घ्य	६१
५३.	पच मेरु का अर्घ्य	६२
५४.	नन्दीश्वर द्वीप का अर्घ्य	६२
५५	दश लक्षण धर्म का अर्घ्य	६२
५६.	रत्नत्रय का अर्घ्य	६३
५७.	समुच्चय चौबीसी पूजा	६३
५८.	निर्वाण क्षेत्र पूजा	६५
५९.	सप्तऋषि पूजा	६८
६०.	पचबालयतितीर्थंकर पूजा	७१
६१.	समुच्चय अर्घ्य (महार्घ्य)	७५
६२.	शान्ति पाठ भाषा	७७
६३.	भजन (नाथ तेरी पूजाको)	७८
६४.	भाषास्तुति(तुमतरणतारण)	७९
६५.	विसर्जन	८१
६६.	आशिका लेने का छन्द	८१
	पर्व पूजा	
६७.	पंच मेरु पूजा	८१
६८.	नन्दीश्वर (अष्टाह्निका पूजा	८४
६९.	सोलह कारण पूजा	८६
७०.	दश लक्षण धर्म पूजा	९०
७१.	स्वयंभू स्तोत्र भाषा	९५
७२.	रत्नत्रय पूजा	९७
७३.	दर्शन पूजा	९९
७४.	ज्ञान पूजा	१०१
७५.	चारित्र पूजा	१०२
७६	आदिनाथपूजा (नाभिराय)	१०५
७७	आदिनाथपूजा (परमपूज्य)	१०९
७८	चन्द्रप्रभ पूजा (चारित)	११२
७९.	शीतलनाथ पूजा (है नगर)	११६
८०.	वासुपूज्य पूजा (श्रीमत)	११९
८१.	अनन्तनाथ पूजा	१२३
८२.	शान्तिनाथ पूजा (याभव)	१२७

सं०	विषय	पृष्ठ
८३.	" (शांतिजिनेश्वर)	१३०
८४.	नेमिनाथ पूजा	१३५
८५.	पार्श्वनाथ पूजा	१३९
८६.	महावीर पूजा	१४३
८७.	देवपूजा	१४६
८८.	सरस्वती पूजा	१४९
८९.	गुरु पूजा	१५१
९०.	सिद्धपूजा भापा (स्वयं)	१५४
९१.	अकृत्रिम चैत्यालय पूजा	१५६
९२.	तीस चौबीसी पूजा	१६०
९३.	रविव्रत पूजा	१६६
९४.	रक्षाबन्धन पूजा	१६९
९५.	सलूनापर्व पूजा	१७२
९६.	क्षमावणी पूजा	१७६
९७.	अनन्त व्रत पूजा	१७९
९.८	चांदन गांव महावीर पूजा	१८१
९९.	पद्मपुरा स्थित पद्मपूजा	१८६
१००.	देवशास्त्रगुरुपूजा(युगलजी)	१९०
१०१.	पंचपरमेष्ठी पूजा	१९४
१०२.	शांति पाठ संस्कृत	१९९
१०३.	विसर्जन पाठ संस्कृत	२००
१०४.	महाअर्घ्य	२००
१०५	महाव्रतों का अर्घ्य	२०१
१०६.	महामुनियों का अर्घ्य	२०१
१०७	शांतिपाठ	२०२
१०८.	विसर्जन पाठ हिन्दी	२०२
१०९.	दीपमालिका विधान	२०३
११०.	दीपावली पूजा	२०४
१११	तिलक मन्त्र	२०४
११२.	जिनवाणी की आरती	२०५
११३.	बहियों मे स्वस्तिकादिलेख	२०५
११४.	सूतक विधि	२०६
११५.	शाति धारा पाठ	२०५

तीसरा अध्याय

स्तोत्र पाठ

सं०	विषय	पृष्ठ
११६.	वृहद महावीर स्तवन	२१०
११७.	नमस्कार	२१३
११८.	श्री पार्श्वनाथ स्तोत्र	२१४
११९.	आलोचना पाठ	२१५
१२०.	भापा सामायिक पाठ	२१८
१२१.	सामायिकपाठ रामचंद्रउपा.	२२२
१२२.	निर्वाण काण्ड (गाथा)	२२७
१२३	निर्वाण काण्ड (भापा)	२२८

सं०	विषय	पृष्ठ
१२४.	मेरी भावना	२३०
१२५.	दु:खहरण स्तुति	२३२
१२६	महावीर सन्देश	२३४
१२७.	भक्तामर स्तोत्र	२३६
१२८.	मोक्ष शास्त्र	२४५
१२९.	महावीराष्टकस्तोत्र संस्कृत	२६१
१३०.	महावीराष्टकस्तोत्र (भाषा)	२६२
१३१.	भक्तामर स्तोत्र (भाषा)	२६३
१३२.	समाधिमरण छोटा	२६६
१३३.	समाधि मरण भाषा	२७१
१३४.	बारह भावना (मंगतराय)	२७६
१३५.	बारह भावना (भूधर)	२८४
१३६.	चौबीस तीर्थंकरो के चिह्न	२८५
१३७.	मेरीद्रव्यपूजा(जुगलकिशोर)	२८५
१३८.	लघु सहस्रनाम स्तोत्र	२८९
१३९.	जिन सहस्रनाम स्तोत्र	२९०
१४०.	सङ्कटहरण स्तुति(हो दीन)	२९९
१४१.	वैराग्य भावना (बीजराख)	३०३
१४२.	गुरु स्तुति (वंदो दिग)	३०५
१४३.	गुरु स्तुति (ते गुरु)	३०६
१४४.	शांतिनाथ स्तव	३०७
१४५.	पार्श्वनाथ स्तव	३०९

सं०	विषय	पृष्ठ
१४६.	श्री वीर स्तवन	३१०
१४७.	मङ्गलाष्टक	३१२
१४८.	ऋषि मंडल स्तोत्र	३१४
१४९.	कल्याणमंदिर स्तोत्रभाषा	३१९
१५०.	एकीभाव स्तोत्र	३२३
१५१.	नामावली स्तोत्र	३२६
१५२.	पखवाडा	३२७
१५३.	अठाईरासा	३२८
१५४.	वैराग्य भावना भजन(सन्त)	३३१
१५५.	भावनाभजन(भावनादिन)	३३३
१५६.	पद्मावती स्तोत्र	३३३
१५७.	शास्त्रभक्ति (करूं भक्ति)	३३७
१५८.	सिद्धचक्र की आरती	३३८
१५९.	भजन सिद्धचक्र(सिद्धचक्र का	३३९
१६०.	शास्त्रस्वाध्यायका मंगला०	३४०
१६१.	आत्म कीर्तन (हूं स्वतन्त्र)	३४१
१६२.	एक भक्त पुजारी	३४१
१६३.	देवस्तवन (अनु. प्रेमीजी)	३४४
१६४.	वीर शासन(जिसकी दया)	३४५
१६५.	श्रवण वेलगोल स्तवन	३४६
१६६.	नेमिनाथ स्तवन	३४८
१६७.	पथिक सन्देश	३४९

ॐ

नवीन पूजा पाठ-संग्रह

(प्रथम अध्याय)

★ दर्शन पाठ तथा दर्शन विधि ★

प्रातःकाल उठकर शुद्ध जलसे स्नान कर सादे शुद्ध साफ वस्त्र पहिन, चांवल-लोंग-बादाम आदि सामग्री लेकर नंगे पाँव दर्शन के लिए मन्दिर मे जावे और वहां हाथ पाँव धोकर समवसरण मे प्रवेश करते समय, जय निःसहि ३ बार उच्चारण करे।

दर्शन करते समय नजर भगवान की प्रतिमा की ओर रखे। उस समय जो पाठ पढ़े उसीमें निमग्न होजाना चाहिए। भगवान की मूर्ति को एकटक होकर देखे और भावना करे कि जैसी वीत-रागता और शांति तुम मे है वैसी ही मेरे आत्मा मे भी उत्पन्न होजाय।

परिक्रमा देते समय यदि कोई स्त्री पुरुष धोक देरहा हो तो उसके आगे से न निकले, पीछे की ओर से निकले या जब तक वह खड़ा न होजाय तब तक खड़ा रहे, आगे न बढे। दर्शन करते समय इस तरह खड़ा होना या परिक्रमा देना चाहिए जिससे दूसरे व्यक्तियों को दर्शन पूजन मे विघ्न न पड़े। फिर भगवान के सामने खड़े होकर नीचे लिखा पाठ पढ़े।

ॐ नमः सिद्धेभ्यः, ॐ नमः सिद्धेभ्यः, ॐ नमः सिद्धेभ्यः, ॐ जय जय जय नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोस्तु।

णमोकार मंत्र

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाण, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥

नोट—इस णमोकार मन्त्र को ९ या ३ बार पढे ।

मङ्गल पाठ

चत्तारि मंगल—अरिहंता मंगल, सिद्धा मंगल, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मगलं । चत्तारि लोगुत्तमा—अरिहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पवज्जामि—अरिहंते सरणं पवज्जामि, सिद्धे सरणं पवज्जामि, साहू सरणं पवज्जामि—केवलि-पण्णत्तं धम्म सरण पवज्जामि ।

वर्तमान २४ तीर्थङ्करों के नाम

१. श्री आदिनाथजी २ अजितनाथजी ३. सम्भवनाथजी ४ अभिनन्दननाथजी ५ सुमतिनाथजी ६. पद्मप्रभजी ७. सुपार्श्वनाथजी ८. चन्द्रप्रभजी ९. पुष्पदन्तजी १०. शीतलनाथजी ११. श्रेयांसनाथजी १२. वासुपूज्यजी १३. विमलनाथजी १४. अनन्तनाथजी १५. धर्मनाथजी १६ शांतिनाथजी १७. कुंथुनाथजी १८. अरनाथजी १९ मल्लिनाथजी २०. मुनिसुव्रतनाथजी २१ नमिनाथजी २२. नेमिनाथजो २३. पार्श्वनाथजी २४. महावीर स्वामीजी को नमस्कार हो ।

विद्यमान बीस तीर्थङ्करों के नाम

श्री सीमधरजी, युगमधरजी, बाहुजी, सुबाहुजी, संजातकजी, स्वयंप्रभजी, वृषभाननजी, अनन्तवीर्यजी, सूरिप्रभजी, विशालकीर्तिजी वज्रधरजी, चन्द्राननजी, चन्द्रबाहुजी, ईश्वरजी, नेमीश्वरजी,

सेनजो, महाभद्रजी, भुजङ्गमजो, देवयशजी, अजितवीर्यजी को
स्कार हो।

भूतकाल के २४ तीर्थङ्करों के नाम

निर्वाण, सागर, महासाधु, विमलप्रभ, शुद्धाभ, श्रीधर, सुदत्त, मलप्रभ, उद्धर, अङ्गिर, सन्मति, सिन्धु, कुसुमांजलि, शिवगण, उत्साह, ज्ञानेश्वर, परमेश्वर, विमलेश्वर, यशोधर, कृष्णमति, ज्ञानमति, शुद्धमति, श्रीभद्र, शांत।

भविष्यतकाल के २४ तीर्थङ्करों के नाम

महापद्म, सुरदेव, सुपार्श्व, स्वयंप्रभ, सर्वात्मभूत, देवपुत्र, कुलपुत्र, उदङ्क, प्रौष्ठिल, जयकीर्ति, मुनिसुव्रत, अर, निष्पाप, निष्काय, विपुल, निर्मल, चित्रगुप्त, समाधिगुप्त, स्वयं, अनुवृत्तिक, जय, विमल, देवपाल, अनन्तवीर्य।

(फिर लाई हुई प्राशुक सामग्री को नीचे लिखे अनुसार छन्द पढ़कर चढ़ावे।)

(चांवल चढ़ाने का मंत्र)

तंदुल धवल पवित्र अति, नाम सुअक्षत तास।
अक्षत सो प्रभु पूजिये, अक्षय गुण परकाश॥

ॐ ह्री देवशास्त्रगुरुभ्योऽक्षयपद-प्राप्तयेऽक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

(लोंग बादाम फल चढ़ाने का मंत्र)

जो जैसी करनी करे, सो तैसा फल लेय।
फल पूजा महाराज की, निश्चय शिवफल देय॥

ॐ ह्री देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

(अर्घ चढ़ाने का छन्द)

उदक-चंदन-तंदुल-पुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकैः।
धवल-मंगल-गान-रवाकुले जिनगृहे जिननाथमहं यजे॥

ॐ ह्रीं श्रीं*..... "जिनेन्द्राय गर्भ जन्म तप ज्ञान निर्वाणकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(फिर नीचे लिखा पाठ पढे)

मै तव चरण कमल गुण गाय, बहुविधि भक्ति करी मन लाय ।
जनम जनम प्रभु पाऊं तोहि, यह सेवा फल दीजे मोहि ॥
कृपा तुम्हारी ऐसी होय, जामन मरण मिटावो मोय ।
बार बार मै बिनती करूं, तुम सेये भवसागर तरूं ॥
नाम लेत सब दुख मिट जाय, तुम दर्शन देख्यो प्रभु आय ।
तुम हो प्रभु देवन के देव, मै तो करूं चरण तव सेव ॥
मै आयो दर्शन के काज, मेरो जनम सफल भयो आज ।
पूजा करके नवाऊं शीश, मुझ अपराध क्षमहु जगदीश ॥

दोहा—सुख देना दुख मेटना, यही तुम्हारी बान ।
मो गरीब की बीनती, सुन लीज्यो भगवान ॥
दर्शन करते देव का, आदि मध्य अवसान ।
स्वर्गन के सुख भोगकर, पावै मोक्ष निदान ॥
जैसी महिमा तुम विषै, और धरै नहि कोय ।
सूरज मे जो ज्योति है, तारन मे नहि सोय ॥
नाथ तिहारे नामतैं, अघ छिनमाहि पलाय ।
ज्यो दिनकर परकाशतै, अंधकार विनशाय ॥

दर्शन पाठ संस्कृत

दर्शनं देवदेवस्य दर्शनं पापनाशनम् ।
दर्शनं स्वर्ग-सोपानं दर्शनं मोक्ष-साधनम् ॥१॥
दर्शनेन जिनेन्द्राणां साधूनां वन्दनेन च ।
न चिरं तिष्ठते पापं छिद्रहस्ते यथोदकम् ॥२॥
वीतरागमुखं दृष्ट्वा पद्मरागसमप्रभम् ।
जन्मजन्मकृतं पापं दर्शनेन विनश्यति ॥३॥

---

*वेदीमे जिन तीर्थङ्कर की प्रतिमा हो उनका नाम बोलना चाहिए ।

र्शनं जिनसूर्यस्य संसारध्वान्तनाशनम् ।

बोधनं चित्तपद्मस्य समस्तार्थप्रकाशनम् ॥ ४ ॥

र्शनं जिनचन्द्रस्य सद्धर्मामृतवर्षणं ।

जन्मदाहविनाशनाय वर्धनं सुखवारिधेः ॥ ५ ॥

जीवादितत्त्वप्रतिपादकाय सम्यक्त्वमुख्याष्टगुणार्णवाय ।

प्रशांतरूपाय दिगम्बराय देवाधिदेवाय नमो जिनाय ॥ ६ ॥

चिदानंदैकरूपाय जिनाय परमात्मने ।

परमात्मप्रकाशाय नित्यं सिद्धात्मने नमः ॥ ६ ॥

अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम ।

तस्मात् कारुण्यभावेन रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥ ८ ॥

नहि त्राता नहि त्राता नहि त्राता जगत्त्रये ।

वीतरागात्परो देवो न भूतो न भविष्यति ॥९॥

जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्दिने दिने ।

सदामेऽस्तु सदामेऽस्तु सदामेऽस्तु भवे भवे ॥१०॥

जिनधर्मविनिर्मुक्तो मा भवेच्चक्रवर्त्यपि ।

स्याच्चेटोऽपि दरिद्रोऽपि जिनधर्मानुवासितः ॥११॥

जन्म जन्म कृतं पापं जन्मकोटिमुपार्जितम् ।

जन्ममृत्युजरातंकं हन्यते जिनदर्शनात् ॥१२॥

चैत्य वंदना

सात करोड़ बहत्तर लाख पाताल विषै जिन मन्दिर जानो ।
मध्यलोक मे चारसौ अट्ठावन व्यंतर ज्योतिष के अधिकानो ॥
लाख चौरासी हजार सत्तानवे तेईस ऊरध लोक बखानो ।
इक इक में प्रतिमा शत आठ नमों कर जोड़ त्रिकाल सयानो ॥

[फिर अष्टांग नमस्कार दण्डवत् करे और ३ परिक्रमा (फेरी) देवे उस समय आगे लिखी विनती पढे]

नोट—कही कही समवसरण मे प्रवेश करके पहले परिक्रमा करने का विधान है।

विनती बुधजनजी कृत

प्रभु पतित-पावन मैं अपावन चरण आयो शरण जो।
यो विरद आप निहार स्वामी मेट जामन मरणजो ॥
तुम ना पिछान्या आन मान्या देव विविध प्रकारजो।
या बुद्धिसेती निज न जान्यो भ्रम गिन्यो हितकारजी ॥
भव-विकट-बन में कर्म वैरी ज्ञान धन मेरो हरचो।
तब इष्ट भूल्यो भ्रष्ट होय अनिष्टगति धरतो फिरचो ॥
धन घडी यो धन दिवस योही धन जनम मेरो भयो।
अब भाग्य मेरो उदय आयो दरश प्रभु को लख लयो ॥
छवि वीतरागी नग्न मुद्रा दृष्टि नासा पैं धरैं।
वसु प्रातिहार्य अनन्त गुण युत कोटि रवि छवि को हरैं ॥
मिट गयो तिमिर मिथ्यात्व मेरो उदय रवि आतम भयो।
मो उर हरष ऐसो भयो मनु रङ्क चितामणि लयो ॥
मै हाथ जोड नमाय मस्तक वीनऊं तुव चरणजो।
सर्वोत्कृष्ट त्रिलोकपति जिन सुनहु तारण-तरणजी ॥
जाचूं नही सुरवास पुनि नर राज परिजन साथजी।
'बुध' जाचहूँ तुम भक्ति भव भव दीजिये शिवनाथजी ॥

नोट—फिर भगवानके सन्मुख खड़ा होकर आगे लिखी विनती पढे।

विनती भूधरदास कृत

अहो जगत गुरु देव, सुनियो अरज हमारी।
तुम हो दीन दयालु, मै दुखिया संसारी ॥
इस भव बन मे वादि, काल अनादि गमायो।
भ्रमत चतुर्गति मांहि, सुख नही दुख बहु पायो ॥

कर्म महारिपु जोर, एक न कान करें ।
मन मानो दुख देय, काहूँ सो नाही डरें जी ॥
कबहूँ इतर निगोद, कबहूँ नरक दिखावें ।
सुर नर पशु गति मांहि बहु विधि नाच नचावे ॥
प्रभु इनको परसंग, भव भव मांहि बुरो जी ।
जो दुख देखे देव ! तुम से नाहि दुरोजी ॥
एक जनम की बात, कहि न सको सुन स्वामी ।
तुम अनन्त परजाय, जानत अन्तरजामी ॥
मै तो एक अनाथ, ये मिलि दुष्ट घनेरे ।
कियो बहुत वेहाल, सुनियो साहिब मेरे ॥
ज्ञान महानिधि लूट, रङ्क निबल कर डारचो ।
इनही तुम मुझ माहि हे जिन ! अन्तर पारचो ॥
पाप पुण्य मिल दोय, पायनि बेड़ी डारी ।
तन कारागृह मांहि, मोहि दियो दुख भारी ॥
इनको नेक बिगार, मै कछु नांहि कियोजी ।
बिन कारण जगबन्धु ! बहुविधि वैर लियोजी ॥
अब आयो तुम पास, सुनके सुजश तिहारो ।
नीति निपुण महाराज, कीजे न्याय हमारो ॥
दुष्टन देहु निकार, साधुन को रख लीजे ।
विनवे "भूधरदास", हे प्रभु ढील न कीजे ॥

विनती पढ़कर भगवान की प्रतिमा का ध्यान करे और विचारे धन्य है इस ध्यान को, धन्य है इस वीतराग मुद्रा को, इन्होंने जपाट तज कर आत्म-ध्यान के द्वारा केवलज्ञान प्राप्त किया। वह दिन कब हो कि मै भी इनकी तरह आत्म-कल्याण करूं, इत्यादि विचार कर अष्टांग नमस्कार करे। फिर और वेदियों पर जाकर इसी प्रकार दर्शन करे।

दर्शन पाठ (पं० दौलतरामजी कृत)

दोहा—सकल ज्ञेय ज्ञायक तदपि, निजानन्द-रस-लीन ।
सो जिनेन्द्र जयवन्त नित, अरि-रज-रहस-विहीन ॥

पद्धरि छन्द

जय वीतराग विज्ञान पूर, जय मोह-तिमिर को हरन सूर ।
जय ज्ञान अनन्तानन्त धार, दृग-सुख-वीरज-मंडित अपार ॥३॥
जय परम शान्ति मुद्रा समेत, भवि-जनको निज अनुभूति देत ।
भवि-भागनवश जोगे वशाय, तुम ध्वनि है सुनि विभ्रम नशाय ।
तुम गुण चिन्तत निज-पर-विवेक, प्रकटे विघटे आपद अनेक ।
तुम जगभूषण दूषण-वियुक्त, सब महिमायुक्त विकल्प-मुक्त ॥४॥
अविरुद्ध शुद्ध चेतन स्वरूप, परमात्म परम पावन अनूप ।
शुभ अशुभ विभाव अभाव कीन, स्वाभाविक परणति मय अछीन ।
अष्टादश दोष विमुक्त धीर, स्वचतुष्टय मय राजत गंभीर ।
मुनि गणधरादि सेवत महन्त, नव केवल-लब्धि-रमा धरन्त ॥६॥
तुम शासन सेय अमेय जीव, शिव गये जाहिं जैहैं सदीव ।
भवसागर मे दुख क्षार वारि, तारण को और न आप टारि ॥७॥
यह लखि निज दुख-गद हरण काज, तुम ही निमित्त कारण इलाज ।
जाने तातै मै शरण आय, उचरो निज दुख जो चिर लहाय ॥८॥
मै भ्रम्यो अपनपो विसरि आप, अपनाये विधि फल पुण्यपाप ।
निजको परको करता पिछान, पर मे अनिष्टता इष्ट ठान ॥९॥
आकुलित भयो अज्ञान धारि, ज्यों मृग मृग-तृष्णा जानि वारि ।
तन-परणति मे आपो चितार, कबहू न अनुभवो स्व-पद सार ॥१०॥
तुम को जाने बिन जो कलेश, पाये सो तुम जानत जिनेश ।
पशु नारक-नर-सुर-गति-मझार, भव धर धर मर्‍यो अनन्तवार॥१
अब काल-लब्धि बलतै दयाल, तुम दर्शन पाय भयो खुशाल ।

मन शांत भयो मिटि सकलद्वन्द, चाख्यो स्वातम रस दुख निकंद ॥१२॥
तातै अब ऐसी करहुँ नाथ, बिछुड़े न कभी तुम चरण साथ ।
तुम गुणगण को ना छेव देव, जगतारण को तुम विरद एव ॥१३॥
आतम के अहित विषय कषाय, इनमे मेरी परिणति न जाय ।
मै रहूँ आपमे आप लीन, सो करो होउं जो निजाधीन ॥१४॥
मेरे न चाह कछु और ईश, रत्नत्रय निधि दीजे मुनीश ॥
मुझ कारजके कारणसु आप, शिव करहु हरहु मम मोह ताप ॥१५॥
शशि शांतिकरण तपहरण हेत, स्वयमेव तथा तुम कुशल देत ।
पीवत पियूष ज्यों रोग जाय, त्यों तुम अनुभव ते भव नशाय ॥१६॥
त्रिभुवन तिहुँकाल मझार कोय, नहि तुम बिन निज सुखदाय होय ।
मो उर यह निश्चय भयो आज, दुखजलधि उबारन तुम जहाज ॥१७॥
दोहा—तुम गुणगण-मणि गणपती, गणत न पावहि पार ।
'दौल' स्वल्पमति किम कहै, नमूँ त्रियोग सम्हार ॥

गंधोदक का श्लोक

निर्मलं निर्मलीकरणं पावनं पापनाशनं ।
जिनचरणोदकं वंदे, चाष्टकर्म-विनाशकं ॥

अथवा

तुम पद पङ्कज धूलिको, जो लावें निज अंग ।
ते निरोग शरीर लहि, छिन में होय अनंग ॥

फिर बाहर आकर शास्त्र-भंडार के सामने खड़े होकर नीचे लिखे छन्द पढकर जिनवाणी को नमस्कार करे और शास्त्र सुने अथवा स्वाध्याय करे ।

शास्त्र स्तुति

वीर हिमाचलतें निकसी गुरु गौतम के मुख कुण्ड ढरी है ।
मोह महाचल भेद चली जग की जडतातप दूर करी है ॥

ज्ञान पयोनिधि मांहि रली बहु भंग तरंगनि सो उछरी है।
ता शुचि-शारद गंगनदी प्रति मै अंजुलि निज शीश धरी है ॥
या जग मन्दिर मे अनिवार अज्ञान अंधेर छयो अति भारी।
श्री जिनकी धुनि दीप-शिखा सम जो नहिं होत प्रकाशनहारी ॥
तो किहि भांति पदारथ पांति कहा लहते रहते अविचारी।
या विधि सन्त कहे धन है धन है जिन बैन बड़े उपकारी ॥

दोहा—जा वाणी के ज्ञानतें, सूझे लोकालोक।
सो वाणी मस्तक चढो, नित प्रति देतहुं धोक ॥

नोट—विद्यार्थीगण मन्दिरजी से आकर, ताजा भोजन करके पाठशाला मे जावे, गुरुजी को प्रणाम करे और पाठशाला के आरम्भ मे मिलकर प्रार्थना करे।

अभिषेक पाठ

नोट—यदि श्री जी को दूसरे स्थान पर विराजमान कर अभिषेक करना हो तो यह श्लोक पढना चाहिए।

यं पांडुकामल-शिलागतमादिदेवमस्नापयन्सुरवराः सुरशैलमूर्ध्नि।
कल्याणमीप्सुरहमक्षततोयपुष्पैःसभावयामि पुर एव तदीय बिबं ॥

जल अक्षत पुष्प क्षेपणकर श्रीकार लिखित पीठपर जिनबिंब की स्थापना करना चाहिए।

दूरावनम्रसुरनाथकिरीटकोटीसंलग्नरत्नकिरणच्छविधूसरांघ्रि।
प्रस्वेदतापमलमुक्तमपि प्रकृष्टैर्भक्त्या जलैर्जिनपतिं बहुधाभिषिंचे।

ॐ ह्रीं श्रीमंतं भगवंतं कृपालसंतं वृषभादिमहावीरपर्यन्तं चतुर्विंशतितीर्थङ्करपरमदेवं आद्यानां आद्ये जंबूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखंडे ....नाम्नि नगरे मासानामुत्तमे मासे....मासे.... पक्षे....शुभदिने मुनि आर्यिका श्रावकश्राविकानां सकलकर्मक्षयार्थं जलेनाभिषिंचे नमः ॥

(इसे पढकर श्री जिनप्रतिमा पर जल के कलश से धारा

छोडनी चाहिये। धारा के बाद "उदकचंदन" आदि श्लोक बोल कर अर्घ चढाना चाहिये।

पंच मंगल पाठ

ये पांचों मंगल अभिषेक के समय न बोलकर सामग्री बनाते समय बोल लेना चाहिये।

पणविवि पंच परमगुरु गुरु जिनशासनो।
सकलसिद्धि दातार सु विघन विनासनो॥
शारद अरु गुरु गौतम सुमति प्रकासनो।
मंगल कर चउ संघहि पापपणासनो॥
पापहि पणासन गुणहि गरुआ, दोष अष्टादश-रहिउ।
धरि ध्यान करम विनाशि केवल-ज्ञान अविचल जिन लहिउ॥
प्रभु पञ्चकल्याणक विराजित, सकल सुरनर ध्यावहीं।
त्रैलोक्यनाथ सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं॥ १॥

१ गर्भ कल्याणक

जाके गर्भ कल्याणक, धनपति आइयो।
अवधिज्ञान-परवान, सु इन्द्र पठाइयो॥
रचि नव बारह जोजन, नयरि सुहावनो।
कनकरयणमणिमंडित, मंदिर अति बनो॥
अति बनी पोरि पगारि परिखा, सुवन उपवन सोहिये।
नरनारि सुन्दर चतुर भेख सु, देख जनमन मोहिये॥
तहँ जनकगृह छहमास प्रथमहि रतन-धारा बरसियो।
पुनि रुचिकवासिनि जननि-सेवा करहिं सबविधि हरषियो॥२॥
सुरकुंजर सम कुंजर, धवल धुरंधरो।
केहरि-केशरशोभित, नखशिख सुंदरो॥
कमलाकलश-न्हवन, दुइ दाम सुहावनो।
रवि-शशि-मंडल मधुर, मीन जुग पावनो॥

पावनि कनक घट जुगम पूरन, कमलकलित सरोवरो ।
कल्लोलमालाकुलितसागर, सिंहपीठ मनोहरो ॥
रमणीक अमर-विमान फणिपति-भुवन रवि छवि छाजई ।
रुचि रतनराशि दिपंत, दहन सु तेजपुंज विराजई ॥ ३ ॥
ये सखि सोलह सुपने सूतो सयनही ।
देखे माय मनोहर, पच्छिम रयनहीं ॥
उठि प्रभात पिय पूछियो, अवधि प्रकाशियो ।
त्रिभुवनपति सुत होसी, फल तिहँ भासियो ॥
भासियो फल तिहिं चित दपति परम आनदित भये ।
छहमास परि नवमास पुनि तहँ, रैन दिन सुखसो गये ॥
गर्भावतार महत महिमा सुनत सब सुख पावही ।
भनि 'रूपचन्द' सुदेव जिनवर जगत मंगल गावही ॥४॥

२ जन्मकल्याणक

मतिश्रुतअवधिविराजित, जिन जब जनमियो ।
तिहूँलोक भयो छोभित, सुरगन भरमियो ॥
कल्पवासि-घर घट अनाहद बज्जियो ।
जोतिषघर हरिनाद, सहज गल गज्जियो ॥
गज्जियो सहजहिं संख भावन, भुवन सबद सुहावने ।
वितरनिलय पटु पटह बज्जहि, कहत महिमा क्यों बने ॥
कंपित सुरासन अवधिबल जिन-जनम निहचै जानियो ।
धनराज तब गजराज माया-मयी निरमय आनियो ॥ ५ ॥
जोजन लाख गयंद, वदन सौ निरमये ।
वदन वदन वसुदंत दंत सर संठये ॥
सर-सरसौ पनबीस, कमलिनी छाजही ।
कमलिनि कमलिनि कमल पचीस विराजही ॥

राजहि कमलिनी कमलऽठोतर सौ मनोहर दल बने।
दल-दलहि अपछर नटहि नवरस, हाव भाव सुहावने॥
मणि कनककिंकणि वर विचित्र, सु अमरमण्डप सोहिये।
घन घंट चंवर धुजा पताका, देखि त्रिभुवन मोहिये॥ ६॥
तिहि करि हरि चढि आयउ, सुरपरिवारियो।
पुरिहि प्रदच्छन दे त्रय, जिन जयकारियो॥
गुप्तजाय जिन-जननिहिं, सुखनिद्रा रची।
मायामयि शिशु राखि तौ, जिन आन्यो सची॥
आन्यो सची जिनरूप निरखत, नयन तृपत न हूजिये।
तब परम हरषित हृदय हरिने सहस लोचन पूजिये॥
पुनि करि प्रणाम जु प्रथम इंद्र, उछग धर प्रभु लीनऊ।
ईशान इंद्र सु चंद्र छवि सिर, छत्र प्रभु के दीनऊ॥७॥
सनत्कुमार महेन्द्र, चमर दुइ ढारही।
शेष शक्र जयकार, सबद उच्चारही॥
उच्छवसहित चतुरविधि, सुर हरषित भये।
जोजन सहस निन्यानव, गगन उलंघि गये॥
लंघिगये सुरगिर जहाँ पाडुक-बन विचित्र विराजही।
पाण्डुक शिला तहँ अर्द्धचद्र समान, मणि-छवि छाजही॥
जोजन पचास विशाल दुगुणा, याम वसु ऊंची गनी।
वर अष्ट-मङ्गल-कनक कलशनि सिंहपीठ सुहावनी॥८॥
रचि मणिमंडप शोभित, मध्य सिंहासनो।
थाप्यो पूरव-मुख तहं, प्रभु कमलासनो॥
वाजहि ताल मृदंग, वेणु वीणा घने।
दुंदुभि प्रमुख मधुरधुनि, अवर जु बाजने॥
बाजने बाजहिं सची सब मिलि, धवल मंगल गावही।
पुनि करहि नृत्य सुरागना सब देव कौतुक धावही॥

भरि क्षीरसागर जल छु हार्थहि हाथ सुरगिरि ल्यावही।
सौधर्म अरु ईशान इंद्र सु कलश ले प्रभु न्हावही ॥ ९ ॥
वदन उदर अवगाह, कलशगत जानिये।
एक चारु वसु जोजन मान प्रमानिये ॥
सहस-अठोतर कलशा, प्रभुके सिर ढरै ॥
पुनि सिगार प्रमुख, आचार सबै करैं ॥
करि प्रकट प्रभु महिमा महोच्छव, आनि पुनि मातहिं दये।
धनपतिहिं सेवा राखि सुरपति, आप सुरलोकहिं गये॥
जनमाभिषेक महंत महिमा, सुनत सब सुख पावही।
भणि 'रूपचद' सुदेव जिनवर जगत मङ्गल गावही ॥१०॥

३ तपकल्याणक

श्रमजल रहित शरीर, सदा सब मल-रहिउ।
छीर-वरनवर रुधिर, प्रथम आकृति लहिउ ॥
प्रथम सार संहनन, सुरूप विराजही।
सहज सुगन्ध सुलच्छन मडित छाजही ॥
छाजहिं अतुलबल परम प्रिय हित, मधुर वचन सुहावने।
दस सहज अतिशय सुभग मूरति, बाललील कहावने ॥
आबाल काल त्रिलोकपति जिन रुचित उचित जु नित नये।
अमरोपुनीत पुनीत अनुपम, सकल भोग विभोगए ॥११॥
भवतन भोग विरक्त, कदाचित चित्तए।
धन यौवन पिय पुत्त, कलत्त अनित्त ये ॥
कोउ न शरन मरन दिन, दुख चहुंगति भरयो।
सुख दुख एकहि भोगत, जिय विधिवश परयो ॥
परयो विधिवश आन चेतन, आन जडजु कलेवरो ॥
तन अशुचि परतै होय आस्रव, परिहरेतैं संवरो।
निरजरा तपबल होय समकित, बिन सदा त्रिभुवन भ्रम्यो।
दुर्लभ विवेक बिना न कबहूँ, परम धरम विषै रम्यो ॥१२॥

ये प्रभु बारह पावन, भावन भाइया।
लौकांतिक वरदेव, नियोगी आइया॥
कुसुमांजलि दे चरन, कमल सिर नाइया।
स्वयंबुद्ध प्रभु थुतिकरि, तिन समुझाइया॥
समुझाय प्रभुको गये निजपुर, पुनि महोच्छव हरि कियो।
रुचि रुचिर चित्र विचित्र सिविका, कर सुनंदन बन लियो॥
तहँ पंचमुष्टी लोंच कीनो, प्रथम सिद्धनि नुति करी।
मंडिय महाव्रत पंच दुद्धर, सकल परिग्रह परिहरि॥१३॥
मणिमय भाजन केस, परिट्ठिय सुरपती।
छीर-समुदजल खिपकरि गयो अमरावती॥
तप संयमबल प्रभुको, मनपरजय भयो।
मौनसहित तप करत, काल कछु तहँ गयो॥
गयो कछु तहँ काल तपबल, ऋद्धि वसु विधि सिद्धिया।
जसु धर्मध्यानवलेन खयगय, सप्त प्रकृति प्रसिद्धिया॥
खिपि सातवेगुण जतनबिन तहँ, तीन प्रकृति जु बुधि बढ़िऊ।
करि करण तीन प्रथम सुकलबल, क्षिपकसेनी प्रभु चढ़िउ।१४।
प्रकृति छतीस नवे गुणथान विनासिया।
दसवे सूच्छमलोभ, प्रकृति तहँ नासिया॥
सुकल-ध्यानपद दूजो, पुनि प्रभु पूरिया।
बारहवे गुण सोरह, प्रकृति जु चूरिया॥
चूरिया त्रेसठ प्रकृति इहविधि, घातिया-करमन तणी॥
तह कियो ध्यानप्रयत बारह-विधि त्रिलोकशिरोमणि॥
निःक्रमण कल्याणक सु महिमा सुनत सब सुख पावही।
भणि 'रूपचन्द' सुदेव जिनवर जगत मंगल गावही॥१५॥

४ ज्ञान कल्याणक

तेरहवे गुणथान, सयोगि जिनेसुरो।
अनतचतुष्टयमंडित, भयो परमेसुरो॥

समवसरन तब धनपति, बहुविधि निरमयो।
आगम जुगति-प्रमान, गगनतल परि ठयो ॥
परि ठयो चित्र विचित्र मणिमय, सभा मंडप सोहये।
तिहि मध्य बारह बने कोठे, बैठ सुरनर मोहये ॥
मुनि कल्पवासिनि अरजिका पुनि, ज्योति-भौम-भवन-तिया।
पुनि भवन व्यतर नभग सुर नर, पशुनि कोठे बैठिया ॥१६॥
मध्यप्रदेश तीन, मणिपीठ तहां बने।
गंधकुटो सिहासन, कमल सुहावने ॥
तीन छत्र सिर सोहित, त्रिभुवन मोहए।
अन्तरीच्छ कमलासन, प्रभुतन सोहए ॥
सोहए चौसठि चमर ढुरत, अशोकतरु तल छाजिये।
पुनि दिव्यधुनि प्रतिशब्दजुत तह, देवदुन्दुभि बाजिए ॥
सुर पुहुपवृष्टि सुप्रभा मंडल, कोटि रवि छवि छाजिए।
इमि अष्ट अनुपम प्रातिहारज, वर विभूति विराजिए ॥१७॥
दुइसै जोजनमान सुभिक्ष चहू दिसी।
गगन-गमन अरु प्राणी बध नहि अह निसी ॥
निरुपसर्ग निरहार, सदा जगदीस ए।
आनन चार चहूं दिसि, शोभित दीसए ॥
दीसय असेस विशेष विद्या, विभव वर ईशरपना ॥
छाया विवर्जित शुद्ध फटिक समान तन प्रभुका बना ॥
नहि नयन-पलक पतन कदाचित, केस नख सम छाजही।
ये घातियाछय-जनित अतिशय, दश विचित्र विराजही ॥१८॥
सकल अरथमय मागधि—भाषा जानिये।
सकल जीवगत मैत्री—भाव बखानिये ।
सकल रितुज फल फूल वनस्पति मन हरै।
दरपनसम मनि अवनि, पवन गति अनुसरै ॥

अनुसरै परमानन्द सबको, नारि नर जे सेवता।
जोजन प्रमाण धरा सुमार्जहि जहां मारुत देवता॥
पुनि करहिं मेघकुमार गंधोदक सुवृष्टि सुहावनी।
पद कमलतर सुर खिपहिं, कमलसु धरणि ससि शोभा बनी॥१९॥

अमल गगनतल अरु दिश, तहं अनुहारही।
चतुरनिकाय देवगण, जय जयकारही॥
धर्मचक्र चले आगे, रवि जहँ लाजही।
पुनिभृङ्गार-प्रमुख वसु, मङ्गल राजही॥
राजही चोदह चारु अतिशय, देव रचित सुहावने।
जिनराज केवलज्ञान महिमा, अवर कहत कहा बने॥
तव इन्द्र आयो कियो महोच्छव सभा शोभा अति बनी।
धर्मोपदेश दियो तहां, उच्चरिय वानी जिन तनी॥२०॥

क्षुधा तृषा अरु राग, द्वेष असुहावने।
जनम जरा अरु मरण, त्रिदोष भयावने॥
रोग शोक भय विस्मय, अरु निद्रा घनी।
खेद स्वेद मद मोह, अरति चिन्ता गनी॥
गनिये अठारह दोष तिनकरि, रहित देव निरंजनो।
नव परमकेवललब्धि मण्डित, शिवरमनि-मन रंजनो॥
श्रीज्ञानकल्याणक सुमहिमा, सुनत सब सुख पावही।
भणि 'रूपचन्द' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं॥२१॥

५ निर्वाण कल्याणक

केवलदृष्टि चराचरा, देख्यो जारिसो।
भव्यनिप्रति उपदेस्यो, जिनवर तारिसो॥
भवभयभीत भविकजन शरणै आइया।
रत्नत्रयलच्छन शिवपंथ लगाइया॥
लगाइया पन्थ जु भव्य पुनि प्रभु, तृतिय सुकल जु पूरियो।

तजि तेरहे गुणथान जोग, अयोगपण पग धारियो ॥
पुनि चौदहे चोथे सुकलबल बहत्तर तेरह हती ।
इमि घाति वसुविधि कर्म पहुँच्यो समय मे पंचमगती ॥२२॥
लोकशिखर तनुवात-वलयमहँ संठियो ।
धर्मद्रव्य बिन गमन न जिहि आगैं कियो ॥
नयनरहित मूषोदर, अंबर जारिसो ।
किमपि हीन निजतनुतै, भयो प्रभु तारिसो ॥
तारिसो पर्यय नित्य अविचल, अर्थ पर्जय छन छयो ।
निश्चयनयेन अनतगुण, विवहार नय वसु गुणमयी ॥
वस्तु-स्वभाव विभावविरहित शुद्ध परणति परिणयो ।
चिद्रूप परमानन्द मंदिर, सिद्ध परमातम भयो ॥२३॥
तनुपरमाणु दामिनिपर, सब खिर गये ।
रहे शेष नख केश-रूप जे परिणये ॥
तब हरिप्रमुख चारविधि, सुरगण शुभ सच्यो ।
मायामयि नख केश रहित, जिनतनु रच्यो ॥
रचि अगर-चन्दन प्रमुख परिमल, द्रव्य जिन जयकारियो ।
पदपतित अगनिकुमार मुकुटानल, सुविधि संस्कारयो ॥
निर्वाण कल्याणक सु महिमा, सुनत सब सुख पावही ।
भणि 'रूपचन्द' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावही ॥२४॥
मै मतिहीन भगतिवस, भावन भाइया ।
मङ्गलगीतप्रबध सु जिनगुण गाइया ॥
जो नर सुनहि बखानहि सुर धरि गावही ।
मनवाछित फल सो नर, निहचै पावही ॥
पावही आठो सिद्धि नवनिधि, मन प्रतीत जो लावही ।
भ्रमभाव छूटै सकल मनके निज स्वरूप लखावही ॥
पुनि हरहिं पातक टरहिं विघन, सुहोहिं मंगल नित नये ।

भणि 'रूपचन्द' त्रिलोकपति जिनदेव चउसंघहिं जये ॥२५॥

पंचामृत अभिषेक पाठ

(घृत दुग्ध दधि आदि से पंचामृत अभिषेक करना हो तो यह बोलना चाहिए। अगर संस्कृत पाठ पढना नही आता हो तो आगे छपा हुआ भाषा पंचामृत अभिषेक पाठ बोलकर करना चाहिए)

श्रीमज्जिनेंद्रमभिवंद्य जगत्त्रयेशं,
स्याद्वादनायकमनंतचतुष्टयार्हम्।
श्रीमूलसंघसुदृशा सुकृतैकहेतु—
र्जैनेंद्रयज्ञविधिरेष मयाभ्यधायि ॥१॥

(इस श्लोक को पढकर जिनचरणों मे पुष्पांजलि छोडनी चाहिये।)

श्रीमन्मंदरसुन्दरे शुचिजलैर्धौते सदर्भाक्षते
पीठे मुक्तिवरं निधाय रचितं त्वत्पादपद्मस्रजः।
इंद्रोऽहं निज-भूषणार्थकमिदं यज्ञोपवीतं दधे
मुद्रा-कंकण-शेखराण्यपि तथा जैनाभिषेकोत्सवे ॥२॥

(इस श्लोक को पढकर अभिषेक करने वालों को यज्ञोपवीत तथा अनेक (सच्चे व चंदन के) आभूषण धारण करना चाहिए।)

सौगंध्य-संगत-मधुव्रत-झंकृतेन, संवर्ण्यमानमिव गंधमनिंद्यमादौ।
आरोपयामि विबुधेश्वर-वृंद-वंद्य-पादारविंदमभिवंद्यजिनोत्तमानां ॥

(इसे पढकर अभिषेक करने वालों को अंग में चंदन के नव जगह तिलक करना चाहिये।)

ये संति केचिदिह दिव्य-कुल-प्रसूता, नागाः प्रभूत-बल-दर्पयुता विबोधाः। संरक्षणार्थममृतेन शुभेन तेषां, प्रक्षालयामि पुरतः स्नपनस्य भूमिम् ॥४॥

(इस श्लोक को पढकर अभिषेक के लिए भूमि या चौकी का प्रक्षालन करना चाहिये)

क्षीरार्णवस्य पयसा शुचिभिः प्रवाहैः, प्रक्षालितं सुरवरैर्यदनेक-

वारम् । अत्युद्धमुद्यतमहं जिनपादपीठ, प्रक्षालयामि भव-संभव-तापहारि ।।५।।

(जिस सिंहासन पर श्रीजी को विराजमान करे उस सिंहासन का प्रक्षालन करे ।)

श्रीशारदा-सुमुख-निर्गत-बीजवर्णं, श्रीमंगलीक-वर-सर्व-जनस्य नित्य । श्रीमत्स्वयं क्षयति तस्य विनाशविघ्न, श्रीकार-वर्ण-लिखितं जिन-भद्रपीठे ।।६।।

(इस श्लोक को पढकर सिंहासन पर श्रीकार लिखना चाहिये ।)

इ द्राग्नि-दडधर-नैॠत-पाशपाणि-वायूत्तरेश-शशि-मौलि-फणीद्र-चद्राः । आगत्य यूयमिह सानुचरा. सचिह्नाः, स्वं स्वं प्रतीच्छत बलि जिनपाभिषेके ।।७।।

(नीचे लिखे मत्रों को पढकर क्रमसे दशदिक्पालोके लिये अर्घ्य चढावे ।)

१ ॐ आ क्रौ ह्री इ द्र आगच्छ आगच्छ इंद्राय स्वाहा ।
२ ॐ आ क्रौ ह्री अग्ने आगच्छ आगच्छ अग्नये स्वाहा ।
३ ॐ आ क्रौ ह्री यम आगच्छ आगच्छ यमाय स्वाहा ।
४ ॐ आ क्रौ ह्री नैॠत आगच्छ आगच्छ नैॠताय स्वाहा ।
५ ॐ आ क्रौ ह्री वरुण आगच्छ आगच्छ वरुणाय स्वाहा ।
६ ॐ आ क्रौ ह्री पवन आगच्छ आगच्छ पवनाय स्वाहा ।
७ ॐ आ क्रौ ह्री कुबेर आगच्छ आगच्छ कुबेराय स्वाहा ।
८ ॐ आ क्रौ ह्री ऐशान आगच्छ आगच्छ ऐशानाय स्वाहा ।
९ ॐ आ क्रौ ह्री धरणीन्द्र आगच्छ आगच्छ धरणीद्राय स्वाहा ।
१० ॐ आ क्रौ ह्री सोम आगच्छ आगच्छ सोमाय स्वाहा ।

इति दिक्पालमंत्राः

दध्युज्ज्वलाक्षत-मनोहर-पुष्प-दीपैः, पात्रार्पितं प्रतिदिनं महता-

दरेण। त्रैलोक्य-मंगल-सुखालय-कामदाह—मारार्तिकं तव विभोर-वतारयामि॥८॥

(दधि अक्षत पुष्प और दीप रकाबी मे लेकर मंगल पाठ तथा अनेक वादित्रों के साथ त्रैलोक्यनाथ को आरती उतारनी चाहिए।)

यं पांडुकामल-शिलागतमादिदेव-मस्नापयन्सुरवराः सुरशैल-मूर्ध्नि। कल्याणमीप्सुरहमक्षत-तोयपुष्पैः, संभावयामि पुर एव तदीय-बिम्बम्॥९॥

(जल अक्षत पुष्प क्षेपणकर श्रीकार लिखित पीठ पर जिन-बिंब की स्थापना करनी चाहिए।)

सत्पल्लवार्चित-मुखान्कलधौतरौप्य—ताम्रारकूट-घटितान्पयसा सुपूर्णान्। संवाह्यतामिव गतांश्चतुरः समुद्रान्, संस्थापयामि कलशान् जिनवेदिकांते॥१०॥

(जलपूरित सुन्दर पत्तों से ढके हुए सुवर्णादि धातु के चार कलश चौकी या वेदीके चारों कोनों मे स्थापन करना चाहिए।)

आभिः पुण्याभिरद्भिः परिमल-बहुलेनामुना चंदनेन,
श्रीदृक्पेयैरमीभिः शुचि-सदकचयैरुद्गमैरेभिरुद्धैः।
हृद्यैरेभिर्निवेद्यैर्मख—भवनमिमैर्दीपयद्भिः प्रदीपैः,
धूपैः प्रायोभिरेभिः पृथुभिरपि फलैरेभिरीशं यजामि॥११॥

ॐ ह्रीं परमदेवाय श्री अर्हत्परमेष्ठिनेऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
दूरावनम्र-सुरनाथ-किरीट-कोटी-संलग्न-रत्न-किरण-च्छविधूसरांघ्रि प्रस्वेद-ताप-मल-मुक्तमपि प्रकृष्टैर्भक्त्याजलैर्जिनपतिं बहुधाभिषिंचे।

ॐ ह्रीं श्रीमंतं भगवंतं कृपालसंतं वृषभादिमहावीरपर्यंत-चतुर्विंशतितीर्थङ्करपरमदेवं आद्यानां आद्ये जंबूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखंडे....नाम्निनगरे मासानामुत्तमे मासे....मासे....पक्षे शुभ-

दिने मुनि-आर्यिका-श्रावक-श्राविकाणां सकलकर्मक्षयार्थं जलेनाभिषिंचे नमः ॥१३॥

(इसे पढकर श्रीजिनप्रतिमा पर जलके कलश से धारा छोडनी चाहिए। यहां प्रत्येक धारा के बाद 'उदकचंदन' आदि श्लोक बोल कर अर्घ चढाना चाहिए।)

उत्कृष्ट-वर्ण-नव-हेम-रसाभिराम-देह-प्रभा-वलय-संगम-लुप्त-दीप्ति। धारां घृतस्य शुभ-गंध-गुणानुमेयां, वंदेऽर्हतां सुरभि-संस्नपनोपयुक्तां ॥१४॥

(ऊपर लिखा पूरा मन्त्र पढकर मन्त्र में 'जलेनाभिषिंचे' की जगह 'घृतेनाभिषिंचे' पढकर घृतके कलशसे स्नपन करना चाहिए।)

संपूर्ण-शारद-शशांक-मरीचि-जाल,-स्यंदैरिवात्मयशसामिव सुप्रवाहै.। क्षीरैर्जिनाःशुचितरैरभिषिच्यमानाः, संपादयंतु मम चित्तसमीहितानि ॥१५॥

(ऊपर के मन्त्र में 'जलेनाभिषिंचे' की जगह 'क्षीरेणाभिषिंचे' पढकर दुग्ध के कलश से अभिषेक करना चाहिए।)

दुग्धाब्धि-वीचि-पयसाचित-फेनराशि-पांडुत्वकांतिमवधीरयतामतीव। दध्ना गता जिनपतेः प्रतिमां सुधारा, संपद्यतां सपदि वांछित-सिद्धये न.॥१६॥

(ऊपर लिखे मन्त्र मे 'जलेन' की जगह 'दध्ना' पढकर दधि के कलश से अभिषेक करना चाहिए।)

भक्त्या ललाट-तटदेश-निवेशितोच्चै-र्हस्तैश्च्युताः सुरवराऽसुर-मर्त्यनाथैः। तत्काल-पीलित-महेक्षु-रसस्य धारा, सद्यः पुनातु जिन-बिंब-गतैव युष्मान् ॥१७॥

(ऊपर के मन्त्र में 'जलेन' की जगह 'इक्षुरसेन' पढकर इक्षुरस के कलश से अभिषेक करना चाहिए।)

संस्नापितस्य घृत-दुग्ध-दधीक्षुवाहैः, सर्वाभिरौषधिभिरर्हत

उज्ज्वलाभिः । उद्वर्तितस्य विदधाम्यभिषेकमेला कालेय-कुंकुम-रसोत्कटवारि-पूरैः ॥१८॥

(ऊपर के मन्त्र में 'जलेन' की जगह 'सर्वौषधिभिः' पढकर सर्वौषधि के कलश से अभिषेक करना चाहिए ।)

द्रव्यैरनल्प-घनसार-चतुःसमाद्यै-रामोद-वासित-समस्तदिगंतरालैः । मिश्रीकृतेन पयसा जिनपुंगवानां, त्रैलोक्यपावनमहं स्नपनं करोमि ॥१९॥

(यहां 'जलेन' की जगह सुगन्धजलेन' पढकर केशर कर्पूरादि सुगन्धित पदार्थो से बनाये जलमे स्नपन करना चाहिए ।)

इष्टैर्मनोरथ-शतैरिव भव्यपुंसां, पूर्णैः सुवर्ण-कलशै-र्निखिलैर्वसानैः । संसार-सागर-विलंघन-हेतु-सेतुमाप्लावये त्रिभुवनैकपति जिनेंद्रम् ॥२०॥

(ऊपर लिखे मन्त्रसे बचे हुए समस्त कलशोंसे अभिषेक करे)

मुक्ति-श्री-वनिता-करोदकमिद पुण्यांकुरोत्पादकं ।
नागेंद्र-त्रिदशेंद्र-चक्र-पदवी-राज्याभिषेकोदकं ॥
सम्यग्ज्ञान-चरित्र-दर्शनलता-संवृद्धि-संपादकं ।
कीर्ति-श्री-जय-साधकं तव जिन स्नानस्य गधोदकं ॥२१

(इस श्लोकको पढकर गन्धोदक अपने अंगमे लगाना चाहिए ।)

❀ इति श्रीलघु अभिषेकविधि समाप्त ❀

अथ लघुपंचामृताभिषेक भाषा

घृत दुग्ध आदि मे पंचामृत अभिषेक करना हो तो यह पाठ बोलना अथवा पंचामृत के अभाव मे सिर्फ जलधारा से काम लेना ।

श्रीजिनवर चौबीस वर, कुनयध्वातहर भान ।
अमितवीर्यदृगबोधसुख,-युत तिष्ठौ इहि थान ॥

नाराच छन्द

गिरीश शीश पांडुपै, सचीश ईश थापियो ।

महोत्सवो अनंदकंदको, सबै तहाँ कियो ॥
हमैं सो शक्ति नाहिं, व्यक्त देखि हेतु आपना।
यहां करै जिनेन्द्रचंद्रकी सुबिंब थापना ॥२॥

(पुष्पांजलि क्षेपरग करके श्रीवर्ण पर जिनबिम्ब की स्थापना करना)

सुन्दरी छन्द

कनकमरिगमय कुंभ सुहावने, हरि सुक्षीर भरे अति पावने।
हम सुवासित नीर यहां भरैं, जगतपावन-पांय तरैं धरै ॥३॥

(पुष्पांजलि क्षेपरग करके वेदी के कोनों मे चार कलशों की स्थापना करना)

हरिगीतिका छन्द

शुद्धोपयोग समान भ्रमहर, परम सौरभ पावनो।
आकृष्टभृंगसमूह गंग समुद्भवो अति भावनो ॥
मरिगकनककुम्भ निसुम्भ किल्विष, विमल शीतल भरिधरौं।
श्रम स्वेद मल निरवार जिन त्रय धार दे पांयनि परौं ॥४॥

(मन्त्र से शुद्ध जल की तीन धारा जिनबिम्ब पर छोडना)

अति मधुर जिनधुनि सम सुप्रीरिगत प्रारिगवर्ग सुभावसों।
बुधचित्तसम हरिचित्त नित्त, सुमिष्ट इष्ट उछावसों ॥
तत्काल इक्षुसमुत्थ प्रासुक रतनकुंभविषैं भरौ।
यम त्रास-ताप निवार जिन त्रय धार दे पांयनि परौं ॥६॥

(ऊपर का मन्त्र पढकर इक्षुरस की धारा देना)

निष्तप्तक्षिप्तसुवर्णमददमनीय ज्यौं विधि जैनकी।
आयुप्रदा बलबुद्धिदा रक्षा, सु यों जिय-सैनकी ॥
तत्काल मंथित, क्षीर उत्थित, प्राज्य मरिगझारी भरौ।
दीजै अतुलबल मोहि जिन, त्रय धार दे पांयनि परौं ॥६॥

(घृतरस की धारा देना)

शरदभ्र शुभ्र सुहाटकद्युति, सुरभि पावन सोहनो।
क्लीवत्वहर बल धरन पूरन, पय सकल मनमोहनो ।।
कृतउष्ण गोथनतैं समाहृत मणिजटितघट मैं भरौ।
दुर्बल दशा मो मेट जिन त्रयधार दे पांयनि परौं ।।७।।

(दुग्ध की धारा देना)

वर विशदजैनाचार्य ज्यौ लघुराम्ल कर्कशता धरैं।
शुचिकर रसिक मंथन विमंथित नेह दोनो अनुसरै ।।
गोदधि सुमणिभृङ्गार पूरन लायकर आगैं धरौं।
दुखदोप कोष निवार जिन त्रयधार दे पांयनि परौ ।।८।।

(दही की धारा)

सर्वौंषधी मिलायके, भरि कचन—भृङ्गार।
जजौं चरण त्रयधार दे, तारतार भवपार ।।

(सर्वौंषधि की धारा देना)

दूसरा अध्याय

नित्य नियम पूजा

नोट पूजा करने वालों के लिए:— मन्दिर आने से पहले सामग्री साथ लावे (जल, चन्दन, चांवल, पुष्प, नैवेद्य, दीप, धूप फल)। स्नान कर शुद्ध धुले वस्त्र पहिनना चाहिए। सामग्री के आठ द्रव्यों में से चांवल साफ किये हुए होने चाहिए, जल, चन्दन—छने हुए पवित्र जलके दो कलशों मे भरकर एकमें केशर घिसी हुई मिला देना चाहिए। शेष सामग्रीको पवित्र छने जलसे धोकर एक थाल मे क्रमशः रखना चाहिए। केशर घिसते समय करीब आधे चांवल और आधी खोपरे की गिरी को केशर मे रंग लेना चाहिए। रंगे चांवल पुष्प एवं रंगी गिरी दीपक के स्थान पर चढाना चाहिए।

अर्घ ऊपर लिखे आठों द्रव्योंके मिलाने पर बनता है। इसके पश्चात् पूजा के पात्र (बरतन) दो थाल, चम्मच, रकेबी, ठोणा, कलश लेकर मन्दिर मे जाना चाहिए। विधिपूर्वक दर्शन अभिषेक करे। पश्चात् भगवान के सामने खड़े होकर ६ बार णमोकार मंत्र पढकर पूजन प्रारम्भ करना चाहिए। नित्य पूजामे देव शास्त्र गुरु, वीस तीर्थङ्कर पूजन कर, अकृत्रिम चैत्यालयोका अर्घ चढाकर सिद्धपूजा, समुच्चय चौबीस और वेदीमे विराजमान भगवान की पूजा करे। अनन्तर दशलक्षण, सोलहकारण आदिके अर्घ चढाकर अन्त मे महावीर पूजन करे। शान्ति पाठ पढते हुए पुष्प क्षेपण करना चाहिए। पश्चात् पूजन के महत्त्व को बतलाने वाला कोई भजन पढकर पूजनका विसर्जन करना चाहिए। विसर्जन मे ६ पुष्प लेकर दोनो हाथोंसे ठोना मे छोड़ना चाहिए। इसी प्रकार स्थापना करते समय भी तीन तीन पुष्प तीन बार मे ठोनेमे चढाना चाहिए। पुष्प (रंगीन चांवल) साबुत हो। पूजन करते समय ध्यान उसीमे लगा हो, पाठ मधुर ध्वनिमे पढा जाय। यदि समय कम हो तो पूजन मे देव गुरु शास्त्रकी पूजनकर बीस तीर्थङ्करोंका भी अर्घ चढा, सिद्ध पूजा व समुच्चय चौबीसीका भी अर्घ चढाकर महावीर पूजाके साथ समाप्त किया जा सकता है। इस प्रकार पूजाएं संख्या में भले ही कम हो पर भावपूर्वक होना चाहिए। यह ध्यान रहे कि आपके कारण दूसरो की पूजा मे व्याघात न हो।

पूजन प्रारम्भ करने के समय नौ बार णमोकार मन्त्र पढकर नीचे लिखा नियम पाठ बोलकर पूजा प्रारम्भ करना चाहिए।

(केवल णमोकार मन्त्र पढकर भी पूजा कर सकते हैं)

❀ विनय पाठ दोहावली ❀

इह विधि ठाडो होयके, प्रथम पढै जो पाठ।
धन्य जिनेश्वर देव तुम, नाशे कर्मजु आठ ॥ १ ॥

अनंत चतुष्टय के धनी, तुमही हो सिरताज ।
मुक्तिवधू के कंत तुम, तीन भुवन के राज ॥ २ ॥
तिहुं जगकी पीड़ाहरन, भवदधि शोषणहार ।
ज्ञायक हो तुम विश्वकें, शिवसुख के करतार ॥ ४ ॥
हरता अघअंधियार के, करता धर्म-प्रकाश ।
थिरतापद दातारहो, धरता निजगुण राश ॥ ४ ॥
धर्मामृत उर जलधिसों, ज्ञानभानु तुम रूप ।
तुमरे चरण सरोजको, नावत तिहुं जग भूप ॥ ५
मै बंदौं जिनदेवको, कर अति निर्मल भाव ।
कर्मबंध के छेदने, और न कछू उपाव ॥ ६
भविजन को भवकूपतैं, तुमही काढनहार ।
दीनदयाल अनाथपति, आतमगुण-भंडार ॥ ७ ॥
चिदानन्द निर्मल कियो, धोय कर्मरज मैल ,
सरल करी या जगतमे, भविजनको शिवगैल ॥८॥

तुम पदपंकज पूजतैं, विघ्न रोग टर जाय ।
शत्रु मित्रता को धरैं, विष निरविषता थाय ॥ ९ ॥
चक्री खगधर इन्द्रपद, मिलैं आपते आप ।
अनुक्रम करि शिवपद लहैं, नेम सकल हनि पाप ॥१०॥
तुम बिन मै व्याकुल भयो, जैसे जलबिन मीन ।
जन्मजरा मेरी हरो, करो मोहि स्वाधीन ॥ ११ ॥
पतित बहुत पावन किये, गिनती कौन करेव ।
अंजन से तारे प्रभु, जय जय जय जिनदेव ॥ १२ ॥
थकी नाव भवदधिविषै, तुम प्रभु पार करेय ।
खेवटिया तुम हो प्रभु, जय जय जय जिनदेव ॥१३॥
रागसहित जगमें रुल्यो, मिले सरागी देव ।
वीतराग भेट्यों अबै, मेटो राग-कुटेव ॥ १४ ॥

कित निगोद कित नारकी, कित तिर्यंच अज्ञान।
आज धन्य मानुष भयो, पायो जिनवर थान ॥१५॥
तुमको पूजैं सुरपति, अहिपति नरपति देव,
धन्य भाग्य मेरो भयो, करन लग्यो तुम सेव ॥१६॥
अशरण के तुम शरण हो, निराधार आधार।
मै डूबत भवसिंधु मे, खेय लगाओ पार ॥ १७ ॥
इन्द्रादिक गणपति थके, कर विनती भगवान।
अपनो विरद निहारकैं, कीजे आप समान ॥ १८ ॥
तुमरी नेक सुदृष्टितै, जग उतरत है पार।
हा! हा! डूब्यो जात हो, नेक निहार निकार ॥१९॥
जो मैं कहहूँ औरसो, तो न मिटै उरझार।
मेरी तो तोसो बनी, तातैं करौं पुकार ॥२०॥
बंदो पाँचौ परमगुरु, सुर गुरु बंदत जास।
विघनहरन मंगलकरन, पूरन परम प्रकाश ॥२१॥
चौबीसो जिनपद नमों, नमों शारदा माय।
शिवमग साधक साधु नमि, रच्यो पाठ सुखदाय ॥२२॥

पूजाप्रारंभः

ओं जय जय जय। नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु।

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥ १ ॥

ओ ह्री अनादिमूलमंत्रेभ्यो नमः (पुष्पांजलि क्षेपण करना) चत्तारि मंगल—अरिहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगल, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा–अरिहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा साहू लोगुत्तमा केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो। चत्तारि सरणं पव्वज्जामि-अरिहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे

सरणं पव्वज्जामि, साहूसरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ।। ओ नमोऽर्हते स्वाहा ।

(यहां पुष्पाजलि क्षेपरण करना)

अपवित्रः पवित्रो वा सुस्थितो दुःस्थितोऽपि वा ।
ध्यायेत्पंचनमस्कारं सर्वपापैः प्रमुच्यते ।। १ ।।
अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा ।
यः स्मरेत्परमात्मानं स बाह्याभ्यंतरे शुचि. ।।२।।
अपराजितमन्त्रोऽयं सर्वविघ्नविनाशनः ।
मंगलेषु च सर्वेषु प्रथमं मंगलं मतः ।।३।।
एसो पंचणमोयारो सव्वपावप्पणासणो ।
मंगलाण च सव्वेसि पढमं होइ मंगल ।।४।।
अर्हमित्यक्षरं ब्रह्मवाचकं परमेष्ठिन. ।
सिद्धचक्रस्य सद्बीज सर्वतः प्रणमाम्यहं ।।५।।
कर्माष्टकविनिर्मुक्तं मोक्षलक्ष्मीनिकेतनं ।
सम्यक्त्वादिगुणोपेतं सिद्धचक्रं नमाम्यहं ।।६।।
विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति शाकिनी-भूतपन्नगा. ।
विषं निर्विषता याति स्तूयमाने जिनेश्वरे ।।७।।

पंचकल्याणक का अर्घ

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवल-मगलगानरवाकुले जिनगृहे कल्याणमहं यजे ।।१।।

ओ ह्रीं श्री भगवान के गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाण पचकल्याणकेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।१।।

पंचपरमेष्ठी का अर्घ

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिनइष्टमहं यजे ।।२।।

ओं ह्रीं श्री अरिहंतसिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्योऽर्घ्यं० ॥

यदि अवकाश हो तो यहां पर सहस्रनाम पढकर दश अर्घ देना चाहिये । नही तो नीचे लिखा श्लोक पढकर एक अर्घ चढाना चाहिये ।

उदकचदनतंदुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमगलगानरवाकुले जिनगृहे जिननाथमह यजे ॥३॥

ओ ह्री श्री भगवज्जिनसहस्रनामेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

स्वस्ति मंगल

श्री मज्जिनेद्रमभिवद्यजगत्त्रयेश, स्याद्वादनायकमनंतचतुष्टयार्हम् । श्री मूलसंघसुदृगां, सुकृतैकहेतुर्जैनेद्रयज्ञविधिरेप मयाऽभ्यधायि ॥१॥ स्वति त्रिलोकगुरुवे जिनपु गवाय, स्वस्ति स्वभावमहिमोदयसुस्थिताय । स्वस्ति प्रकाशसहजोर्ज्जितदङ्मयाय, स्वस्ति प्रसन्नललिताद्भुतवैभवाय ॥ २ ॥ स्वस्त्युच्छलद्विमलवोधसुधाप्लवाय, स्वस्ति स्वभावपरभावविभासकाय, स्वस्ति त्रिलोकविततैकचिदुद्गमाय, स्वस्ति त्रिकालसकलायतविस्तृताय ॥ ३ ॥ द्रव्यस्य शुद्धिमधिगम्य यथानुरूपं, भावस्य शुद्धिमधिकामधिगंतुकामः । आलंबनानि विविधान्यवलव्यवल्गन्,भूतार्थयज्ञपुरुषस्य करोमि यज्ञं ॥ ४ ॥ अर्हत्पुराणपुरुषोत्तमपावनानि, वस्तून्यनूनमखिलान्ययमेकएव । अस्मिन् ज्वलद्विमलकेवल-वोध वह्नौ, पुण्यं समग्रमहमेकमना जुहोमि ॥ ५ ॥

ओ विधियज्ञप्रतिज्ञानाय जिन प्रतिमाग्रे परि पुष्पांजलि क्षिपेत् ।

श्री वृषभो नः स्वस्ति स्वस्ति श्री अजित. ।
श्रीसंभवः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अभिनन्दन. ।
श्रीसुमतिः स्वस्ति, स्वस्ति श्री पद्मप्रभः ।
श्रीसुपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्री चन्द्रप्रभः ।
श्री पुष्पदतः स्वस्ति, स्वस्ति श्री शीतलः ।
श्रीश्रेयांसः स्वस्ति, स्वस्ति श्री वासुपूज्य. ।

श्रीविमलः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अनन्तः।
श्रीधर्मः स्वस्ति स्वस्ति श्री शांति-नाथः।
श्रीकुंथुः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अरनाथः।
श्रीमल्लिः स्वस्ति, स्वस्ति श्री मुनिसुव्रतः।
श्रीनमिः स्वस्ति, स्वस्ति श्री नेमिनाथः।
श्रीपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवर्द्धमानः।

(पुष्पांजलि क्षेपण)

इति जिनेन्द्र स्वस्ति मङ्गल विधानं।

नित्याप्रकंपाद्भुतकेवलौघाः स्फुरन्मनःपर्ययशुद्धबोधाः।
दिव्यावधिज्ञानबलप्रबोधाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।।१।।

यहा से प्रत्येक श्लोक के अन्त मे पुष्पांजलि क्षेपन करना चाहिये।

कोष्ठस्थधान्योपम्मेकबीजं संभिन्नसंश्रोतृपदानुसारि।
चतुर्विधं बुद्धिवलं दधानाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।।२।।
संस्पर्शनं संश्रवणं च दूराद्दास्वादनघ्राणविलोकनानि।
दिव्यान् मतिज्ञानबलाद्वहंतः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।।३।।
प्रज्ञाप्रधानाः श्रमणाः समृद्धाः प्रत्येकबुद्धा दशसर्वपूर्वैः।
प्रवादिनोऽष्टांगनिमित्तविज्ञाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।।४।।
जङ्घावलिश्रेणिफलांबुतंतुप्रसूनवीजाकुरचारणाह्वाः।
नभोऽङ्गणस्वैरविहारिणश्च स्वस्ति क्रियासुःपरमर्षयो नः ।।५।।
अणिम्नि दक्षाः कुशला महिम्नि लघिम्नि शक्ताः कृतिनो गरिम्णि।
मनोवपुर्वाग्वलिनश्च नित्यं, स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।।६।।
सकामरूपित्ववशित्वमैश्यं प्राकाम्यमंतर्द्धिमथाप्तिमाप्ताः।
तथाऽप्रतीघातगुणप्रधानाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।। ७ ।।
दीप्तं च तप्तं च तथा महोग्रं घोरं तपो घोरपराक्रमस्थाः।
ब्रह्मापरं घोरगुणं चरंतः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।। ८ ।।
आमर्षसर्वौषधयस्तथाशीर्विषंविषा दृष्टिविषविषाश्च।

सखिल्लविड्जल्लमलौषधीशाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।। ९ ।।
क्षीरं स्रवंतोऽत्र घृतंस्रवंतो मधुस्रवंतोऽप्यमृतं स्रवंतः ।
अक्षीणसवासमहानसाश्च स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः ।। १० ।।
(पुष्पाजलि)

देव शास्त्र गुरु की भाषा पूजा

अडिल्ल छंद

प्रथमदेव अरिहंत सुश्रुत सिद्धातजू ।
गुरुनिरग्रंथ महंत मुकतिपुरपथजू ।।
तीन रतन जगमाहि सो ये भवि ध्याइये ।
तिनकी भक्ति प्रसाद परम पद पाइये ।।१।।

दोहा—पूजो पद अरहंत के, पूजो गुरुपदसार ।
पूजो देवी सरस्वती, नितप्रति अष्ट प्रकार ।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र अवतर अवतर, संवौषट् ।
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

गीता छंद

सुरपति उरग नरनाथ तिनकरि, बंदनीक सुपदप्रभा ।
अति शोभनीक सुवर्ण उज्ज्वल, देखि छवि मोहित सभा ।।
वर नीर क्षीरसमुद्र घट भरि अग्र तसु बहुविधि नचूँ ।
अरहत श्रुत-सिद्धात गुरु-निरग्रन्थ नित पूजा रचूँ ।।

दोहा—मलिन वस्तु हरलेत सब, जल-स्वभाव मलछीन ।
जासो पूजो परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ।।

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल निर्व० ।।१।।

जे त्रिजग-उदर मझार प्राणी, तपत अति दुद्धर खरे ।
तिन अहितहरन सुवचन जिनके, परम शीतलता भरे ।।
तसु भ्रमर लोभित घ्राण पावन सरस चंदन घसि सचूं ।अर०।

दोहा—चंदन शीतलता करै, तपत वस्तु परवीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ २ ॥
ॐ ह्री देवशास्त्रगुरुभ्यः संसारतापविनाशनाय चदनं निर्व० ॥२॥
यह भवसमुद्र अपार तारण–के निमित्त सु विधि ठई।
अति दृढ परमपावन जथारथ भक्तिवर नौका सही ॥
उज्ज्वल अखंडित सालि तदुल पुञ्जधरि त्रयगुण जचूँ ॥अर०॥
दोहा—तंदुल सालि सुगन्ध अति, परम अखंडित बीन।
जासों पूजों परमपद, देवशास्त्र गुरु तीन ॥ ३ ॥
ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व० ॥३॥
जे विनयवंत सुभव्य उर अंबुज प्रकाशन भान है।
जे एक मुख चारित्र भाषत त्रिजगमाहि प्रधान है ॥
लहिकुन्द कमलादिक पहुप, भव २ कुवेदनसों बचूँ ॥अर०॥
दोहा—विविध भाँति परिमलसुमन, भ्रमर जासु आधीन।
जासौ पूजौ परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥
ॐ ह्री देवशास्त्रगुरुभ्यः कामबाणविध्वसनाय पुष्पं निर्व० ॥४॥
अति सबल मदकन्दर्प जाको क्षुधा उरग अमान है।
दुस्सह भयानक तासु नाशनको, सुगरुड समान है।
उत्तम छहो रसयुक्त नित, नैवेद्यकरि घृत मे पचूँ ॥अर०॥
दोहा—नानाविध संयुक्तरस, व्यञ्जनसरस नवीन।
जासों पूजों परमपद, देवशास्त्र गुरु तीन ॥
ॐ ह्री देवशास्त्रगुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्व० ॥५॥
जे त्रिजग-उद्यम नाश, कीने, मोह-तिमिर महाबली।
तिहि कर्मघाती ज्ञानदीप–प्रकाशज्योति प्रभावली ॥
इह भाति दीप प्रजाल कंचनके सुभाजनमें खचूँ ॥अर०॥
दोहा—स्वपरप्रकाशक ज्योति अति, दीपक तमकरि हीन।
जासों पूजों परमपद, देवशास्त्र गुरु तीन ॥

ॐ ह्री देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्व० ॥६॥

जो कर्म-ईंधन दहन अग्निसमूह सम उद्धत लसै।
वर धूप तासु सुगन्धिताकरि, सकल परिमलता हँसै।
इहि भांति धूप चढाय नित, भवज्वलनमांहि नही पचूं ।अर०।

दोहा—अग्नि मांहि परिमलदहन, चंदनादि गुणलीन।
जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन॥

ॐ ह्री देव शास्त्रगुरुभ्यो अष्टकर्मविध्वंशनाय धूपं निर्व० ॥७॥

लोचन सु रसना घ्रान उर, उत्साह के करतार है।
मोपे न उपमा जाय वरणी, सकल फल गुणसार हैं।
सो फल चढावत अर्थपूरन, परम अमृतरस सचूं ॥अर०॥

दोहा—जे प्रधान फल फलविषैं, पञ्चकरण-रस-लीन।
जासो पूजो परमपद, देवशास्त्र गुरु तीन॥

ॐ ह्री देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फल निर्वपामीति० ॥८॥

जल परम उज्ज्वल गंध अक्षत, पुष्प चरु दीपक धरूं।
वर धूप निर्मल फल विविध, बहुजन्म के पातक हरूं।
इहभांति अर्घ चढाय नित भवि, करत शिव-पंकति मचूं ।अर०।

दोहा—वसुविधि अर्घ संजोयके, अति उछाह मन कीन।
जासो पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन॥

ॐ ह्री देवशास्त्रगुरुभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९॥

अथ जयमाला

देव-शास्त्र-गुरु रतन शुभ, तीन रतन करतार।
भिन्न भिन्न कहुं आरती, अल्प सुगुण विस्तार।

पद्धरि छन्द

कर्मन की त्रेसठ प्रकृति नाशि, जीते अष्टादश दोषराशि।
जे परम सुगुण है अनंत धीर, कहवत के छचालिस गुण गंभीर॥२॥

शुभ समवसरन शोभा अपार, शत इन्द्र नमत कर सीसधार।
देवाधिदेव अरहंत देव, बंदों मनवचतनकरि सु सेव ॥ ३ ॥
जिनकी धुनि ह्वै ओंकार रूप, निर अक्षरमय महिमा अनूप।
दश-अष्ट महाभाषा समेत, लघुभाषा सात शतक सुचेत ॥ ४ ॥
सो स्याद्वादमय सप्त भंग, गणधर गूंथे बारह सु अङ्ग।
रवि शशि न हरै सो तम हराय, सो शास्त्र नमों बहुप्रीति ल्याय ॥५॥
गुरु आचारज उवझाय साध, तन नगन रतन-त्रयनिधि अगाध।
संसार-देह वैराग्य धार, निरवांछि तपै शिवपद निहार ॥ ६ ॥
गुण छत्तिस पच्चिस आठबीस, भवतारन तरन जिहाज ईस।
गुरुकी महिमा बरनी न जाय, गुरुनाम जपौ मनवचनकाय ॥ ७ ॥
सोरठा—कीजे शक्ति प्रमान, शक्ति बिना सरधा धरै।
'द्यानत' सरधावान, अजर अमरपद भोगवे ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सूचना—आगे जिस भाई को निराकुलता हो, वह नीचे लिखे अनुसार बीस तीर्थङ्करों की भाषा पूजा करे। यदि स्थिरता न हो तो इस पूजाके आगे जो अर्घ लिखा है उसको पढ़कर अर्घ चढ़ा देवे।

श्री बीस तीर्थङ्करों की पूजा (भाषा)

नोट—अढाई द्वीप सम्बन्धी ५ विदेह क्षेत्रों में सदा काल सीमन्धरादि २० तीर्थङ्कर विराजमान रहते है। यहां से मोक्ष-मार्ग सदा खुला हुआ है। ५०० धनुष प्रमाण शरीर और एक करोड पूर्व की आयु होती है। इसीलिए यह पूजा नित्य की जा सकती है।

दीप अढाई मेरु पन, सब तीर्थङ्कर बीस।
तिन सबकी पूजा करूं, मनवचतन धरि शीश ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्कराः ! अत्र अवतरत २ संवौषट्।
ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्कराः ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत। ठः ठः।
ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्कराः ! अत्र मम सन्निहिता भवत २ वषट्

इन्द्र-फणीन्द्र-नरेंद्र-वद्य, पद निर्मल धारी।
शोभनीक ससार, सारगुण है अविकारी॥
क्षीरोदधि सम नीरसों (हो), पूजों तृषा निवार।
सीमधर जिन आदि दे, बीस विदेह मँझार॥
श्री जिनराज हो भव, तारणतरण जहाज॥ १॥

ॐ ह्री विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यो जन्ममृत्यु विनाशनाय जलं०।

(इस पूजामे बीस पुञ्ज करना हो, तो इस प्रकार मन्त्र बोलना)

ॐ ह्री सीमंधर–युगमंधर–बाहु–सुबाहु–संजातक–स्वयंप्रभ–ऋषभानन–अनन्तवीर्य–सूरीप्रभ–विशालकीर्ति–वज्रधर–चन्द्रानन–भद्रबाहु–भुजङ्गम–ईश्वर–नेमिप्रभ–वीरसेन–महाभद्र–देवयशोऽजित-वीर्येति विंशतिविद्यमानतीर्थङ्करेभ्यो जन्ममृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥ १॥

तीन लोक के जीव, पाप आताप सताये।
तिनको साता दाता, शीतल वचन सुहाये॥
बावन चदनसो जजू (हो) भ्रमन-तपन निरवार॥सीमधर॥२॥

ॐ ह्री विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यो भवातापविनाशनाय चंदन नि०

(इसके स्थान मे यदि इच्छा हो, तो बड़ा मन्त्र पढे)

यह संसार अपार महासागर जिनस्वामी।
तातैं तारे बडी, भक्ति–नौका जगनामी॥
तदुल अमल सुगंधसो (हो) पूजो तुम गुणसार॥सीमधर०॥३॥

ॐ ह्री विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि०।

भविक-सरोज-विकास निद्य-तम हर रविसे हो।
जति-श्रावक आचार, कथनको तुमही बड़े हो॥
फूलसुवास अनेकसो (हो) पूजो मदन प्रहार॥सीमंधर०॥४॥

ॐह्री विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्य कामबाण विनाशनाय पुष्पं नि०

काम नाग विषधाम, नाशको गरुड कहे हो।
क्षुधा महादवज्वाल, तासुको मेघ लहे हो॥
नेवज बहुघृत मिष्टसों (हो), पूजो भूखविडार ॥सीमंधर०॥५॥
ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं०।
उद्यम होन न देत, सर्व जगमाहि भर्‍यो है—
मोह महातम घोर, नाश परकाश कर्‍यो है॥
पूजों दीप प्रकाशसो (हो) ज्ञानज्योति करतार॥सीमंधर०॥६॥
ॐ ह्री विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यो मोहाधकार विनाशनाय दीपं०।
कर्म आठ सब काठ,-भार विस्तार निहारा।
ध्यान अगनि कर प्रकट, सरब कीनो निरवारा॥
धूप अनूप खेवतै (हो), दुःखजलैं निरधार॥सीमंधर०॥७॥
ॐ ह्री विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं नि०।
मिथ्यावादी दुष्ट, लोभऽहंकार भरे है।
सबको छिनमे जीत, जैनके मेरु खरे है॥
फल अति उत्तमसों जजो (हो) वाछितफलदातार॥सीमंधर०॥८॥
ॐ ह्री विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व०।
जल फल आठों दर्व, अरघकर प्रीति धरी है।
गणधर इंद्रनहूतै, थुति पूरी न करी है॥
'द्यानत' सेवक जानके (हो) जगतै लेहु निकार॥सीमंधर०॥९॥
ॐ ह्री विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि०।

अथ जयमाला आरती

सोरठा—ज्ञान-सुधाकर चंद, भविक-खेतहित मेघ हो।
भ्रम-तम-भान अमंद, तीर्थङ्कर बीसों नमों॥

चौपाई १६ मात्रा

सीमंधर सीमंधर स्वामी, जुगमंधर जुगमंधर नामी।
बाहु बाहु जिन जगजन तारे, करम सुबाहु बाहुबल तारे॥१॥

जात सुजातं केवल-ज्ञानं, स्वयं प्रभू प्रभु स्वयं प्रधानं ।
ऋषभानन ऋषि भानन दोषं अनंतवीरज वीरजकोषं ।।२।।
सौरीप्रभ सौरीगुण मालं, सुगुण विशाल विशाल दयालं ।
वज्रधार भव-गिरिवज्जर है, चंद्रानन चंद्रानन वर है ।।३।।
भद्रबाहु भद्रनिके करता, श्रीभुजंग भुजंगम हरता ।
ईश्वर सबके ईश्वर छाजे, नेमिप्रभु जस नेमि विराजैं ।। ४ ।।
वीरसेन वीरं जग जानै, महाभद्र महाभद्र बखाने ।
नमो जसोधर जसधरकारी, नमो अजित वीरज बलधारी ।।५।।
धनुष पाचसौ काय विराजे, आव कोडिपूरव सब छाजे ।
समवसरण शोभित जिनराजा, भवजलतारन तरन जिहाजा ।६।
सम्यक रत्नत्रयनिधिदानी, लोकालोक प्रकाशक ज्ञानी ।
शतइंद्रनिकरि बंदित सोहै, सुरनर पशु सबके मन मोहै ।।७।।
दोहा—तुमको पूजै बंदना, करै धन्य नर सोय ।
'द्यानत' सरधा मन धरै, सो भी धरमी होय ।
ॐ ह्रीं विद्यमान-विंशतितीर्थङ्करेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(विद्यमान बीसतीर्थङ्करों का अर्घ)

उदकचदनतंदुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिनराजमहं यजे ।।१।।

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरयुग्मंधरबाहुसुबाहुसंजातकस्वयंप्रभऋषि-भाननअनंतवीर्यसूर्यप्रभविशालकीर्ति वज्रधरचंद्रानन भद्रबाहुभुजंग-म-ईश्वर-नेमिप्रभवीरसेनमहाभद्रदेवयश—अजितवीर्येति विंशति विद्य-मान तीर्थङ्करेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अकृत्रिम चैत्यालयों के अर्घ

जगतमें ऐसे मन्दिर भी है जो किसी मनुष्य द्वारा बनाये हुए नही है, अनादि काल से चले आरहे है। उनको 'अकृत्रिम

'चैत्यालय' कहते हैं। उन चैत्यालयों मे अर्हंत् भगवान की मनोहर प्रतिमाएँ विराजमान है, किसी तीर्थंकर विशेश की प्रतिमाएँ नही है।

कृत्याकृत्रिम-चारु-चैत्यनिलयान् नित्यं त्रिलोकीगतान्।
वंदे भावनव्यंतरान् द्युतिवरान् स्वर्गामरावासगान्॥
सद्‌गंधाक्षत-पुष्प-दाम-चरुकैः, सद्दीप-धूपैः फलैः।
द्रव्यैर्नीरमुखैर्यजामि सततं दुष्कर्मणां शांतये॥१॥

ॐ ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिम चैत्यालयसंबंधिजिनबिंबेभ्योऽर्घ्यं निर्वपा०।

वर्षेषु वर्षान्तर-पर्वतेषु नंदीश्वरे यानि च मंदरेषु।
यावंति चैत्यायतनानि लोके सर्वाणि वंदे जिनपुङ्गवानां॥२॥

अवनि-तल-गतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां,
वन-भवन-गतानां दिव्य-वैमानिकानां।
इह मनुज-कृतानां देवराजार्चितानां,
जिनवर निलयानां भावतोऽहं स्मरामि॥३॥

जंबू-धातकि-पुष्करार्द्ध-वसुधा-क्षेत्र-त्रये ये भवा—
श्चन्द्राम्भोज-शिखंडिकंठ-कनक-प्रावृड घनाभाजिनाः।
सम्यग्ज्ञान-चरित्र-लक्षणधरा दग्धाष्ट-कर्मेन्धनाः,
भूतानागत-वर्तमान-समये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः॥४॥

श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शाल्मलौ जंबुवृक्षे,
वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकर-रुचिके कुण्डले मानुषांके।
इष्वाकारेऽञ्जनाद्रौ दधिमुख-शिखरे व्यंतरे स्वर्गलोके,
ज्योतिर्लोकेऽभिवंदे भुवनमहितले यानि चैत्यालयानि॥५॥

द्वौ कुन्देन्दुतुषार-हार-धवलौ द्वाविन्द्रनील-प्रभौ।
द्वौ बन्धूकसमप्रभौ जिनवृषौ द्वौ च प्रियंगुप्रभौ॥
शेषाः षोडश जन्म-मृत्युरहिताः संतप्त-हेमप्रभा—
स्ते संज्ञानदिवाकराः सुरनुताः सिद्धिं प्रयच्छंतु नः॥६॥

ॐ ह्रीं त्रिलोकसंबंधि कृत्रिमाकृत्रिम–चैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति०

इच्छामि भंते ! चेइयभत्ति-काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ। अहलोय तिरियलोय उड्ढलोयम्मि किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि जिन चेयाणि ताणि सव्वाणि, तीसुवि लोयेसु भवणवासिय-वाणवितर जोयसिय-कप्पवासियत्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गंधेण दिव्वेण पुप्फेण दिव्वेण धुव्वेण दिव्वेण चुण्णेण दिव्वेण वासेण दिव्वेण ह्लाणेण णिच्चकालं अच्चेति पुज्जंति वंदंति णमस्संति। अहमिव इहसंतो तत्थसताइ णिच्चकाल अच्चेमि पुज्जेमि वदामि णमस्सामि। दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झ॥

(इत्याशीर्वादः। पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

अथ पौर्वाह्णिक-माध्याह्निक अपराह्णिक-देववंदनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजा वंदनास्तवसमेत श्री पंचमहागुरु-भक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम्—

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं।
तावकाय पावकम्मं दुच्चरियं बोस्सरामि॥

अथ सिद्धपूजा द्रव्याष्टक

उर्ध्वाधोरयुत सविंदु सपरं ब्रह्मस्वरावेष्टितं।
वर्गापूरित-दिग्गताबुज-दलं तत्संधि-तत्त्वान्वितं।
अंतः पत्र-तटेष्वनाहतयुतं ह्रींकार-संवेष्टितं।
देवं ध्यायति यः स मुक्ति-सुभगो वैरीभ-कंठीरवः॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः।

ॐ ह्री श्रीसिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

निरस्त-कर्म-सम्बंधं सूक्ष्मं नित्यं निरामयम् ।
वंदेऽहं परमात्मानममूर्त्तमनुपद्रवम् ॥ १ ॥

पुष्पाञ्जलि (यहां सिद्धयंत्रकी स्थापना करना)

जिन त्यागियों को बिना द्रव्य चढाये भावोंके द्रव्यों से ही पूजा करना हो, वे आगे भावाष्टक है, उसको बोलकर करे । अष्टद्रव्य से पूजा करने वालो को भाव पूजा का अष्टक कदापि नही बोलना चाहिए ।

द्रव्याष्टक

सिद्धौ निवासमनुगं परमात्मगम्यं, हान्यादि-भावरहितं भव-बीत-कायं । रेवापगा-वर-सरो-यमुनोद्भवानां, नीरैर्यजे कलशगैर्वर-सिद्धचक्रं ॥ १ ॥

ॐ ह्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्ममृत्युविनाशनाय जलं०

आनंद-कंद-जनकं घन-कर्ममुक्तं, सम्यक्त्व-शर्म-गरिमं जननार्ति-वीतं। सौरभ्य-वासित-भुवं हरि-चंदनानां, गंधैर्यजे परिमलैर्वर-सिद्धचक्रम् ॥ २ ॥

ॐ ह्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चंदनं ।

सर्वावगाहन-गुणं सुसमाधि-निष्ठ सिद्धं स्वरूप-निपुणं कमलं विशाल । सौगंध्य-शालि-वनशालि-वराक्षताना, पुंजैर्यजे शशि-निभैर्वर-सिद्धचक्रम् ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं०

नित्यं स्वदेह-परिमाणमनादिसंज्ञं, द्रव्यानपेक्षममृतं मरणाद्यतीतम् । मंदार-कुंद-कमलादि-वनस्पतीनां, पुष्पैर्यजे शुभतमैर्वर-सिद्धचक्रम् ॥४

ॐ ह्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं०

ऊर्ध्व-स्वभाव-गमनं सुमनो-व्यपेतं, ब्रह्मादि-बीज-सहितं गग-

नावभासम् । क्षीरान्न-साज्य-वटकै रस-पूर्ण-गर्भै-र्नित्यं यजे चरुवरै-र्वर-सिद्धक्रम् ॥ ५ ॥

ॐ ह्री सिचद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुद्रोगविध्वंसनाय नैवेद्यं०

आतङ्क-शोक-भय-रोग-मद-प्रशांतं,-निर्द्वंद्व-भाव-धरणं महिमा-निवेशं। कर्पूर-वर्ति-बहुभि. कनकावदातैर्दीपैर्यजे रुचिवरैर्वर-सिद्धचक्रम् ॥ ६ ॥

ॐ ह्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहांधकार विनाशनाय दीप०

पश्यन्समस्त-भुवनं युगपन्नितान्तं, त्रैकाल्य-वस्तु-विषये निविड-प्रदीपम् । सद्द्रव्य-गंध-घनसार-विमिश्रितानां, धूपैर्यजे परिमलैर्वर-सिद्ध-चक्रम् ॥ ७ ॥

ॐ ह्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं० ।

सिद्धासुरादिपतियक्ष-नरेंद्र-चक्रैर्ध्येय शिवं सकल-भव्य-जनैः सुवंद्यम् । नारङ्गि-पूग-कदली-फल-नारिकेलैः, सोऽहं यजे वरफलैर्वर-सिद्धचक्रम् ॥ ८ ॥

ॐह्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं० ।

गंधाढ्यं सुपयो-मधुव्रत-गणैः संगं वरं चदनं ।
पुष्पौघं विमलं सदक्षत-चयं रम्यं चरुं दीपकं ॥
धूपं गंधयुतं ददामि विविध श्रेष्ठं फल लब्धये ।
सिद्धानां युगपत्क्रमाय विमलं सेनोत्तरं वाञ्छितं ॥९॥

ॐह्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ज्ञानोपयोगविमल विशदात्मरूपं, सूक्ष्म-स्वभाव-परमं यदनंतवीर्यं । कर्मौघ-कक्ष-दहनं सुखशस्यबीजं बंदे सदानिरुपमं वर-सिद्धचक्रम् ।

कर्माष्टक-विनिर्मुक्तं मोक्षलक्ष्मी-निकेतनम् ।
सम्यक्त्वादि-गुणोपेतं सिद्धचक्र नमाम्यहम् ॥ १२ ॥

ॐ ह्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि० स्वाहा ।

त्रैलोक्येश्वर-वंदनीय-चरणाः प्रापुः श्रियं शाश्वती ।

यानाराध्य निरुद्ध-चंड-मनसः संतोऽपि तीर्थंकराः ।
सत्सम्यक्त्व-विबोध-वीर्य-विशदाऽव्याबाधताद्यै गुंणैर्-
युक्तांस्तानिह तोष्टवीमि सततं सिद्धान् विशुद्धोदयान् ॥

(पुष्पांजलि)

अथ जयमाला

विराग सनातन शांत निरंश, निरामय निर्भय निर्मल हंस ।
सुधाम विबोध-निधान विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ १ ॥
विदूरित-संसृतिभाव निरंग, समामृत-पूरित देव विसंग ।
अबंधकषाय-विहीनविमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥ २ ॥
निवारितदुष्कृत-कर्म-विपाश, सदामल-केवल-केलि-निवास ।
भवोदधिपारग शान्त विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥ ३ ॥
अनंत-सुखामृत-सागर धीर, कलंक-रजो-मल-भूरिसमीर ।
विखण्डित-काम विराम विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥ ४ ॥
विकार-विवर्जित तर्जित-शोक, विबोध-सुनेत्र-विलोकित-लोक ।
विहार विराव विरंग विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥ ५ ॥
रजोमल-खेद-विमुक्त विगात्र, निरंतर नित्य सुखामृत-पात्र ।
सुदर्शन-राजित नाथ विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥ ६ ॥
नरामर-वंदित निर्मल-भाव, अनत-मुनीश्वरपूज्य विहाव ।
सदोदय विश्वमहेश विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥ ७ ॥
विदंभ वितृष्ण विदोष विनिद्र, परापरशंकरसार वितंद्र ।
विकोप विरूप विशंक विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥ ८ ॥
जरा-मरणोज्झित वीत-विहार, विचिन्तित निर्मल निरहंकार ।
अचिंत्य-चरित्र विदर्प विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥ ९ ॥
विवर्ण विगंध विमान विलोभ, विमाय विकाय विशब्द विशोभ ।
अनाकुल केवल सर्व विमोह, प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध-समूह ॥१०॥

घत्ता—

असम-समयसारं चारु-चैतन्य-चिह्नं, पर-परणति-मुक्तं पद्मनंदींद्रवंद्यं
निखिल-गुण-निकेत सिद्ध-चक्रं विशुद्धं, स्मरति नमति यो वा स्तौति
सोऽभ्येति मुक्तिम् ॥ ११ ॥

ॐ ह्री सिद्धपरमेष्ठिभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अथाशीर्वाद. —अडिल्लछंद ।

अविनाशी अविकार परमरस धाम हो,
समाधानसर्वज्ञ सहज अभिराम हो ।
शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध अनादि अनन्त हो,
जगत शिरोमणि सिद्ध सदा जयवन्त हो ॥१॥
ध्यान अगनिकर कर्म कलंक सवै दहे,
नित्य निरंजनदेव सरूपी ह्वै रहे ।
ज्ञायक के आकार ममत्व निवारिकैं,
सो परमातम सिद्ध नमौ सिर नायकै ॥ २ ॥

दोहा—अविचलज्ञान प्रकाशतैं, गुण अनंत की खान ।
ध्यान धरै सो पाइये, परम सिद्ध भगवान ॥ इतिः

सिद्ध पूजा का भावाष्टक

निज-मनो-मणि-भाजन-भारया शम-रसैक-सुधारस-धारया ।
सकल-बोध-कला-रमणीयकं सहज-सिद्धमहं परिपूजये ॥१॥ जलं०
सहज-कर्म-कलङ्क-विनाशनैरमल-भाव-सुवासित-चन्दनैः ।
अनुपमान-गुणावलि-नायकं सहज-सिद्धमहं परिपूजये ॥२॥ चन्दनं
ससहज-भाव-सुनिर्मल-तन्दुलैः सकल-दोष-विशाल-विशोधनैः ।
अनुपरोध-सुबोध-निधानकं सहज-सिद्धमहं परिपूजिये ॥३॥ अक्षतान्
समयसार-सुपुष्प-सुमालया सहज-कर्मकरेण विशोधया ।
परम-योग-बलेन वशीकृतं सहज-सिद्धमहं परिपूजिये ॥४॥ पुष्पं

अकृत-बोध-सुदिव्य-निवेद्यकैर्विहित-जाति-जरा-मरणान्तकैः ।
निरवधि-प्रचुरात्म-गुणालय सहज-सिद्धमहं परिपूजये ।। ५ ।। नैवेद्यं
सहज-रत्न-रुचि-प्रतिदीपकैः रुचि-विभूति-तमः प्रविनाशनैः ।
निरवधि-स्वविकास-विकासनं सहज-सिद्धमहं परिपूजये ।। ६ ।। दीपं
निज-गुणाक्षय-रूपसुधूपनैः स्वगुण-घाति-मलः प्रविनाशनैः ।
विशद-बोध-सुदीर्घ-सुखात्मकं, सहज-सिद्धमहं परिपूजये ।।७।। धूपं
परम-भाव-फलावलिसम्पदा सहज-भाव-कुभाव-विशोधया ।
निजगुणस्फुरणात्म-निरञ्जनं सहज-सिद्धमहं परिपूजये ।।८।। फलं
नेत्रोन्मीलि-विकास-भाव-निवहैरत्यन्त-बोधाय वै,
वार्गन्धाक्षत-पुष्प-दाम-चरुकैः सद्दीप-धूपैः फलैः ।
यश्चिन्ता-मणि-शुद्ध-भाव-परम-ज्ञानात्मकैरर्चयेत् ।
सिद्धं स्वादुमगाध-बोधमचलं सञ्चर्चयामो वयं ।।९।। अर्घ्यं

सिद्ध पूजा भाषा

परम ब्रह्म परमात्मा, परम ज्योति परमीश ।
परम निरंजन परम शिव, नमों सिद्ध जगदीश ।। १ ।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्ध परमेष्ठिन् ! अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं ।।

निरस्त कर्म सम्बन्ध सूक्ष्मं नित्यं निरामयम् ।
बन्देऽहं परमात्मानममूर्त्तीमनुपद्रवम् ।। यंत्र स्थापनं ।।

अथाष्टकं

सोरठा—मोहि तृषा दुःख देहि, सो तुमने जीती प्रभू ।
जलसों पूजों तोय, मेरो रोग मिटाइयो ।।१।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्ध परमेष्ठिभ्यो सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, वीर्य, सुमत्त, अवगाहण, अगुरुलघु, अव्याबाधाय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।।

हम भव आतप माँहि, तुम न्यारे संसार सूँ ।
कीजै शीतल छाँहि, चन्दन सों पूजा करूँ ।।चंदनं।।२।।
हम औगुण समुदाय, तुम अक्षय गुण के भरे ।
पूजो अक्षत लाय, दोष नाश गुण कीजिये ।। अक्षतं ।। ३ ।।
काम अगनि है मोहि, निश्चय शील स्वभाव तुम ।
फूल चढाऊँ तोहि, सेवक की बाधा हरो ।। पुष्पं ।। ४ ।।
मोहि क्षुधा दुख भूरि, ध्यान खड्ग सो तुम हतो ।
मेरो बाधा चूरि, नेवज सों पूजा करों ।। नैवेद्यं ।। ५ ।।
मोह तिमिर हम पास, तुम पर चेतन ज्योति है ।
पूजूँ दीप प्रकाश, मेरो तम निर्वारिये ।। दीपं ।। ६ ।।
रुल्यो करम बन-जाल, मुक्ति माहि तुम सुखकरो ।
खेऊँ धूप रसाल, मम निकाल बनजालसे ।। धूपं ।। ७ ।।
अन्तराय दुखकार, तुम अनन्त थिरता लिये ।
पूजूँ फल धर सार, विघन टार शिव फल करो ।। फलं ।। ८ ।।
हम मे आठो दोष, भजौं अरघ सो सिद्धजी ।
दोजै वसु गुण मोक्ष, कर जोड़े "द्यानत" कहे ।। अर्घ्यं ।। ९ ।।

आरती

दोहा—आठ करम दृढ बन्ध सों, नख शिख बंध्यो जिहान ।
बन्ध रहित वसु गुण सहित, नमों सिद्ध भगवान ।। १ ।।

त्रोटक छन्द

सुख सम्यक् दर्शन ज्ञानधरं । बल ना गुरु ना लघु बाध हरं ।
अवगाह अमूरति नायक है । सब सिद्ध नमो सुखदायक है ।। २ ।।
अमल अचलं अतुल अटल । अतनं अमनं अवच अकुल ।
अजरं अमरं जग ज्ञायक हैं । सब सिद्ध नमो सुखदायक हैं ।। ३ ।।
निरभोग स्वभोग अरोग परं । निरयोग असोग वियोग हरं ।
अरसं स्वरसं दुख घायक है । सब सिद्ध नमो सुखदायक हैं ।। ४ ।।

सब कर्म कलङ्क अटङ्क अजं। नरनाथ सुरेश समूह जजं।
मुनि ध्यावत सज्जनदायक है। सब सिद्ध नमों सुखदायक हैं।।५।।
अविरुद्ध विशुद्ध प्रबुद्ध मयं। सब जानत लोक अलोक चयं।
परमं धरमं शिव लायक है। सब सिद्ध नमों सुखदायक है।।६।।
निरबंध अबंध अगध परं। निरभय निरखय निरनय अधरं।
निरूप निरूप अकायक है। सब सिद्ध नमों सुखदायक है।।७।।
निरभेद अखेद अछेद लहा। निरद्वन्द सुछन्द अछन्द महा।
अक्षुधा अतृषा अकषायक है। सब सिद्ध नमों सुखदायक है।।८।।
असमं अजमं अतमं लहियं। अगमं सुगमं सुखयं गहियं।
जमराज की चोट बचायक हैं। सब सिद्ध नमों सुखदायक है।।९।।
निरधाम सुधाम अकाम युतं। अविहार अहार निहार च्युतं।
भव नाशन तीक्षण सायक है। सब सिद्ध नमों सुखदायक है।।१०।।
निरवर्ण अकर्ण अशर्ण नुतं। अगतं अमतं अक्षतं अरतं।
अति उत्तम भाव सुछायक है। सब सिद्ध नमों सुखदायक है।।११।।
निररङ्ग असङ्ग अभङ्ग सदा। अतयं अजयं अचयं सुखदा।
अमदं अगदं गुण छायक है। सब सिद्ध नमो सुखदायक है।।१२।।
अविषाद अनाद अवाद परं। भगवन्त अनन्त महन्त तरं।
तुम ध्येय महामुनि ध्यायक हैं। सब सिद्ध नमों सुखदायक है।।१३।।
निरनेह अदेह अगेह सुखो। निरमोह अकोह अलोह तुषो।
तिहुँ लोक के नायक पायक है। सब सिद्ध नमों सुखदायक है।।१४।।
पन्द्रह से भाग महान बसै। नवलाख के भाग जघन्य लसै।
तन वात के अंत सहायक है। सब सिद्ध नमों सुखदायक है।।१५।।

सोरठा—बहु विधि नाम बखान, परमेश्वर सब ही भजे।
ज्यो का त्यों सरधान, 'द्यानत' सेवे ते बड़े।।१६।।

ॐ ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो महार्घ्यं।

अविनाशी अविकार परम रस धाम हो,
समाधान सर्वज्ञ सहज अभिराम हो।
शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध अनादि अनन्त हो,
जगत शिरोमणि सिद्ध सदा जयवन्त हो ॥१॥
ध्यान अगनिकर कर्म कलंक सबै दहे,
छिन मे सिद्ध स्वरूप निरजन ह्वै रहे।
ज्ञायक ज्ञेयाकार ममत्व निवारिकै,
सो परमातम सिद्ध नमो उर धारिकै ॥२॥
दोहा—अविचल ज्ञान प्रकाशते, गुण अनन्त की खान।
ध्यान धरै सो पाईये, परम सिद्ध भगवान ॥३॥

इत्याशीर्वादः।

नोट.—जिनको आठो कर्मो की अलग अलग जयमाला बोलना हो तो वे आगे लिखी आठ जयमाला पढें।

ज्ञानावरणी कर्म नाशक सिद्ध जयमाला

दोहा—मूरति ऊपर पट करौ, रूप न जानै कोय।
ज्ञानावरणी करमतै, जीव अज्ञानी होय ॥ १ ॥

चौपाई।

तियसैछत्तिस विध मति वरणी, ताहि ढकै मति ज्ञानावरणी।
द्वादशविध श्रुत ज्ञान न होवै, श्रुत ज्ञानावरणी सो होवै ॥ २ ॥
तिय विध षट विध अवधि छिपावै, अवधिज्ञान आवरण कहावै।
दो विध मनपर्य्यय नहि हो है, मनपर्यय आवरणी सो है ॥ ३ ॥
केवलज्ञान अनंतानंता, केवल ज्ञानावरणी हन्ता।
उदय अनउदै मूरख ठानै, कुमति कुश्रुत कुअवधि पिछानै ॥ ४ ॥
क्षय-उपशम करि सम्यकधारी, चारो ज्ञान लहै अविकारी।
ज्ञानावरणी सर्व विनासै, केवल ज्ञान रूप परकासै ॥ ५ ॥

दोहा—ज्ञानावरणी पच हत, प्रगट्यो केवल ज्ञान।
'द्यानत' मनवचकायसौ, नमो सिद्ध गुणखान ॥ ६ ॥
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो ज्ञानावरणी कर्मविनाशनायार्घ्यं

दर्शनावरणी कर्म नाशक सिद्ध जयमाला

दोहा—जैसे भूपति दरशको, होन न दे दरवान।
तैसे दरशन आवरण, देखन दे न सुजान ॥ १ ॥

चोपाई।

जाकै उदै आंख नहिं होई, चक्षु दर्शनावरणी सोई।
नहिं मुख नाक फरस मुख करणं, उदै अचक्षु दर्शनावरणं ॥ २ ॥
अवधि दर्श परमान विलोकै, अवधि दर्शनावरणी रोकै।
केवल लोकालोक निहारै, केवल दर्शनावरण निवारै ॥ ३ ॥
निद्रा उदै सचेतन सोवै, थोरी नीद सुरत कछु होवै।
प्रचला बलसौ आंख खुलो है, अर्द्ध मुदी सी अर्द्ध खुली है ॥ ४ ॥
निद्रा निद्रा उदै बखानी, पलक उघार सकै नहि प्राणी।
प्रचला प्रचला उदै कहावै, लार बहै मुख अंग चलावै ॥ ५ ॥
उठै चलै बोलै सुध नाहीं, जोर विशेष बढै तन मांही।
थान प्रचण्ड तास तै होवै, स्त्यानगृद्धि निद्रा जो सोवै ॥ ६ ॥
दोहा—दरशन आवरणी हते, केवल दर्शन रूप।
"द्यानत"सिद्ध नमौ सदा, अमल अचल चिद्रूप ॥
ॐह्रींणमोसिद्धाण सिद्धपरमेष्ठिभ्यो दर्शनावरणी कर्मविनाशनायार्घ्यं

वेदनी कर्मनाशक सिद्ध जयमाला

सोरठा—शहद मिलो असिधार, सुखदुख जोवन को करै।
कर्मवेदनी सार, सात-असाता देत है ॥ १ ॥

चौपाई छन्द।

पुन्नी कनक महल मे सोवै, पापी राह परौ दुख रोवै।
पुन्नी वाछित भोजन खावै, पापी मांगै टूक न पावै ॥ २ ॥

पुन्नी जरी जवाहर शोभै, पापी फाटे कपड़े ओढै।
पुन्नी कचन थार कटोरा, पापी के कर प्याला खोरा ॥ ३ ॥
पुन्नी गज पर चढ चालता, पापी नगे पग धावंता।
पुन्नी के शिर छत्र फिरावै, पापी शीश बोझ ले धावै ॥ ४ ॥
पुन्नी हुकम जगत पर होई, पापी बात सुनै नहि कोई।
पुन्नी भवन दरव नित आवै, पापी धन देखन नहि पावै ॥५॥
पुन्नीको सब देखन जावै, पापी जनका मुंह न लखावै।
पुन्नी कबहूं रोग न पावै, पापीको नित व्याधि सतावै ॥ ६ ॥
पुन्नी शीलरूप जुत नारी, पापी लहै न कानी कारी।
पुन्नीके सुत करै कमाई, पापी तरसै ह्वै दुखदाई ॥ ७ ॥
पुन्नी वस्तु गई फिर आवै, पापीके करमे गिर जावै।
पुन्नी षटऋतुके सुख भोगे, पापी महादुखी अति रोवै ॥ ८ ॥
सोरठा—पुन्य पाप दोउ डार, कर्म वेदनी वृक्षके।
सिद्ध जलावन हार, 'द्यानत' निरबाधा करो ॥
ॐ ह्री णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो वेदनीकर्मविनाशनायार्घ्यं० ।

मोहनी कर्मनाशक सिद्ध जयमाला

दोहा—ज्यो मदिराके पान तैं, सुधबुध सबै भुलाय।
त्यो मोहनीकर्म उदै, जीव गहिल हो जाय ॥

चौपाई।

दरशन मोह तीन परकार, नाश करै सम्यक गुण सारं।
मिथ्याज्वरी उदै जब आवै, धर्म मधुर रस मूढ न भावै ॥२॥
मिश्र भाव सिखरिनि समख्यातं, एक समय सम्यकमिथ्यातं।
सम्यक प्रकृति मिथ्यात सतावै, चल मल शिथिल दोष उपजावै ॥३॥
चारित्र मोह पच्चीस प्रकारं, जो मेटै सम्यक आचारं।
क्रोध मान माया अरु लोभ, चारौं चार चारविधि शोभं ॥ ४ ॥

अनंतानुबंध बंधीचौकडिया, जिनने निरमल समकित हरिया।
अप्रत्याख्यानी चऊ भाखै, श्रावक व्रत विध वश कर राखै॥ ५॥
प्रत्याख्यान चौकड़ी सोई, जाके उदय न मुनि व्रत होई।
सो संज्वलन चतुष्क बखानी, यथाख्यात पावै नहिं प्राणी॥ ६॥
हास्य उदै तैं हांसो ठाने, रति के उदै जोव रति मानै।
अरति उदै तैं कछु न सुहावे, शोक उदै सेती बिललावै॥ ७॥
भयतैं डरे जुगुप्स गिलानं, पुरुष भाव तृण पावक जानं।
काष्ठ की पावक समनारी, षंढ पजावा अगनि निहारी॥ ८॥

दोहा—अठ्ठाईसों मोहकी, तुम नाशक भगवान।
सुख अनन्त सम्यक सदा, 'द्यानत' नमों प्रधान॥९॥

ॐ ह्री णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो मोहनीय कर्मविनाशनाय अर्घ्यं

आयुकर्म नाशक सिद्ध जयमाला

सोरठा—जैसे नरको पांव, दियो काठमें थिर रहै।
तैसे आयु स्वभाव, जियको चहुँगति थिर करे॥

चौपाई।

नरक आयुतै नरक लहे है, तेतिस सागर तहां रहे है।
गाढा करि आरेसों चीरे, कोल्हू मांहि डारकै पेरें॥ २॥
वैतरनी दुर्गंध नहावै, पुतरी अगनिमई गल लावे।
सूली देहि कड़ाई तावे, शालमली तल मांहि सुवावै॥ ३॥
शीश तलै कर गिरितैं डारे, नीचे वज्र मुष्टि सौ मारे।
भूख प्यास तप शीत सहारी, पंच प्रकार सहै दुख भारी॥ ४॥
पशु को आयु करै पशु काया, बिना विवेक सदा बिललाया।
जन्म वैर जिय तैं दुख पावैं, बांध-मारकी कौन चलावै॥ ५॥
मानुष आयु धरै नर देही, इष्ट वियोग लहै दुख तेही।
धन संपति को सदा भिखारी, प्रभुता मांहि पचै संसारी॥ ६॥

देव आयुतै देव कहाया, परका देख विभव खुनसाया।
मरन चिन्ह लख अति दुखदानो, इम चारों गति भटके प्रानी॥७॥
दोहा—'द्यानत' चारो आयु के, तुम नाशक भगवान।
अटल शुद्ध अवगाहना, नमो सिद्ध गुण खान॥ ८॥
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो आयुकर्मविनाशनाय अर्घ्यं०।

नामकर्मनाशक सिद्ध जयमाला।

दोहा—चित्रकार जैसे लिखे, नाना चित्र अनूप।
नामकर्म तैसे करै, चेतनके बहु रूप॥ १॥

चौपाई।

गति के उदय चहूं गति जानी, जाति पांचइन्द्री सब प्राणी।
आनुपूरवी गति ले जाई, दो बेहाय दो चाल बताई॥ २॥
बंधनपंच पंचविधिकाया, तन बधान पंच दृढ लाया।
बंधै संघनसो पंच संघातं, अंग उपंग तीन ही गात॥ ३॥
बरण पच तन रग बखाने, पाचो ही तन के रस जाने।
गध दोय तन माहि कहे है, आठ फरस तन माहि लहे है॥४॥
षट सठान देह आकारं, हाड छह भेद संहनन धारं।
उडै पडै न अगुरु लघु काया, स्वास उस्वास नाकसुर गाया॥५॥
निज दुख दे उपघात शरीरं, तन पर घात करै पर पीरं।
चद्र बिब जिय देह उद्योत, भानुबिब जिय आतप होत॥ ६॥
थावर उदे सुथिर, न चलै है, त्रस उदैतै चलै हलै है।
परयापत पूरी जब होई, खिरे बीच अपरियापति सोई॥ ७॥
थिर के उदै सुथिर तन काया, अथिर उदैतै कंपै काया।
तन प्रत्येक जिय एक भनत, साधारण तन जीव अनंत॥ ८॥
मारै मरे रहे आधार, दोसै अर लोकनिमे सार।
बादर जीवा चहूं पसरत, सूक्ष्म जीव इनतैं विपरीत॥ ९॥

शुभ कै उदै होय शुभ काया, अशुभ उदै तन अशुभ बताया।
सुभग उदै भागका पूरा, दुर्भग उदै अभाग हजूरा ॥ १० ॥
सुस्वर उदय कोकिला बानी, दुस्वर गर्दभ ध्वनि सम जानी।
आदर तैं बहु आदर पावै, उदय अनादर तैं न सुहावै ॥ ११ ॥
जसके उदय सुजस जगमांही, अजस उदय अपजस जग माही।
थान-प्रमान दुविध निर्मानं, तीर्थङ्कर है पुन्य प्रधानं ॥ १२ ॥
दोहा—ब्यालीस और तिरानवै तथा एकसौ तीन।
'द्यानत' सो प्रकृति हरी, सिद्ध अमूरति लीन ॥ १३ ॥
ॐ ह्री णमो सिद्धाण सिद्धपरमेष्ठिभ्यो नामकर्मविनाशनाय अर्घ्यं०।

गोत्रकर्मनाशक सिद्ध जयमाला।

दोहा—ज्यों कुम्हार छोटो बड़ो, भांड़ो घ[illegible] [illegible]नय।
गोत्रकर्म त्यो जीवको, [illegible] [illegible]च कुल देय ॥ १ ॥

चौपाई।

[illegible]हारं, ऊंच गोत सब देव कुमारं।
नीच गोत पशु न[illegible] बखानै, नीच गोत सब शूद्र प्रवानै ॥ २ ॥
मनुष माहि दो वैश्य मभारं, मद्य मांस जो करैं अहारं।
ब्राह्मण क्षत्र बाहर होई, नीच गोत्र कहिये नर सोई ॥ ३ ॥
जो परनिंगुण करि भाखै निज, औगुणको गुण अभिलाषै।
परगुणके आप बड़ाई, बाधै नीच गोत्र दुखदाई ॥ ४ ॥
परको [illegible]ो मुनिव्रत नाही, क्योकर जाय मुकति के मांही।
नीच [illegible] तज ऊंच सम्हारै, दया धरम कर आतम तारै ॥ ५ ॥
नीच

सोरठा।

[illegible]च नीच दो गोत, नाश अगुरुलघु गुण भये।
[illegible]नत' आतम जोत, सिद्ध सिद्ध वंदो सदा ॥ ६ ॥
[illegible] णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो गोत्रकर्मविनाशनाय अर्घ्यं०।
ॐ

अन्तरायकर्मनाशक सिद्ध जयमाला

दोहा—भूप दिलावे द्रव्यको, भंडारी दे नांहि।
होन देय नहिं संपदा, अंतराय जगमांहि ॥ १ ॥

चौपाई।

छती वस्तु दे सकै न प्राणी, दान अंतरायो विधि जानो।
उद्यम करे न होय कमाई, लाभ-अन्तराय दुखदाई ॥ २ ॥
भोजन त्यार खान नहि पावे, भोग अंतरायी जब आवे।
पट भूषण है पहिरत नाही, उपभोग अन्तरायकी छाही ॥३॥
तन वर पीखें बल नहिं होई, वीर्य अन्तराय है सोई।
इह विधि अंतराय विवहारी, निश्चय बात सुनों मति धारी ॥४॥
मिथ्याभाव त्याग सो दानं, समताभाव लाभ परधानं।
आतमीक सुख भोग संजोगं, अनुभौभ्यास सदा उपभोगं ॥५॥
ध्यान ठानकै कर्म विनासै, सो वीरज निज भाव प्रकासै।
पांचों भाव जहां नहिं लहिये, निश्चै अन्तराये सो कहिये ॥६॥
दोहा—अंतराय पांचों हते, प्रगट्यो सुबल अनंत।
"द्यानत" सिद्ध नमों सदा, ज्यों पाऊं भव अंत ॥

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्ध परमेष्ठिभ्यो अंतरायकर्मविनाशनायार्घ्यं०

आठ : : । । सिद्ध जयमाला

सोरठा—आठ करमको नाश, आठों गुण परगट भये।
सिद्ध सदा सुखरास, करो आरती भावसों ॥ १ ॥

चौपाई।

ज्ञानावरणी कर्म विनाशै, लोकालोक ज्ञान परकाशे।
दरशन आवरनी छय कोनो, दरव सुगुण परजय लखि लोनो ॥ २ ॥
कर्म वेदनी नाश गया है, निराबाध गुण प्रगट भया है।
मोहकर्म नाशा दुःखकारी, निर्मल छायक समकित धारी ॥ ३ ॥

आयु कर्म थिति सर्व विनाशी, अवगाहन गुण अटल प्रकाशी ।
नामकर्म जोता जग नामी, चेतन जोत अमूरत स्वामी ।। ४ ।।
गोत कर्म घाता वरवीरं, सिद्ध अगुरु लघु गुण गंभीरं ।
अंतराय दुखदाय हरा है, बल अनंत परकास करा है ।। ५ ।।
जा पद मांहि सर्वपद छाजै, ज्यों दर्पण प्रतिबिंब विराजै ।
राग दोष न मोह न भावै, अजर अमर अब अचल सुहावै ।। ६ ।।
जाके गुण सुर नर सब गावे, जाको जोगीश्वर नित ध्यावै ।
जाकी भकति मुकति पद पावै, सो शोभा किह भांति बतावै ।। ७ ।।
ये गुण आठ थूल इम भाखे, गुण अनंत निज मनमें राखे ।
सिद्धन की थुति को कर जाने, या मिस सो शुभ नाम बखानै ।। ८ ।।
सोरठा—बहु विध नाम बखान, परमेश्वर सबही भजें ।
ज्योंका त्यों सरधान, 'द्यानत' सेवैं ते बड़े ।। ९ ।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो अष्टकर्मविनाशनाय अर्घ्यं० ।

सिद्ध चक्र पूजा

अडिल्ल छंद

अष्ट करम करि नष्ट अष्ट गुण पायकैं ।
अष्टम वसुधा माहि विराजे जायकैं ।।
ऐसे सिद्ध अनन्त महन्त मनायकैं ।
संवौषट् आह्वान करूं हरषायकैं ।।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र तिष्ठ २ । ठः ठः ।
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र मम सन्निहितो भव २ वषट्

हिमवनगत गंगा आदि अभंगा, तीर्थ उतंगा सरवंगा ।
आनिय सुरसंगा सलिल सुरंगा, करिमनचंगा भरि भृंगा ।।

त्रिभुवन के स्वामी त्रिभुवननामी, अन्तरजामी अभिरामी।
शिवपुरविश्रामी निजनिधि पामी, सिद्धजजामी सिरनामी॥

ॐ ह्रीं श्री अनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये जलं निर्वपामीति स्वाहा॥ १॥

हरिचन्दन लायो कर्पूर मिलायो, बहु महकायो मनभायो।
जलसंग घसायो रंगसुहायो, चरन चढायो हरपायो॥त्रि०॥२॥

ॐ ह्रीं श्री अनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा॥ २॥

तदुल उजियारे शशिदुतिहारे, कोमल प्यारे अनियारे।
तुषखंड निकारे जलसु पखारे, पुञ्ज तुम्हारे ढिग धारे॥ त्रि० ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री अनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा॥ ३॥

सुरतरु की बारी, प्रीतिविहारी, किरिया प्यारी गुलजारी।
भरि कञ्चन-थारी फूलसँवारी, तुम पद ढारी अतिसारी॥ त्रि० ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री अनाहतपराक्रमाय सर्वकर्म विनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये पुष्प निर्वपामीति स्वाहा॥ ४॥

पकवान निवाजे, स्वाद विराजे, अमृत लाजे, क्षुत भाजे।
बहु मोदक छाजे, घेवरखाजे, पूजन काजे करि ताजे॥ त्रि० ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री अनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये नैवेद्य निर्वपामीति स्वाहा॥ ५॥

आपापर भासै ज्ञान प्रकाशै, चित्तविकासै तम नासै।
ऐसे विध खासे दीप उजासे, धरि तुम पासे उल्लासे॥ त्रि० ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री अनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये दीप निर्वपामीति स्वाहा॥ ६॥

चुम्बक अलिमाला गन्धविशाला, चन्दनकाला गुरु बाला।
तस चूर्ण रसाला करि ततकाला अग्निज्वाला मे डाला॥त्रि०॥७॥

ॐ ह्रीं श्री अनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।। ७ ।।

श्रीफल अतिभारा, पिस्ता प्यारा, दाख छुवारा सहकारा ।
ऋतु ऋतुका न्यारा सत्फलसारा, अपरम्पारा लै धारा ।।त्रि०।।८।।

ॐ ह्रीं श्री अनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।। ८ ।।

जल फल वसुवृन्दा अरघ अमन्दा, जजत अनन्दा के कंदा ।
मेटो भवफन्दा, सब दुखदन्दा, 'हीराचन्दा' तुव बन्दा ।।त्रि०।।९।।

ॐ ह्रीं श्री अनाहतपराक्रमाय सर्वकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।। ९ ।।

अथ जयमाला

दोहा—ध्यान-दहन-विधि दारु दहि, पायो पद निरवान ।
पंचभावजुत थिर थये, नमों सिद्ध भगवान ।।

—:त्रोटक छंद:—

सुख सम्यक्दर्शन ज्ञान लहा, अगुरु लघु सूक्ष्मवीर्य महा ।
अवगाह अबाध अघायक हो, सब सिद्ध नमो सुखदायक हो ।। २ ।।
असुरेन्द्र सुरेन्द्र नरेन्द्र जजै, भुवनेन्द्र खगेन्द्र गणेन्द्र भजै ।
जर-जामनमर्ण मिटायक हो, सब० ।। ३ ।।
अमलं अचलं अकलं अकुलं, अछलं असलं अरलं अतुलं ।
अरलं सरलं शिवनायक हो, सब० ।। ४ ।।
अजरं अमरं अधरं सुधरं, अडरं अहरं अमरं अधरं ।
अपरं असरं सब लायक हो, सब० ।। ५ ।।
वृषवृंद अमंद न निंद लहै, निरदंद अफंद सुछंद रहै ।
नित आनंदवृंद विधायक हो, सब० ।। ६ ।।
भगवंत सुसंत अनंत गुणी, जयवंत महंत नमंत मुनी ।
जगजंतु तणे अघघायक हो, सब० ।। ७ ।।

अकलंक अटंक शुभंकर हो, निरडन्क निशङ्क शिवकर हो।
अभयंकर शंकर क्षायक हो, सब० ॥ ८ ॥
अतरंग अरंग असंग सदा, भवभग अभंग उतग सदा।
सरवंग अनंग नसायक हो, सब० ॥ ९ ॥
ब्रह्माण्ड जु मण्डलमण्डन हो, त्रिहुँ दंड प्रचन्ड विहन्डन हो।
चिद पिड अखण्ड अकायक हो, सब० ॥ १० ॥
निरभोग सुभोग वियोग हरै, निरजोग अरोग अशोग धरैं।
भ्रमभंजन तीक्षण सायक हो, सब० ॥ ११ ॥
जय लक्ष्य अलक्ष्य सुलक्ष्यक हो, जय दक्षक पक्षक रक्षकहो।
पण अक्ष प्रत्यक्ष खपायक हो, सब० ॥ १२ ॥
निरभेद अखेद अछेद सही, निरवेद अवेदन वेद नही।
सब लोक-अलोक के ज्ञायक हो, सब० ॥ १३ ॥
अमलीन अदीन अरीन हने, निजलीन अधीन अछीन बने।
जमको घनघात बचायक हो, सब० ॥ १४ ॥
न अहार निहार विहार कबै, अविकार अपार उदार सबै।
जगजीवन के मन भायक हो, सब० ॥ १५ ॥
अप्रमाद अनाद सुस्वादरता, उनमाद विवाद विषादहता।
समता रमता अकषायक हो, सब० ॥ १६ ॥
असमंद अधंद अरन्ध भये, निरबन्ध अखन्ध अगन्ध ठये।
अमनं अतनं निरवायक हो, सब० ॥ १७ ॥
निरवर्ण अकर्ण उधर्ण बली, दुखहर्ण अशर्ण सुशर्ण भली।
बलि मोहको फौज भगायक हो, सब० ॥ १८ ॥
अविरुद्ध अक्रुद्ध अजुद्ध प्रभू, अति शुद्ध प्रबुद्ध समृद्ध विभू।
परमातम पूरन पायक हो, सब० ॥ १९ ॥
विरूप चिद्रूप स्वरूप द्युति, जसकूप अनूपम भूप भुती।
कृतकृत्य जगत्त्रयनायक हो, सब० ॥ २० ॥

सब इष्ट अभीष्ट विशिष्टहितू, उतकिष्ट वरिष्ट गरिष्ट मितू ।
शिव तिष्ठत सर्व सहायक हो, सब० ॥ २१ ॥

जय श्रीधर श्रीधर श्रीवर हो, जय श्रीकर श्रीभर श्रीझर हो ।
जय ऋद्धि सुसिद्धि-बढायक हो, सब० ॥ २२ ॥

दोहा—सिद्ध-सुगुण को कहि सकै, ज्यों विलस्त नभ मान ।
'हीराचन्द' तातै जजै, करहु सकल कल्यान ॥ २३ ॥

ॐ ह्रीं श्रीअनाहतपराक्रमाय सकलकर्मविनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये अनर्घ्य पदप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(यहां पर विसर्जन भी करना चाहिये)

अडिल्ल—सिद्ध जजैं तिनको नहि आवै आपदा ।
पुत्र पौत्र धन धान्य लहै सुख सम्पदा ॥
इन्द्र चन्द्र धरणेंद्र नरेन्द्र जु होयकै ।
जावै मुकति मँझार करम सब खोयकै ॥ २४ ॥

(इत्याशीर्वादाय पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

बीस तीर्थङ्कर पूजा

पंच मेरु की पूर्व अपर दिश के विषे ।
क्षेत्र विदेह मंझार बीस जिनवर अखे ॥
सोमन्धर जिन आदि जजन के कारने ।
आह्वानन स्थापन करूं अघ टारने ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्यमान बीस तीर्थङ्कर अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं विद्यमान बीसतीर्थङ्कर अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।
ॐ ह्रीं विद्यमान बीसतीर्थङ्कर अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं ।

सीता नदी को नीर प्रासुक हेम झारी में भरो ।

त्रय धार देकर जन्म मृत्यु जरादि दुख को परिहरों ।।
सोमन्धरादिक सास्वते जिन बोस क्षेत्र विदेह के ।
पूजूं सदा मन वचन तन ते भवि चलो क्षेत्र अदेह के ।।
ॐ ह्रीं विद्यमान बीसतीर्थङ्करेभ्यो जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं०
शीतल सुगन्धित भ्रमर गुञ्जित लेय चन्दन पावनो ।
या हेत तुम ढिग धरत हूं, ससार ताप मिटावनो ।।
सीमन्धरादि० पूजूं सदा० ।।चन्दनं।।
तन्दुल अखण्डित लेय उज्ज्वल पु ज तुम गुन के भरौ ।
तुम अखय पदकी प्राप्ति कीजे, अरज या विधि सो करौ ।।
सीमन्धरादि० पूजूं सदा० ।।अक्षतं।।
प्रासुक सुगन्धित फूल बहुविधि धरत तुम ढिग आयजो ।
मन्मथ विथा हमको सतावे देय पाप नशायजो ।।
सीमन्धरादि० पूजूं सदा० ।।पुष्प।।
नैवेद्य उत्तम थाल मे धर लेय तुमरी भेंट जी ।
मै करत याते यथारथ आप देहैं मेट जी—
सीमन्धरादि० पूजू सदा० ।।नैवेद्य।।
मिथ्यात्त्व तम के नासबे को, आया आप समीप जी ।
निर्मल मनोहर दीप द्युति को, धरत प्रासुक दीपजो ।।
सीमन्धरादि० पूजूं सदा० ।।दीपं।।
पावन सुगन्धित धूप लेकर अग्नि घट मे धरत है ।
आठो रिपू दुख दाय मोरे, मानो सु मिटिवा जात है ।।
सीमन्धरादि० । पूजूं सदा० ।।धूपं।।
बहु भांति प्रासुक मधुर सुन्दर घ्राण दृग सुखकारजो ।
फल आपको धर भेट जाचूं, मोक्ष फल दो सारजो ।।
सीमन्धरादि० । पूजूं सदा० ।।फलं।।
वर नीर चन्दन अमल तन्दुल पुष्प चरु मन भावने ।

पुनि दीप धूप पवित्र पूजूं, अर्घ ले गुन गावते ।।
सीमन्धरादि० । पूजूं सदा० ।।अर्घ्य।।

जयमाला

दोहा—जे विदेह मे सास्वते विहरमान जिन बीस ।
तिनको यह जयमाल है, कहूँ नाय निज शीस ।।

जय सीमन्धर तिहुं जगत भूप, जय युगमन्धर निर्मल अनूप ।
जय बाहु जिनेश्वर जगत भान, जय जय स्वभाव गुनगन महान ।।
सजात सकल नाशक सुनिष्ट, जय जय शम्भू प्रभु गुन गरिष्ठ ।
जय वृषभानन भव जलधि पोत, जय अनंत वीर्य आतम उद्योत ।।
जय सूर प्रभ जिन काल वीर, जय विशालकीर्त्ति जिन अतुल धीर ।
जय जयहि वज्रधर अघ निवार, जय चन्द्रानन जनगन अपार ।।
जय चन्द्रबाहु निज आतम लीन, जय जय ही भुजंगम मोह छीन ।
जय ईश्वर केवल बोध देन, जय नेमि यतीश्वर मधुर बैन ।।
जय वीरसेन तिहुँ जगत तात, जय महाभद्र नाशक मिथ्यात ।
जय जयहि देव यश जग विख्यात, जय अजितवीर्य सब शत्रु घात ।।
ये बीस जिनेश्वर विहरमान, सब समोसरण युत क्रिया खान ।
विचरे विदेह शुभ क्षेत्र माहि, एक धर्म हेत नही और चाह ।।
तिस थान धर्म दूजौ न कोय, जिनराज तनो इक धर्म होय ।
थिर काल सदा चौथो रहाय, शिव पथ बन्द कबहूँ न होय ।।
तिस थान तनी शोभा अपार, कहि नाहि सके मति तुच्छ धार ।
बाचे जु नेमि निज नाय सीस, शिवथान देहु जिनराज बीस ।।
घत्ता—ये बीस जिनेश्वर नमत सुरेश्वर, चक्रेश्वर आकाश धरा ।
जो पढे पढावे शिवफल पावें, सो सुख पावें परम्परा ।।

इति । पूर्णार्घ्यं ।

सोलहकारण का अर्घ

जल फल आठों द्रव्य चढ़ाय द्यानत बरत करों मन लाय ।

परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥
दरश विशुद्धि भावना भाय, सोलह तीर्थंकर पद पाय।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धि, विनयसम्पन्नता, शीलव्रतेष्वनतिचार, अभीक्ष्णज्ञानोपयोग, संवेग, शक्तितस्त्याग, शक्तितस्तप, साधुसमाधि, वैयावृत्यकरण, अर्हद्भक्ति, आचार्य भक्ति, बहुश्रुतभक्ति, प्रवचन भक्ति, आवश्यकापरिहाणि, मार्गप्रभावना, प्रवचन-वात्सल्य इति षोडशकारणेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

पंच मेरु का अर्घ

आठ दरबमय अर्घ बनाय, 'द्यानत' पूजौं श्री जिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥
पांचों मेरु असी जिन धाम, सब प्रतिमा को करो प्रणाम।
महा सुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं पंचमेरु संबंधी अस्सी जिन चैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

नंदीश्वर द्वीपका अर्घ

यह अर्घ कियो निज हेतु तुमको अरपत हों।
'द्यानत' कीनो शिव खेत भूप समरपतु हों ॥
नंदीश्वर श्रीजिनधाम बावन पुंज करो।
वसुदिन प्रतिमा अभिराम आनंदभाव धरों ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं नंदीश्वरद्वीपे पूर्व-पश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपंचाशज्जिनालयस्थ जिन-प्रतिमाभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दशलक्षण धर्म का अर्घ

आठों दरब संवार, 'द्यानत' अधिक उछाह सों।
भवआताप निवार, दशलक्षण पूजौं सदा ॥ ४ ॥

ॐ ह्री उत्तम क्षमा, मार्दव, आर्जव सत्य, शौच, सयम, तप, त्याग, आकिंचन, ब्रह्मचर्य दशलक्षणधर्मेभ्योऽर्घ्य निर्वपामोति स्वाहा।

रत्नत्रय का अर्घ

आठ द्रव्य निरधार, उत्तम सो उत्तम लिये।
जन्म रोग निरवार, सम्यक् रत्नत्रय भजों॥ ५॥

ॐ ह्री अष्टांग सम्यग्दर्शनाय, अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय, त्रयोदश-प्रकार-सम्यक्-चारित्राय अर्घ्य निर्वपामोति स्वाहा।

समुच्चय चौबीसी पूजा

वृषभ अभित संभव अभिनंदन, सुमति पदम सुपार्श्वजिनराय।
चन्द पुहुप शीतल श्रेयांस नमि, वासुपूज्य पूजित सुरराय॥
विमल अनन्त धर्मजस उज्ज्वल, शान्तिकुंथु अर मल्लिमनाय।
मुनिसुव्रत नमि नेमि पार्श्वप्रभु, वर्द्धमान पद पुष्प चढ़ाय॥ १॥

ॐ ह्री श्रीवृषभादिमहावीरांतचतुर्विंशतिजिनसमूह! अत्र अवतर अवतर सवौषट्, आह्वाननं।

ॐ ह्री श्री वृषभादिमहावीरांतचतुर्विशतिजिनसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ, ठः ठः, स्थापनं।

ॐ ह्री श्री वृषभादिमहावीरातचतुर्विशतिजिनसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्, सन्निधिकरणम्।

मुनिमन सम उज्ज्वल नीर, प्रासुक गंध भरा।
भरि कनक कटोरी धीर, दीनी धार धरा॥
चौबीसो श्रीजिनचंद, आनंदकंद सही।
पद जजत हरत भवफंद, पावत मोक्षमही॥ २॥

ॐ ह्री श्री वृषभादिवीरांतेभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं०

गोशीर कपूर मिलाय, केशर रंगभरी।
जिनचरनन देत चढाय, भवआताप हरी॥ चौबीसों। चंदनं॥

तंदुल सित सोमसमान, सुन्दर अनियारे।
मुक्ता फलकी उनमान, पुञ्जधरो प्यारे॥ चौ०। अक्षतं०॥
वरकञ्ज कदंव कुरड, सुमन सुगंध भरे।
जिन अग्र धरो गुनमड, कामकलङ्क हरे॥ चौ०। पुष्पं०॥
मनमोहनमोदक आदि, सुन्दर सद्य वने।
रसपूरित प्रासुक स्वाद, जजत क्षुधादि हने। चौ०। नैवेद्य ०॥
तमखडन दीप जगाय, धारो तुम आगे।
सव तिमिर मोह क्षयजाय, ज्ञानकला जागे॥ चौ०। दीपं॥
दशगध हुताशनमांहि, हे प्रभु खेवत हो।
मिस धूमकरम जरिजांहि, तुमपद सेवत हो॥ चौ०॥ धूपं॥
शुचि पक्व सुरस फल सार, सव ऋतुके ल्यायो।
देखत हगमनको प्यार, पूजत सुख पायो॥ चौ०। फल॥
जलफल आठो शुचिसार, ताको अर्घ करो।
तुमको अरपो भवतार, भवतरि मोक्ष वरो॥ चौ०॥ अर्घ्यं॥

जयमाला

दोहा—श्रीमत तीरथनाथपद, माथ नाय हित हेत।
गाऊ गुणमाला अवै, अजर अमरपद देत॥ १॥

घत्ता—

जय भवतमभञ्जन जनमनकञ्जन, रञ्जन दिनमनि स्वच्छ करा।
शिवमग परकाशक अरिगन-नाशक, चौवीसो जिनराज वरा॥२॥

पद्धरि छन्द

जय ऋषभदेव ऋषिगन नमंत, जय अजित जीत वसुअरि तुरंत।
जय संभव भवभय करत चूर, जय अभिनदन आनन्दपूर॥३॥
जय सुमति सुमतिदायक दयाल, जय पद्म पद्म-द्युति तन रसाल।
जय जय सुपास भवपासनाश, जय चंद चंद तनद्युतिप्रकाश॥४॥

जय पुष्पदन्त दुतिदंत सेत, जय शीतल शीतल गुन निकेत ।
जय श्रेयनाथ नुतसहसभुज्ज, जय वासवपूजित वासुपुज्ज ॥५॥
जय विमल विमलपद देनहार, जय जय अनंत गुनगन अपार ।
जय धर्म धर्म शिवशर्म देत, जय शांति शांति पुष्टी करेत ॥६॥
जय कुंथ कुंथवादिक रखेय, जय अर जिन वसु अरि क्षय करेय ।
जय मल्लि मल्ल हत मोहमल्ल, जय मुनिसुव्रत व्रतशल्ल दल्ल ॥७॥
जय नमि नित वासवनुत सपेम, जय नेमनाथ वृषचक्र नेम ।
जय पारसनाथ अनाथनाथ, जय वर्द्धमान शिवनगर साथ ॥८॥

घत्ता—चौबीस जिनंदा, आनन्दकंदा, पापनिकन्दा, सुखकारी ।
तिनपदजुगचंदा, उदय अमन्दा, वासव वंदा, हितधारी ॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिचतुर्विंशतिजिनेभ्यो महार्घ्यं निर्व० स्वाहा ॥

सोरठा—भुक्ति मुक्ति दातार, चौबीसो जिनराज वर ।
तिन पद मनवचधार, जो पूजे सो शिव लहैं ॥

(इत्याशीर्वादः । पुष्पाजंलि क्षिपेत्)

नोट—इन पूजाओं को कर लेने के पश्चात् वेदीमें विराजमान मूल-नायक भगवान तथा महावीर भगवानकी पूजा करनी चाहिए ।

व्रतों का अर्घ

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिनव्रतमहं यजे ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनभाषितव्रतेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

निर्वाणक्षेत्र पूजा

सोरठा—परम पूज्य चौबीस, जिहँ जिहँ थानक शिव गये ।
सिद्धभूमि निशदोस, मनवचतन पूजा करो ॥१॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थङ्कर-निर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र अवतरत अवतरत, संवौषट् , आह्वाननं ।

ॐ ह्री चतुर्विंशतितीर्थङ्कर-निर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठ. ठः स्थापनं ।

ॐ ह्री चतुर्विंशतितीर्थङ्कर-निर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र मम सन्निहितानि भवत भवत वषट् , सन्निधिकरणं ।

गीता छन्द

शुचि क्षीरदधि सम नीर निरमल, कनकझारी मे भरों ।
ससार पार उतार स्वामी, जोरकर बिनती करो ॥
सम्मेदगिर गिरनार चंपा, पावापुरि कैलाशकों ।
पूजों सदा चौबीसजिन निर्वाण भूमि निवासको ॥

ॐ ह्री श्रीचतुर्विंशतितीर्थङ्करनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो जल निर्व० ॥१॥

केशर कपूर सुगंध चदन, सलिल शीतल विस्तरो ।
भवतापको संताप मेटो, जोरकर विनतो करौ ॥सम्मेद०॥

ॐ ह्री श्रीचतुर्विंशतितीर्थङ्करनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो चदनं नि० ॥२॥

मोती समान अखड तदुल, अमल आनन्दधरि तरौ ।
औगुन हरौ गुन करौ हमको, जोरकर विनतो करौ ॥सम्मेद०॥

ॐ ह्री श्रीचतुर्विंशतितीर्थङ्करनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अक्षतान् नि० ॥३॥

शुभ फ़ूलरास सुवास वासित, खेद सब मन का हरौ ।
दुखधामकामविनाश मेरो, जोरकर विनती करों ॥सम्मेद०॥

ॐ ह्री श्रीचतुर्विंशतितीर्थङ्करनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो पुष्पं नि० ॥४॥

नेवज अनेक प्रकार जोग, मनोग धरि भय परिहरौ ।
यह भूखदूखन टार प्रभुजी, जोरकर विनती करो ॥सम्मेद०॥

ॐ ह्री श्रीचतुर्विंशतितीर्थङ्करनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो नैवेद्यं नि० ॥५॥

दोपक प्रकाश उजास उज्ज्वल, तिमिरसेती नहि डरौ ।
संशयविमोहविभ्रम तमहर, जोरकर विनती करौ ॥सम्मेद०॥

ॐ ह्री श्रीचतुर्विंशतितीर्थङ्करनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो दीपं निर्वपा० ॥६॥

शुभ धूप परम अनूप पावन, भाव पावन आचरौं।
सवकरमपुञ्ज जलाय दीज्यो, जोरकर विनती करौ ॥सम्मेद०॥
ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थङ्करनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो धूपं निर्वपा० ॥७॥
बहुफल मंगाय चढ़ाय उत्तम, चारगतिसों निरवरों।
निहचै मुकति फल देहु मौको, जोरकर विनती करौ ॥सम्मे०॥
ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थङ्करनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो फल निर्वपा० ॥८॥
जल गंध अक्षत पुष्प चरु फल, दीप धूपायन धरों।
'द्यानत' करो निरभय जगतसों, जोरकर विनती करो ॥स०॥
ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थङ्कर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं नि० ॥९॥

अथ जयमाला

श्री चौबीसजिनेश, गिरिकैलाशादिक नमों।
तीरथ महाप्रदेश, महापुरुष निरवाणतैं ॥
नमों ऋषभ कैलाशपहारं, नेमिनाथ गिरनार निहारं।
वासुपूज्य चंपापुर वंदौं, सनमति पावापुर अभिनंदौं ॥ २ ॥
वंदौं अजित अजित पददाता, वंदौं संभव भवदुखघाता।
वंदौं अभिनंदन गणनायक, वंदौं सुमति सुमति के दायक ॥ ३ ॥
वंदौं पदममुकति पदमाकर, वंदौं सुपास आशपासाहर।
वंदौं चंद्रप्रभु प्रभुचंदा, वंदौं सुविधि सुविधिनिधि कंदा ॥ ४ ॥
वंदौं शीतल अघतपशीतल, वंदौं श्रेयांस श्रेयांस महीतल।
वंदौं विमल विमल उपयोगी, वंदौं अनंत अनंत सुखभोगी ॥ ५ ॥
वंदौं धर्म धर्म-विस्तारा, वंदौं शांति शांतिमनधारा।
वंदौं कुंथु कुंथु-रखवालं, वंदौं अर अरिहर गुणमालं ॥ ६ ॥
वंदौं मल्लि काम मलचूरन, वंदौं मुनिसुव्रत व्रतपूरन।
वंदौं नमि जिन नमितसुरासुर, वंदौं पास पास भ्रमजगहर ॥ ७ ॥
बीसों सिद्धभूमि जा ऊपर, शिखर सम्मेद महागिरि भूपर।
एक बार वंदे जो कोई, ताहि नरकपशुगति नहि होई ॥ ८ ॥

नरगनि नृप सुरशक्र कहावे, तिहु जग भोग भोगि शिव जावे।
विघनविनाशक मंगलकारी, गुणविशाल वंदै नरनारी ॥ ६ ।

घत्ता–जो तीरथ जावे पापमिटावे, ध्यावे गावे भक्ति करे।
ताको जस कहिये, संपति लहिये, गिरिके गुण को बुध उचरें।
ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थङ्कर निर्वाण क्षेत्रेभ्यो पूर्णार्घ्यं नि०।१०

इत्याशीर्वादः ।

सप्तऋषि पूजा

छप्पय—प्रथम नाम श्रीमन्व दुतिय स्वरमन्व ऋषीश्वर।
तीसर मुनि श्रीनिचय सर्वसुन्दर चौथो वर॥
पंचम श्रीजयवान विनयलालस षष्ठम भनि।
सप्तम जयमित्राख्य सर्व चारित्रधाम गनि॥
ये सातों चारणऋद्धिधर, करूं तास पद थापना।
मैं पूजूं मनवचकायकरि, जो सुख चाहूँ आपना॥

ॐ ह्रीं चारण ऋद्धिधर श्रीसप्त ऋषीश्वराः ! अत्र अवतरत अवतरत संवौषट्, आह्वाननं। अत्र तिष्ठत २ ठः ठः, स्थापनं अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट्, सन्निधिकरणं।

अष्टक-गीताछन्द

शुभतीर्थउद्भव-जल अनूपम मिष्ट शीतल लायकें।
भवतृषा कंदनिकंदकारण, शुद्ध घट भरवायकें॥
मन्वादिचारणऋद्धिधारक, मुनिन की पूजा करूं।
ता करें पातिक हरें सारे सकल आनन्द विस्तरूं॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीमन्व, स्वरमन्व, निचय, सर्वसुन्दर, जयवान, विनयलालस, जयमित्र ऋषिभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

श्रीखंड कदलीनंद केशर, मंद मंद घिसायकैं। तसुगंध

प्रसरित दिगद्दिगंतर, भर कटोरी लायकै ।मन्वादि०॥२॥
ॐ ह्री श्रीमन्वादि चरण ऋद्धिधारी सप्तऋषिभ्यो चंदन नि० ।
अति धवल अक्षत खंड-वर्जित, मिष्ट राजत भोगके ।
कलधौत थारा भरत सुन्दर, चुनित शुभ उपयोग के ॥म ॥४॥
ॐ ह्री श्रीमन्वादि चारण ऋषिभ्यो अक्षतान् निर्व० ।
बहु वर्ण सुवरण सुमन आछे अमल कमल गुलाबके ।
केतकी चंपा चारु मरुआ, चुने निज कर चावके ।मन्वादि॥४॥
ॐ ह्री श्रीमन्वादि चारण ऋद्धिधारी सप्तऋषिभ्यो पुष्पं नि० ।
पकवान नानाभाँति चातुर, रचित शुद्ध नये नये ।
सद्‌मिष्ट लाडू आदि भरि बहु, पुष्टके थारा लिये ।मन्वादि.।५।
ॐ ह्री श्रीमन्वादि चारणऋद्धिधारी सप्तऋषिभ्यो नैवेद्यं नि० ।
कलधौत दीपक जड़ित नाना, भरित गोघृतसारसो ।
अति ज्वलितजगमग ज्योति जाकी, तिमिरनाशनहारसो ॥म.॥
ॐ ह्रीं श्रीमन्वादि चारण ऋद्धिधारी सप्तऋषिभ्यो दीपं नि० ।
दिक्‌चक्र गंधित होत जाकर, धूप दश अंगी कही ।
सो लाय मनवचकाय-शुद्ध, लगायकरि खेऊं सही ॥ म० ॥
ॐ ह्री श्रीमन्वादि चारण-ऋद्धिधारी सप्तऋषिभ्यो धूप नि ।
वर दाख खारक अमित प्यारे, मिष्ट चुष्ट चुनायकै ।
द्रावड़ी दाडिम चारु पुङ्गी, थाल भर भर लायकै ॥ मन्वादि ॥
ॐ ह्री श्रीमन्वादि चारण ऋद्धिधारी सप्तऋषिभ्यो फल नि. ।
जलगंधअक्षतपुष्पचरुव्र, दीप धूप सु लावना ।
फल ललित आठों द्रव्यमिश्रित, अर्घ कीजे पावना ॥म० ॥
ॐ ह्री श्रीमन्वादि चारण ऋद्धिधारी सप्तऋषिभ्यो अर्घ्यं नि. ।

अथ जयमाला। छन्द त्रिभगी

बंदूं ऋषिराजा, धर्मजहाजा, निजपरकाजा, करत भले ।
करुणाके धारी, गगन विहारी, दुख अपहारी, भरम दले ॥

काटत जगफंदा, भविजन वृन्दा, करत अनंदा चरणनमें।
जो पूजैं ध्यावैं मंगल गावैं, फेर न आवैं भववन मे ॥ १ ॥

छन्द पद्धरि

जय श्रीमनु मुनिराजा महंत, त्रस थावरकी रक्षा करन्त।
जय मिथ्यातम नाशक पतंग, करुणारसपूरित अंग अंग ॥ १ ॥
जय श्री स्वरमनु अकलङ्करूप, पद-सेव करत नित अमर भूप।
जय पञ्च अक्ष जीते महान, तप तपत देह कञ्चनसमान ॥ २ ॥
जय निचय सप्त तत्त्वार्थ भास, तप-रमातनों तन मे प्रकाश।
जय विषयरोध संबोध भान, परणति के नाशन अचल ध्यान ॥ ३
जय जयहि सर्वसुन्दर दयाल, लखि इन्द्रजालवतजगत जाल।
जय तृष्णाहारी रमण राम, जिन परणतिमैं पायो विराम ॥४॥
जय आनन्दघन कल्याणरूप, कल्याण करत सबको अनूप।
जय मद नाशन जयवान देव, निरमद विरचित सब करत सेव ॥५
जय जयहि विनयलालस अमान, सब शत्रु मित्र जानत समान।
जय कृशितकाय तपके प्रभाव, छवि छटा उडति आनन्द दाय ॥६
जय मित्र सकल जगके सुमित्र, अनगिनत अधम कीने पवित्र।
जय चन्द्रवदन राजीव-नैन, कबहूँ विकथा बोलत न बैन ॥७॥
जय सातों मुनिवर एकसंग, नित गगन गमन करते अभंग।
जय आये मथुरापुर मंझार, तहं मरी रोग को अति प्रचार ॥८॥
जय जय तिन चरणनिके प्रसाद, सब मरी देवकृत भई बाद।
जय लोक करै निर्भय समस्त, हम नमत सदा नित जोड़ हस्त ॥९
जय ग्रीष्मऋतु परवत मंझार, नित करत अतापन योगसार।
जय तृषापरीषह करत जेर, कहुं रञ्च चलत नहिं मनसुमेर ॥१०
जय मूल अठाइस गुणनधार, तप उग्र तपत आनन्दकार।
जय वर्षाऋतु में वृक्षतीर, अति शीतल झेलत है समीर ॥ ११

जव शीतकाल चौपट मंझार, कै नदी सरोवर तट विचार ।
जय निवसत ध्यानारूढ होय, रञ्चक नहिं मटकत रोम कोय ॥१२॥
जय मृतकासन वज्रासनीय, गोदूहन इत्यादिक गनीय ।
जय आसन नाना भांति धार, उपसर्ग सहत ममता निवार ॥१३॥
जय जपत तिहारो नाम कोय, लख पुत्र पौत्र कुलवृद्धि होय ।
जय भरे लक्ष अतिशय भडार, दारिद्र तनो दुख होय जार ॥१४॥
जय चोर अग्नि डाकिनि पिशाच, अरु ईति भीति सब नसत साच ।
जय तुम सुमरत सुखलहत लोक, सुरअसुर नवत पद देत धोक ॥१६

छन्द रोला—ये सातों मुनिराज, महातप लछमी धारी ।
परम पूज्य पद धरे, सकल जगके हितकारी ॥
जो मन वच तन शुद्ध होय सेवे औ ध्यावे ।
सो जन 'मनरंगलाल' अष्टऋद्धिन को पावे ॥१७॥

दोहा—नमन करत चरनन परत, अहो गरीबनिवाज ।
पञ्च परावर्तननितै, निरवारो ऋषिराज ॥१८॥
ॐ ह्रीं श्रीमन्वादि चारण ऋद्धिधारी सप्त ऋषिभ्यो पूर्णार्घ्यं नि०

पञ्च बालयती तीर्थङ्कर पूजा

दोहा—श्री जिन पञ्च अनंगजित, वासुपूज्य मलि नेम ।
पारसनाथ सुवीर अति, पूजूँ चित धरि प्रेम ॥

ॐ ह्रीं पञ्च बालयति तीर्थङ्कराः अत्रावतरावतरत संवौषट् आह्वाननं । अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः, स्थापनं । अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट्, सन्निधिकरणं ।

अथाष्टक—

शुचि शीतल सुरभि सुनीर, लायो भर झारी ।
दुख जामन मरन गहीर, याको परिहारी ॥

श्री वासुपूज्य मल्लि नेमि, पारस वीर अती।
नमुं मन वच तन धरि प्रेम पांचों बालयती ।। १ ।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य, मल्लिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ, महावीर स्वामी श्री पञ्च बालयती तीर्थङ्करेभ्यो नमः जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

चन्दन केशर करपूर, जल मे घसि आनो ।
भव तप भञ्जन सुखपूर, तुमको मैं जानो ।। श्री वासु० ।चदनं ।।
वर अक्षत विमल बनाय, सुवरण थाल भरे ।
बहु देश देश के लाय, तुम्हरी भेट धरे ।। श्री वासु० । अक्षतं ।।
यह काम सुभट अति सूर, मन में क्षोभ करो ।
मैं लायो सुमन हजूर, याको वेग हरो ।। श्री वासु० ।। पुष्पं ।।
षट्रस पूरित नैवेद्य, रसना सुखकारी ।
द्वय करम वेदनी छेद, आनन्द हूँ भारी ।। श्री वासु० ।। नैवेद्यं ।।
धरि दीपक जगमग ज्योति, तुम चरनन आगे ।
मम मोह तिमिर क्षय होत, आतमगुण जागे ।। श्री वासु० ।। दीपं ।।
ले दशविधि धूप अनूप, खेऊं गन्धमयी ।
दशबन्ध दहन जिन भूप, तुम हो कर्मजयी ।। श्री वासु० ।। धूपं ।।
पिस्ता अरु दाख बदाम, श्रीफल लेय घने ।
तुम चरन जजूं गुणधाम, द्यौसुख मोक्ष तने ।। श्री वासु० ।। फलं ।।
सजि वसुविधि द्रव्य मनोज्ञ, अरघ बनावत हैं ।
वसुकर्म अनादि सयोग, ताहि नशावत हैं ।। श्री वासु० ।। अर्घ्यं ।।

अथ जयमाल

दोहा—बाल ब्रह्मचारी भये, पांचों श्री जिनराज ।
तिनको अब जयमालिका, कहूं स्वपर हितकाज ।।१।।

जय जय जय जय श्रीवासुपूज, तुम सम जग में नहीं और दूज ।
तुम महा लक्ष सुर लोक छार, जब गर्भ मात माहीं पधार ।।२।।

षोडश स्वपने देखे सुमात, बल अवधि जान तुम जन्म तात ।
अति हर्षधार दम्पति सुजान, बहु दान दियो जाचक जनान ।।३।।
छप्पन कुमारिका कियो आन, तुम मात सेव बहु भक्ति ठान ।
छः मास अगाऊ गर्भ आय, धनिपति सुवरन नगरी रचाय ।।४।।
तुम मात महल आंगन मँझार, तिहुंकाल रतन धारा अपार ।
वरषाये षट् नव मास सार, धनिजिन पुरुषन नयनन निहार ।।५।।
जय मल्लिनाथ देवन सुदेव, शतइन्द्र करत तुम चरण सेव ।
तुम जन्मत ही त्रयज्ञान धार, आनन्द भयो तिहु जग अपार ।।६।।
तबही ले चहु विधि देव संग, सौधर्म इन्द्र आयो उमंग ।
सजि गज ले तुम हरि गोद आप, बन पाडुक शिल ऊपर सुथाप ।।७।।
क्षीरोदधि तैं बहु देव जाय, भरि जल घट हाथों-हाथ लाय ।
करि न्हवन वस्त्र भूषण सजाय, दे ताल नृत्य ताडव कराय ।।८।।
पुनि हर्ष धार हिरदै अपार, सब निर्जर रव जय जय उचार ।
तिस अवसर आनन्द हे जिनेश ! हम कहिबे समरथ नाहि लेश ।।९।।
जय जादोपति श्री नेमनाथ, हम नमत सदा जुग जोर हाथ ।
तुम व्याह समय पशुवन पुकार, सुन तुरत छुडाये दयाधार ।।१०।।
कर कंकण अरु सिरमौर बन्द, सो तोड भये छिन मे स्वछन्द ।
तबही लौकातिक देव आय, वैराग्य वर्द्धनी थुति कराय ।।११।।
तत्क्षण शिविका लायो सुरेन्द्र, आरूढ भये तापर जिनेन्द्र ।
सो शिविका निज कन्धन उठाय, सुरनर खग मिल तपवन ठैराय ।।१२।।
कचलौच वस्त्र भूषण उतार, भये जती नगन मुद्रा सुधार ।
हरि केश लेय रतनन पिटार, सो क्षीर उदधि माही पधार ।।१३।।
जय पारसनाथ अनाथ नाथ, सुर असुर नमत तुम चरण माथ ।
जुग नाग जरत कीनी सुरक्ष, यह बात सकल जग मे प्रत्यक्ष ।।१४।।
तुम सुरधनु सम लखि जग असार, तप तपत भये तन ममत क्षार ।
शठ कमठ कियो उपसर्ग आय, तुम मन सुमेरु नहि डगमगाय ।।१५।।
तुम शुक्ल ध्यान गहि खड्ग हाथ, अरि चार घातिया कर सुघात ।

उपजायो केवल ज्ञान भानु, आयो कुबेर हरि बच प्रमाण ।।१६।।
को समोसरण रचना विचित्र, तहा खिरत भई वाणी पवित्र ।
मुनि सुरनर खग तिर्यंच आय, सुन निज निज भाषा बोध पाय ।।१७।।
जय वर्द्धमान अन्तिम जिनेश, पायो न अन्त तुम गुण गणेश ।
तुम चार अघाती कर महान, लियो मोक्ष स्वयं सुखअचलथान ।।१८।।
तबही सुरपति बल अवधि जान, सब देवन युत बहु हर्ष ठान ।
सजि निज वाहन आयो सुतीर, जहँ परमौदारिक तुम शरीर ।।१९।।
निर्वाण महोत्सव कियो भूर, ले मलयागिर चन्दन कपूर ।
बहु द्रब्य सुगधित सरस सार, तामे श्री जिनवर वपु पधार ।।२०।।
निज अगनि कुमारिन मुकुट नाय, तिहँ रतननि शुचि ज्वाला उठाय ।
तिस सिर माही दीनी लगाय, सो भस्म सबन मस्तक चढाय ।।२१।।
अति हर्ष थकी रचि दीपमाल, शुभ रतनमयी दशदिश उजाल ।
पुनि गीत नृत्य बाजे बजाय, गुण गाय ध्याय सुरपति सिधाय ।।२१।।
सो नाथ अबै जग मे प्रत्यक्ष, नित होत दीपमाला सुलक्ष ।
हे जिन तुम गुण महिमा अपार, वसु सम्यग्ज्ञानादिक सुसार ।।२३।।
तुम ज्ञान मांहि तिहुंलोकदर्व, प्रतिबिम्बित है चर अचर सर्व ।
लहि आतम अनुभव परम ऋद्धि, भये वीतराग जग मे प्रसिद्ध ।।२४।।
ह्वै बालयती तुम सबन एम, अचिरज शिव कांता वरी केम ।
तुम परम शांति मुद्रा सु धार, किम अष्टकर्म रिपु को प्रहार ।।२५।।
हम करत बीनती बार बार, कर जोर स्व मस्तक धार धार ।
तुम भये भवोदधि पार पार, मोको सुवेग ही तार तार ।।२६।।
अरदास दास ये पूर पूर, वसु कर्म शैल चक चूर चूर ।
दुख सहन करन अब शक्ति नाहि, गहि चरण शरण कीजे निबाह ।।२७।।

चौ०—पाचों बालयति तीर्थेश, तिनकी यह जयमाल विशेष ।
मनवचकाय त्रियोग सम्हार, जे गावत पावत भवपार ।।२८।।

ॐ ह्रीं श्री पञ्च बालयति तीर्थङ्कर जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं ।।

दोहा—ब्रह्मचर्य सों नेह धरि, रचियो पूजन ठाठ ।
पांचों बाल यतीन को, कीजे नित प्रति पाठ ।।२६।।

इत्याशीर्वादः

*समुच्चय अर्घ्य

प्रभुजी अष्ट द्रव्य जु ल्यायो भाव सों,
प्रभु थांका हरष हरष गुण गाऊं महाराज ।
यो मन हरख्यो प्रभु थांको पूजाजो रे कारणे,
प्रभुजी थांको तो पूजा भवि जन नित करै,
ताका अशुभ कर्म कटजाय महाराज । यो मन० ।।१।।
प्रभूजी थांकी तो पूजा भवि जीव जो करै,
सो तो सुरग मुकतिपद पावै महाराज । यो मन० ।।२।।
प्रभूजी इन्द्र धरणेन्द्रजी सब मिलि गाय,
प्रभू का गुण को पार न पायो महाराज । यो मन० ।।३।।
प्रभूजी थे छो जी अनन्ताजो गुणवान,
थानै तो सुमरयां संकट परिहरै महाराज । यो मन० ।।४।।
प्रभुजी थे छो जी साहिब तीनो लोक का,
जिनराज मै छूं जी निपट अज्ञानी महाराज । यो मन० ।।५।।
प्रभूजी थांका तो रूपजी निरखन कारणे,
सुरपति रचिया छे नयन हजार महाराज । यो मन० ।।६।।
प्रभूजी नरक निगोद मे भव भव में रूल्यो,
जिनराज सहिया छे दुःख अपार महाराज । यो मन० ।।७।।
प्रभूजी अबतो शरणोजो थारो मै लियो,
किस विध कर पार लगाओ महाराज । यो मन० ।।८।।
प्रभूजी म्हारो तो मनडो थामेजी घुल रह्यो,
ज्यों चकरी बिच रेशम की डोरी महाराज । यो मन० ।।९।।

* मैं देव श्री अरहंत पूजूं, आदि अर्घ्य तथा शास्त्रोक्त विधि पूजा, शान्ति पाठ, विसर्जन पाठ दूसरे अध्याय के अन्त मे दिया है ।

प्रभूजी तीन लोक मे है जिन बिम्ब,
कृत्रिम अकृत्रिम चैत्यालय पूजस्या महाराज। यो मन०॥१०॥
प्रभूजी जल चन्दन अक्षत पुष्प नैवेद्य,
दीप धूप फल अर्घ्य चढाऊ महाराज।
जिन चैत्यालय महाराज, सब चैत्यालय जिनराज। यो मन० ॥११।
प्रभूजी अष्ट द्रव्य जु ल्यायो बनाय,
पूजा रचाऊं श्री भगवान की महाराज। यो मन० ॥१२॥

ॐ ह्री भावपूजा भाववंदना त्रिकालपूजा त्रिकालवदना करै करावै भावना भावै श्रीअरहतजी सिद्धजी आचार्यजी उपाध्यायजी सर्वसाधुजी पञ्चपरमेष्ठिभ्यो नम. प्रथमानुयोगकरणानुयोगचरणानुयोगद्रव्यानुयोगेभ्यो नम., दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो नमः उत्तमक्षमादि दशलाक्षणिकधर्मेभ्यो नमः, सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यग्चारित्रेभ्यो नम., जलके विषै, थलके विषै, आकाश के विषै, गुफा के विषै, पहाड के विषै, नगर-नगरी के विषै, ऊर्ध्वलोक-मध्य-लोक-पाताललोक विषै विराजमान कृत्रिम अकृत्रिम जिन चैत्यान्लय जिनबिम्बेभ्यो नम, विदेहक्षेत्रे विद्यमान बीस तीर्थङ्करेभ्यो नम., पाच भरत पाच ऐरावत दशक्षेत्र सम्बन्धी तीस चौबीसी के सातसौ बीस जिनालयेभ्यो नम., नदीश्वर द्वीप सम्बन्धी बावन जिन चैत्यालयेभ्यो नमः, पञ्चमेरु सम्बन्धी अस्सी जिन चैत्यालयेभ्यो नम., सम्मेदशिखर कैलाश चम्पापुर पावापुर गिरनार आदि सिद्धक्षेत्रेभ्यो नम. जैनबद्री मूडबद्री राजगृही शत्रुञ्जय तारङ्गा चमत्कार महावीर स्वामी पद्मपुरा आदि अतिशय क्षेत्रेभ्यो नम. श्री चारण ऋद्धिधारी सप्तपरमर्षिभ्यो नम ।

ॐ ह्री श्रीमत भगवन्तं कृपालसन्त श्रीवृषभादि महावीर पर्यन्त-चतुर्विशति-तीर्थङ्कर-परमदेवं आद्यानाआद्ये जम्बूद्वीपे भरत-क्षेत्रे आर्यखण्डे* ···· ······ ····नाम्नि नगरे मासानामुत्तमे मासे

* नगर या स्थान का नाम

……×मासे शुभे……+पक्षे" …शुभे…÷तिथौ…∽वासरे मुनि आर्यिकाणां श्रावक-श्राविकाना क्षुल्लक-क्षुल्लिकानां सकलकर्म-क्षयार्थं (जलधारा) अनर्घ्यपद प्राप्तये महार्घ्यं सम्पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

भावपूजा वंदनास्तव समेतं श्रीपञ्चमहागुरु भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(यहां पर कायोत्सर्ग पूर्वक नौ बार णमोकार मन्त्र का जपना चाहिए ।)

शांतिपाठ भाषा

शातिपाठ बोलते समय पुष्प क्षेपण करते रहना चाहिए ।

चौपाई १६ मात्रा

शांतिनाथ मुख शशि उनहारी । शील गुणव्रत संयमधारी ।।
लखन एक सौ आठ विराजै, निरखत नयन कमलदल लाजै ।।१।।
पञ्चम चक्रवर्ति पदधारी, सोलम तीर्थङ्कर सुखकारी ।
इन्द्र नरेन्द्र पूज्य जिन नायक, नमो शातिहित शांतिविधायक ।।२।।
दिव्य विटप पुहुपन की वरषा, दुन्दुभि आसन वाणी सरसा ।
छत्र चमर भामण्डल भारी, ये तुव प्रातिहार्य मनहारी ।।३।।
शांति जिनेश शांति सुखदाई, जगतपूज्य पूजो शिरनाई ।
परम शांति दीजे हम सबको, पढै तिन्हे पुनि चार सङ्घको ।।४।।

बसन्ततिलका

पूजैं जिन्हें मुकुट हार किरीट लाके ।
इन्द्रादि देव अरु पूज्य पदाब्ज जाके ।।
सो शांतिनाथ वरवंश जगत्प्रदीप ।
मेरे लिये करहि शांति सदा अनूप ।।५।।

इन्द्रवज्रा

संपूजकों को प्रतिपालकों को, यतीन को औ यतिनायको को ।

× महीन का नाम + कृष्ण या शुक्ल ÷ मिती ∽वार

राजा प्रजा राष्ट्र सुदेश को ले कीजै सुखी हे जिन शांति को दे ।।६।।

स्रग्धरा छन्द

होवै सारी प्रजा को सुख बलयुत हो धर्म-धारी नरेशा ।
होवे वर्षा समै पै तिलभर न रहे व्याधियों का अन्देशा ।।
होवै चोरी न जारी सुसमय वरते हो न दुष्काल भारी ।
सारे ही देश धारैं जिनवर वृषको जो सदा सौख्यकारी ।।७।।

दोहा—घातिकर्म जिन नाश करि, पायो केवलराज ।
शान्ति करो सब जगत मे, वृषभादिक जिनराज ।।

अथेष्ट प्रार्थना मन्दाक्रान्ता

शास्त्रो का हो पठन सुखदा लाभ सत्संगती का ।
सद्वृत्तो का सुजस कहके, दोष ढाकूँ सभीका ।।
बोलूं प्यारे वचन हित के, आपका रूप ध्याऊँ ।
तोलौ सेऊँ चरण जिनके मोक्ष जौलौं न पाऊँ ।।

आर्य्या

तव पद मेरे हियमे, मम हिय तेरे पुनीत चरणों मे ।
तबलौ लीन रहौ प्रभु, जबलौ पाया न मुक्ति पद मैने ।। १० ।।
अक्षर पद मात्रा से, दूषित जो कुछ कहा गया मुझसे ।
क्षमा करो प्रभु सो सब, करुणा करि पुनि छुडाहु भवदुख से ।।११।।
हेजगबन्धु जिनेश्वर, पाऊँ तव चरण शरण बलिहारी ।
मरण समाधि सुदुर्लभ, कर्मो का क्षय सुबोध सुखकारी ।। १२ ।।

(परिपुष्पाजलि क्षेपण)

यहा पर नौ बार णमोकार मंत्र जपना चाहिये ।

भजन

नाथ ! तेरी पूजा को फल पायो, मेरे यो निश्चय अब आयो ।।टेक।।
मेढ़क कमल पांखडी मुख ले, वीर जिनेश्वर धायो ।
श्रेणिक गज के पग तल मवो, तुरत स्वर्गपद पायो ।।नाथ।।१।।

मैनासुन्दरी शुभ मन सेती, सिद्धचक्र गुणगायो।
अपने पति को कोढ़ गमायो, गंधोदक फल पायो ॥ नाथ ॥ २ ॥
अष्टापद मे भरत नरेश्वर, आदिनाथ मन लायो।
अष्टद्रव्य से पूज्या प्रभूजी, अवधि ज्ञान दरशायो ॥ नाथ ॥ ३ ॥
अञ्जन से सब पापी तारे, मेरो मन हुलसायो।
महिमा मोटी नाथ तुम्हारी, मुक्तिपुरी 'सुखपायो ॥नाथ ॥ ४ ॥
थकि थकि हारे सुर नर खगपति, आगम सीख जितायो।
देवेन्द्र कीर्ति गुरु ज्ञान मनोहर, पूजा ज्ञान बतायो ॥ नाथ ॥ ५ ॥

भाषा स्तुति

तुम तरणतारण भवनिवारण, भविकमन आनन्दनो।
श्री नाभिनन्दन जगतवन्दन, आदिनाथ निरजनो ॥ १ ॥
तुम आदिनाथ अनादि सेऊं, सेय पदपूजा करूं।
कैलाश गिरि पर ऋषभ जिनवर, पदकमल हिरदै धरूं ॥ २ ॥
तुम अजितनाथ अजीत जीते, अष्टकर्म महाबली।
यह विरद सुनकर शरण आयो, कृपा कीज्यो नाथजी ॥ ३ ॥
तुम चन्द्रवदन सु चन्द्रलच्छन चन्द्रपुरी परमेश्वरो।
महासेननन्दन, जगतवन्दन चन्द्रनाथ जिनेश्वरो ॥ ४ ॥
तुम शांति पांचकल्याण पूजो, शुद्धमनवचकाय जू।
दुर्भिक्ष चोरी पापनाशन, विघन जाय पलाय जू ॥ ५ ॥
तुम बालब्रह्म विवेकसागर, भव्य कमल विकाशनो।
श्री नेमिनाथ पवित्र दिनकर, पापतिमिर विनाशनो ॥ ६ ॥
जिन तजी राजुल राजकन्या, कामसेन्या वश करी।
चारित्र रथ चढि भये दुलह, जाय शिवरमणी वरी ॥ ७ ॥
कंदर्प दर्प सुसर्पलच्छन, कमठ शठ निर्मद कियो।
अश्वसेननन्दन जगतवन्दन सकलसङ्घ मङ्गल कियो ॥ ८ ॥
जिनधरी बालकपणे दीक्षा, कमठ मान विदारकै।

इक अनेक की नही सख्या, नमूं सिद्ध निरञ्जनो ॥९॥
श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र के पद, मै नमो शिरधारकै।
तुम कर्मघाता मोक्षदाता, दीन जानि दया करो।
सिद्धार्थनन्दन जगतवन्दन, महावीर जिनेश्वरो ॥१०॥
छत्रत्रय सोहै सुरनर मोहै, बीनती अब धारिये।
करजोड़ि सेवक बीनवै प्रभु, आवागमन निवारिये ॥११॥
अब होउ भव भव स्वामि मेरे, मै सदा सेवक रहौ।
करजोड यो वरदान मागूं, मोक्षफल जावत लहौ ॥१२॥
जो एक मांही एक राजे, एक माहि अनेकनो।
इक अनेक की नही सख्या, नमूं सिद्ध निरञ्जनो ॥१३॥

चौपाई

मै तुम चरण कमल गुण गाय, बहुविधि भक्ति करों मनलाय।
जनम जनम प्रभु पाऊं तोहि, यह सेवाफल दीजे मोहि ॥१४॥
कृपा तिहारी ऐसी होय, जामन मरन मिटावो मोय।
बार बार मैं बिनती करूं, तुम से ये भवसागर तरूं ॥१५॥
नाम लेत सब दुख मिट जाय, तुम दर्शन देख्यो प्रभु आय।
तुम हो प्रभु देवन के देव, मै तो करूं चरण तव सेव ॥१६॥
जिन पूजा तैं सब सुख होय, जिन पूजा सम और न कोय।
जिन पूजा तैं स्वर्ग विमान, अनुक्रम तैं पावै निर्वाण ॥१७॥
मै आयो पूजन के काज, मेरो जनम सफल भयो आज।
पूजा करूं नमाऊं शीश, मम अपराध क्षमहु जगदीश ॥१८॥

दोहा—सुख देना दुख मेटना, यही तुम्हारी बान।
मो गरीब की बीनती, सुन लीज्यो भगवान ॥१९॥
पूजन करते देव की, आदि मध्य अवसान।
सुरगन के सुख भोगकर, पावै मोक्ष निदान ॥२०॥
जैसी महिमा तुमविषै, और धरै नहिं कोय।
जो सूरज मे ज्योति है, नहिं तारागण सोय ॥२१॥

नाथ तिहारे नाम तै, अघ छिनमांहि पलाय ।
ज्यों दिनकर प्रकाश तै, अंधकार विनशाय ।।२२।।
बहुत प्रशंसा क्या करूं, मै प्रभु बहुत अजान ।
पूजाविधि जानूं नही, शरण राखि भगवान ।।२३।।

इति भाषास्तुति

विसर्जन

दोहा—बिन जाने वा जानके, रही टूट जो कोय ।
तुव प्रसाद तै परमगुरु, सो सब पूरन होय ।।१।।
पूजनविधि जानौ नहीं, नहि जानौ आह्वान ।
और विसर्जनहू नही, क्षमा करो भगवान ।।२।।
मन्त्रहीन धनहीन हूं, क्रियाहीन जिनदेव ।
क्षमा करहु राखहु मुझे, देहु चरण की सेव ।।३।।
आये जो जो देवगन, पूजे भक्ति प्रमान ।
वे सब जावहु कृपा कर, अपने अपने स्थान ।।४।।

इत्याशीर्वादः

आशिका लेने का मन्त्र

दोहा—श्री जिनवर की आशिका, लीजे शीश चढ़ाय ।
भव भव के पातक कटे, दुःख दूर हो जाय ।।१।।

पर्व पूजा

पञ्चमेरु पूजा

गीता छन्द—तीर्थङ्करों के न्हवन-जलतै, भये तीरथ सर्वदा ।
तातैं प्रदच्छन देत सुरगन, पञ्चमेरुन की सदा ।।

दो जलधि ढाई द्वीप मे, सब गनत मूल विराजही।
पूजो असी जिनधाम प्रतिमा, होहि सुख दुख भाजही॥

ॐ ह्री पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह अत्रावतरावतर, संवौषट्। ॐ ह्री पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिन प्रतिमासमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। ॐ ह्री पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अथाष्टक। चौपाई आचलीबद्ध (१५ मात्रा)

शीतल मिष्ट सुवास मिलाय, जलसो पूजों श्रीजिनराय।
महा सुख होय, देखे नाथ परम सुख होय॥
पाचो मेरु असी जिनधाम, सब प्रतिमा को करों प्रणाम।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय॥१॥

ॐ ह्री सुदर्शनमेरु, विजयमेरु, अचलमेरु, मंदिरमेरु, विद्युन्मालीमेरु, पञ्चमेरुसम्बन्धि अस्सी जिनचैत्यालयेभ्यो जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥१॥

जल केसर कर्पूर मिलाय, गंधसों पूजों श्री जिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय॥पाचो०॥२॥

ॐ ह्री पञ्चमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो चंदनं नि.

अमल अखंड सुगंध सुहाय, अच्छत सो पूजों जिनराय।
महासुख होय. देखे नाथ परमसुख होय॥पाचो०॥३॥

ॐ ह्री पञ्चमेरुसम्बन्धि जिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो अक्षत नि.

वरण अनेक रहे महकाय, फूलनसो पूजो जिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय॥ पाचो०॥४॥

ॐ ह्री पञ्चमेरुसम्बन्धि जिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो पुष्पं नि०

मनवांछित बहु तुरत बनाय, चरुसो पूजों श्री जिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय॥ पाचो०॥५॥

ॐ ह्री पञ्चमेरुसबंधि जिनचैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो नैवेद्यम् नि०

तमहर उज्ज्वल जोति जगाय, दीपसो पूजो श्री जिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ।। पांचों० ।।६।।
ॐ ह्री पञ्चमेरुसम्बन्धि जिनचैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो दीपं नि०
खेऊं अगर परिमल अधिकाय, धूप सों पूजों श्री जिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ।। पांचो० ।। ७ ।।
ॐ ह्री पञ्चमेरुसम्बन्धि जिनचैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो धूप नि०
सुरस सुवर्ण सुगध सुहाय, फल सों पूजों श्री जिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ।। पांचों ।।८।।
ॐ ह्री पञ्चमेरुसम्बन्धि जिनचैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो फल नि०
आठ दरबमय अरघ बनाय, 'द्यानत' पूजों श्री जिनराय ।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ।। पाचों० ।।९।।
ॐ ह्रीं पञ्चमेरुसम्बंन्धि जिनचैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्य नि.

जयमाला (सोरठा)

प्रथम सुदर्शन स्वामि, विजय अचल मन्दिर कहा ।
विद्युन्माली नाम, पञ्चमेरु जग मे प्रकट ।।१।।
प्रथम सुदर्शन मेरु विराजे, भद्रशाल बन भूपर छाजे ।
चैत्यालय चारो सुखकारी, मनवचतन कर बदना हमारी ।।२।।
ऊपर पाच शतक पर सोहै, नन्दनवन देखत मन मोहै ।।चै०।।३।।
साढ़े बासठ सहस ऊंचाई, वन सुमनस शोभै अधिकाई ।चै०।४।
ऊंचा योजन सहस छतीसं, पाडुकवन सोहै गिरि शीशं ।चै०।५।
चारो मेरु समान बखानो, भूपर भद्रसाल चहुं जानों ।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मनवचतन कर वदना हमारी ।।६।।
ऊंचे पांच शतक पर भाषे, चारों नन्दनवन अभिलाषे ।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मनवचतन कर वंदना हमारी ।।७।।
साढे पचपन सहस उत्तंगा, बन सौमनस चार बहुरंगा ।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मनवचतन कर वंदना हमारी ।।८।।

उच्च अट्ठाइस सहस बताये, पाडुक चारो बन शुभ गाये।
चैत्यालय सोलह सुखकारी, मनवचतन कर वंदना हमारी ॥६॥
सुर नर चारन बंदन आवै, सो शोभा हम किम मुख गावैं।
चैत्यालय अस्सी सुखकारी, मनवचतन कर वदना हमारी ॥१०॥

दोहा—पञ्चमेरु की आरती, पढै सुनै जो कोय।
'द्यानत' फल जानै प्रभू, तुरत महासुख होय ॥११॥

ॐ ह्री पञ्चमेरुसम्वन्धिजिनचैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं।

नंदीश्वर द्वीप (अष्टाह्निका) पूजा

अडिल्ल छन्द

सर्व पर्व मे बडो अठाई पर्व है।
नंदीश्वर सुर जाहि लिये वसु दरव है॥
हमे सकति सो नाहि इहा करि थापना।
पूजो जिनगृह प्रतिमा है हित आपना॥

ॐ ह्री श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपञ्चाशज्जिनालयस्थ जिनप्रतिमासमूह ! अत्र अवतर अवतर, संवौपट्। अत्र तिष्ठ ठ: ठ:। अत्र मम सन्निहितो भव भव वपट्।

कञ्चन मणिमय भृङ्गार, तीरथ नीर भरा।
तिहुं धार दई निरवार, जामन मरन जरा॥
नन्दीश्वर श्रीजिनधाम, वावन पुञ्ज करो।
वसु दिन प्रतिमा अभिराम, आनंदभाव धरों ॥१॥

ॐ ह्री मासोत्तमे मासे...... मासे शुभे शुक्लपक्षे अष्टाह्निकायां महामहोत्सवे नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरे एक अञ्जनगिरि चार दधिमुख, आठ रतिकर, प्रतिदिशि तेरह तेरह वावन जिनचैत्यालयेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामोति स्वाहा।

भवतपहर शीतल वास, सो चन्दन नाही।
प्रभु यह गुन कीजे साच, आयो तुम ठाही ।। नंदो०।।२।।
ॐ ह्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरे चंदनं निर्वपामीति.।
उत्तम अक्षत जिनराज, पुञ्ज धरे सोहै।
सब जीते अक्षसमाज, तुम सम अरु को है ।। नदो०।।३।।
ॐ ह्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरे अक्षतान् निर्वपामीति.
तुम काम विनाशक देव, ध्याऊं फूलन सों।
लहि शील लक्ष्मी एव, छूटूं शूलन सों ।।नंदो०।।४।।
ॐ ह्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरे पुष्पं निर्वपामीति.
नेवज इन्द्रिय बलकार, सो तुमने चूरा।
चरु तुम ढिग सोहै सार, अचरज है पूरा ।।नंदो०।।५।।
ॐ ह्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरे नैवेद्यं निर्वपामीति.
दीपक की ज्योति प्रकाश, तुम तन माँहि लसै।
टूटै करमन की राश, ज्ञानकणी दरसै ।।नंदो०।।६।।
ॐ ह्री श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरे दीपं निर्वपामीति.
कृष्णागरु धूप सुवास, दशदिशि नारि वरै।
अति हरषभाव परकाश, मानों नृत्य करैं ।।नंदो० ।।७।।
ॐ ह्री श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरे धूपं निर्वपामीति.।
बहुविधफल ले तिहुंकाल, आनन्द राचत है।
तुम शिवफल देहु दयाल, सों हम जाचत है ।।नंदो०।।८।।
ॐ ह्री श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरे फल निर्वपा०
यह अर्घ्य कियो निज हेत, तुमको अरपत हों।
'द्यानत' कीनो शिवहेत, भूप समरपत हों ।।नंदी०।।९।।
ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरे अर्घ्यं निर्व०।

जयमाला (दोहा)

कार्तिक फागुन साढके, अंत आठ दिन माँहि।
नन्दीश्वर सुर जात है, हम पूजैं इह ठाँहि ।।१।।

छन्द

एकसौ त्रेसठ कोड़ि जोजन महा। लाख चौरासिया एकदिशिमे लहा। आठमों द्वीप नंदीश्वरं भास्वरं। भौन बावन्न प्रतिमा नमो सुखकरं॥ चारदिशि चार अञ्जनगिरि राजहीं, सहस चौरासिया एकदिशि छाजहीं। ढोलसम गोल ऊपर तले सुन्दरं ॥भौन०॥ ३॥ एक इक चार दिशि चार शुभ बावरी। एक इक लाख जोजन अमल जल-भरी। चहुंदिशा चार बन लाख जोजन वरं ॥भौन०॥ ४॥ सोल वापीन मधि सोलगिरि दधिमुखं। सहस दस महा जोजन लखत सुखकरं। बावरी कौण दोमाहि दो रतिकरं ॥भौन०॥ ५॥ शैल बत्तीस इक सहस जोजन कहे। चार सौले मिले सर्व बावन लहे॥ एक इक सीस पर एक जिन मन्दिरं ॥भौन०॥६॥ बिंब आठ एकसौ रतनमय सोह ही। देव देवी सरब नयन मन मोह ही। पाचसै धनुष तन पद्मआसन परं ॥भौन०॥७॥ लाल नख मुख नयन श्याम अरु श्वेत है। श्याम रङ्ग भौह सिर केश छवि देत है। वचन बोलत मनों हंसत कालुषहरं ॥भौन०॥८॥ कोटिशशि भानु दुति तेज छिप जात है। महा वैराग्य परिणाम ठहरात है। बयन नहि कहै लखि होत सम्यकधरं ॥भौन०॥९॥

सोरठा—नन्दीश्वर जिनधाम, प्रतिमा महिमा को कहै।
'द्यानत' लीनों नाम, यहै भगति सब सुख करै॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरे पूर्णार्घ्यं नि०

सोलहकारण पूजा

अडिल्ल–सोलहकारण भाय तीर्थङ्कर जे भये।
हरषे इन्द्र अपार मेरु पर ले गये॥
पूजाकरि निज धन्य लखों बहु चावसो।
हमहूँ 'षोडश कारण भावैं' भावसों॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् आह्वाननं, अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् सन्निधिकरणम् ।

अथाष्टकम्

कञ्चन झारी निर्मल नीर, पूजूं जिनवर गुण गंभीर ।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ।।
दर्श विशुद्धि भावना भाय, सोलह तीर्थङ्कर पद पाय ।
परम गुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धि १, विनयसम्पन्नता २, शीलव्रतेष्वनतीचार ३, अभीक्ष्णज्ञानोपयोग ४, संवेग ५, शक्तितस्त्याग ६, शक्तितस्तप ७, साधुसमाधि ८, वैयावृत्यकरण ९, अर्हद्भक्ति १०, आचार्यभक्ति ११, बहुश्रुतभक्ति १२, प्रवचनभक्ति १३, आवश्यकापरिहाणि १४, मार्गप्रभावना १५, प्रवचनवात्सल्य १६, इति षोडशकारणेभ्यो नमः जलम् ।

चदन घसों कपूर मिलाय, पूजूं श्रीजिनवर के पांय ।
परमगुरु हो जय जय नाथ परम गुरु हो ।।दर्श० ।।२।।
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो चन्दन ।। निर्वपा० ।।
तंदुल धवल अखंड अनूप, पूजूं जिनवर तिहुं जग भूप ।
परमगुरु हो जय जय नाथ परमगुरु हो ।। दर्श० ।। ३ ।।
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो अक्षतं निर्वपा० ।।
फूल सुगंध मधुप गुञ्जार पूजूं जिनवर जग आधार ।
परमगुरु हो जय जय नाथ परमगुरु हो ।। दर्श० ।। ४ ।।
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो पुष्पं निर्वपा० ।।
सज नेवज बहुविधि पकवान, पूजूं श्रीजिनवर गुणखान ।
परमगुरु हो जय जय नाथ परमगुरु हो ।। दर्श० ।। ५ ।।

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो नैवेद्यम् निर्वपा० ॥

दीपक ज्योति तिमिर क्षयकार, पूजूं श्रीजिन केवलधार ।
परमगुरु हो जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्श० ॥ ६ ॥

ॐ ह्री दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो दीपं निर्वपा. ॥

अगर कपूर गंध शुभ खेय, श्री जिनवर आगे महकेय ।
परमगुरु हो जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्श ॥ ७ ॥

ॐ ह्री दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो धूपम् निर्वपा ॥

श्रीफल आदि बहुत फल सार, पूजूं जिन वांछित दातार
परमगुरु हो जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्श ॥ ८ ॥

ॐ ह्री दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो फलं निर्वपा. ॥

जल फल आठो द्रव्य चढाय, 'द्यानत' बरत करो मनलाय ।
परमगुरु हो जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्श० ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपा० ॥

जाप—ॐ ह्री दर्शनविशुद्धये नमः, ॐ ह्री विनयसम्पन्नतायै नमः, ॐ ह्री शीलव्रताय नमः, ॐ ह्री अभीक्ष्णज्ञानोपयोगाय नमः ॐ ह्री सम्वेगाय नमः, ॐ ह्री शक्तितस्त्यागाय नमः, ॐ ह्री शक्तितस्तपसे नमः, ॐ ह्री साधुसमाध्यै नमः, ॐ ह्रीं वैयावृत्यकरणाय नमः, ॐ ह्री अर्हद्भक्त्यै नम. ॐ ह्री आचार्यभक्त्यै नमः, ॐ ह्री बहुश्रुतभक्त्यै नमः, ॐ ह्री प्रवचनभक्त्य नमः, ॐ ह्री आवश्यकापरिहाण्यै नम., ॐ ह्री मार्गप्रभावनायै नम., ॐ ह्री प्रवचनवत्सलत्वाय नम. ।

जयमाला

दोहा—षोडशकारण गुण करै, हरै चतुरगति वास ।
पाप पुण्य सब नाश कै, ज्ञान भानु परकास ॥

चौपाई

दर्श विशुद्धि धरे जो कोई, ताको आवागमन न होई ।

विनय महा धारे जो प्राणी, शिव वनिता की सखी बखानो ।।२।।
शील सदा दृढ जो नर पाले, सो औरन की आपद टाले ।
ज्ञान अभ्यास करे मन मांही, ताके मोह महातम नाही ।।३।।
जो संवेग भाव विस्तारे, स्वर्ग मुक्ति पद आप निहारै ।
दान देय मन हर्ष विशेषै, इह भव यश परभव सुख देखै ।।४।।
जो तप तपै खपै अभिलाषा, चूरे कर्म शिखर गुरु भाषा ।
साधु समाधि सदा मन लावै, तिहु जग भोग भोगि शिव जावै ।।५।
निशि दिन वैयावृत्य करैया, सो निश्चय भवनीर तरैया ।
जो अरहन्त भक्ति मन आनैं, सो जन विषय कषाय न जानै।।६।।
जो आचारज भक्ति करै है, सो निरमल आचार धरै है ।
बहुश्रुतवन्त भक्ति जो करई, सो नर संपूरण श्रुत धरई ।।७।।
प्रवचन भक्ति करै जो ज्ञाता, लहै ज्ञान परमानन्द दाता ।
षठ्आवश्य काल जो साधै, सो ही रत्नत्रय आराधै ।।७।।
धर्म प्रभाव करे जो ज्ञानो, तिन शिव मारग रीति पिछानो ।
वात्सल अंग सदा जो ध्यावे, सो तीर्थङ्कर पदवी पावै ।। ६ ।।

दोहा—ये हो षोडश भावना, सहज धरै व्रत जोय ।
देव इन्द्र नागेन्द्र पद, 'द्यानत' शिव पद होय ।।

ॐ ह्री दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपा० ।

सवैया तेईसा

सुन्दर षोडशकारण भावना निर्मल चित्त सुधारक धारै,
कर्म अनेक हने अति दुर्धर जन्म जरा भय मृत्यु निवारै ।
दुःख दरिद्र विपत्ति हरै भवसागर को पर पार उतारै,
'ज्ञान' कहे यहि षोडशकारण कर्म निवारण सिद्धि सुधारै ।।

इत्याशीर्वादः ।

दशलक्षणधर्म पूजा

उत्तम छिमा मार्दव आर्जव भाव है।
सत्य शौच संयम तप त्याग उपाव है॥
आकिंचन ब्रह्मचर्य धरम दश सार हे।
चहुगति दुखतैं काढि मुकति करतार है॥

ॐ ह्री उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म । अत्रावतरावतर । संवौषट् ।
ॐ ह्री उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठ ।
ॐ ह्री उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म । अत्र मम सन्निहितो भव२ वषट्.

सोरठा—हेमाचल की धार, मुनिचित सम शीतल सुरभि।
भव आताप निवार, दशलक्षण पूजो सदा॥ १॥

ॐ ह्री उत्तमक्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, संयम, तप, त्याग, आकिंचन्य, ब्रह्मचर्यादिदशलक्षणधर्माय जल नि० ॥२॥

चन्दन केशर गार, होय सुवास दशो दिशा।
भव आताप निवार, दशलक्षण पूजो सदा॥ २॥

ॐ ह्री उत्तम क्षमादिदशलक्षणधर्माय चदनम् निर्वपा०॥

अमल अखडित सार, तंदुल चन्द्र समान शुभ।
भव आताप निवार, दशलक्षण पूजो सदा॥ ३॥

ॐ ह्री उत्तम क्षमादिदशलक्षणधर्माय अक्षतान् निर्वपा०॥

फूल अनेक प्रकार, महकै ऊरधलोक लो।
भव आताप निवार, दशलक्षण पूजो सदा॥ ४॥

ॐ ह्री उत्तम क्षमादिदशलक्षणधर्माय पुष्प निर्वपा०॥

नेवज विविध निहार, उत्तम षटरस संजुगत।
भव आताप निवार, दशलक्षण पूजो सदा॥ ५॥

ॐ ह्री उत्तम क्षमादिदशलक्षणधर्माय नैवेद्यम् निर्वपा०॥

वाति कपूर सुधार, दीपक जोति सुहावनी।
भव आताप निवार, दशलक्षण पूजों सदा॥ ६॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादिदशलक्षणधर्माय दीपं निर्वपा० ॥

अगर धूप विस्तार, फैले सर्व सुगन्धता ।
भव आताप निवार, दशलक्षण पूजौं सदा ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय धूपं निर्वपा० ॥

फलकी जाति अपार, घ्रान नयन मनमोहनो ।
भव आताप निवार, दशलक्षण पूजौं सदा ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय फलं निर्वपा० ॥

आठों दरब संवार, द्यानत अधिक उछाह सों ।
भव आताप निवार, दशलक्षण पूजो सदा ॥९॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अर्घ्यं निर्वपा० ॥

अङ्ग पूजा

सोरठा—पीड़ैं दुष्ट अनेक, बांधि मार बहुविधि करे ।
धरिये छिमा विवेक, कोप न कीजे पीतमा ॥ १ ॥

चौपई मिश्रित गीता छन्द ।

उत्तम छिमा गहो रे भाई, इह भव जस परभव सुखदाई ।
गाली सुनि मन खेद न आनो, गुन को औगुन कहै अयानो ॥
कहि है अयानो वस्तु छीने, बांध मार बहु विधि करैं ।
घरते निकारैं तन विदारैं, वैर जो न तहां धरैं ॥
जे करम पूरब किये खोटे, सहै क्यों नहि जीयरा ।
अति क्रोध अगनि बुझाय प्रानी, साम्य जल ले सीयरा ॥१॥

ॐ ह्रीं उत्तमक्षमाधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

मान महाविषरूप, करहि नीचगति जगत मे ।
कोमल सुधा अनूप, सुख पावै प्राणी सदा ॥

उत्तम मार्दवगुन मन माना, मान करन को कौन ठिकाना ।
वस्यो निगोद माहितैं आया, दमरी रूकन भाग विकाया ॥

रूकन बिकाया भाग वशतै, देव इकइन्द्रो भया।
उत्तम मुआ चाण्डाल हुआ, भूप कीडो मे गया।
जीतव्य-यौवन-धन-गुमान, कहा करे जल बुदबुदा।
करि विनय बहुगुन बडे जनको, ज्ञानका पावै उदा॥
ॐ ह्री उत्तममार्दवधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥
कपट न कीजै कोय, चोरन के पुर ना बसे।
सरल सुभावी होय, ताके घर बहु संपदा॥
उत्तम आर्जवरीति बखानी रञ्चक दगा बहुत दुखदानी।
मनमे होय सो वचन उचरिये, वचन होय सो तनसौ करिये॥
करिये सरल तिहुँ जोग अपने, देख निरमल आरसी।
मुख करै जैसा लखै तैसा, कपट प्रीति अगारसी॥
नहि लहै लछमी अधिक छलकर, करमबंध विशेषता।
भय त्याग दूध बिलाव पीवै, आपदा नहि देखता॥३॥
ॐ ह्री उत्तमआर्जवधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
कठिन बचन मत बोल, परनिन्दा अरु झूठ तज।
साच जवाहर खोल, सतवादी जगमे सुखी॥
उत्तम सत्यवरत पालीजे, पर विश्वासघात नहि कीजै।
साचे झूठे मानुष देखो, आपन पूत स्वपास न पेखो॥
पेखो तिहायत पुरुष साचे को, दरब सब दीजिये।
मुनिराज श्रावक की प्रतिष्ठा, सांच गुन लख लीजिये॥
ऊंचे सिंहासन बैठि वसुनृप, धरम का भूपति भया।
वच झूठसेती नरक पहुँचा, सुरग मे नारद गया॥
ॐ ह्री उत्तमसत्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥
धरि हिरदै संतोष, करहु तपस्या देहसौ।
शौच सदा निरदोष, धरम बडो संसार मे॥
उत्तम शौच सर्व जग जानो, लोभ पापको बाप बखानो।

आसा-फास महा दुखदानो, सुख पावै संतोषी प्रानी ॥
प्रानी सदाशुचि शील जप तप, ज्ञान ध्यान प्रभावतैं ।
नित गंगजमुन समुद्र न्हाये, अशुचिदोष सुभावतै ॥
ऊपर अमल मल भर्यौ भीतर, कौन विधि घट शुचि कहै ।
बहु देह मैली सुगुण थैली, शौच-गुन साधु लहै ॥ ५ ॥
ॐ ह्रीं उत्तमशौचधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
काय छहों प्रतिपाल, पंचेन्द्री मन वश करो ।
सञ्जमरतन संभाल, विषयचोर बहु फिरत हैं ॥
उत्तम संयम गहु मन मेरे, भव-भव के भाजैं अघ तेरे ।
सुरग-नरकपशुगति मे नाहीं, आलस हरन करन सुख ठाहीं ॥
ठाहीं पृथ्वी जल अग्नि मारुति, रूंख त्रस करुना धरो ।
सपरसन रसना घ्रान नैना, काम मन सब वश करो ॥
जिस बिना नहिं जिनराज सीझे, तू रुल्यो जग कीचमे ।
इक घरी मत विसरो करो नित, आयु जममुख बीच मे ॥६॥
ॐ ह्रीं उत्तमसंयमधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
तप चाहैं सुरराय, करमशिखर को वज्र है ।
द्वादशविधि सुखदाय, क्यों न करे निज शक्तिसम ॥
उत्तम तप सब माहिं बखाना, करमशिखर को वज्र समाना ।
बस्यो अनादि निगोद मंझारा, भूविकलत्रय पशुतन धारा ॥
धारा मनुषतन महा दुर्लभ, सुकुल आयु नीरोगता ।
श्री जैनवानी तत्त्वज्ञानी, भई विषयपयोगता ॥
अति महादुरलभ त्याग विषय, कषाय जो तप आदरैं ।
नर भव अनूपम कनक घर पर, मणिमयी कलसा धरैं ॥७॥
ॐ ह्रीं उत्तमतपधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
दान चार परकार, चार सङ्घ को दीजिये ।
धन बिजली उनहार, नरभव लाहो लीजिये ॥

उत्तम त्याग कह्यो जग सारा, औषधि शास्त्र अभय आहारा।
निहचै रागद्वेष निरवारे, ज्ञाता दोनो दान संभारै ॥

दोनो संभारै कूप जलसम, दरव घरमे परनिया।
निज हाथ दीजे साथ लीजे, खाया खोया वह गया।
धनि साध शास्त्र अभयदिवैया, त्याग राग विरोध को।
बिन दान श्रावक साधु दोनो, लहै नांही बोधको ॥८॥

ॐ ह्री उत्तमत्यागधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परिग्रह चौबिस भेद, त्याग करै मुनिराजजी।
तिसनाभाव उछेद, घटती जान घटाइये॥

उत्तम आकिचन गुण जानो, परिग्रह चिन्ता दुखही मानो।
फास तनकसी तनमे सालै, चाह लंगोटी की दुख भालै॥

भालै न समता सुख कभी नर, विना मुनि-मुद्रा धरै।
धनि नगन परवत नगन ठाड़े, सुर असुर पायनि परै॥
घरमाहि तृष्णा जो घटावे, रुचि नही ससारसौ।
बहु धन बुरा हू भला कहिये, लीन पर उपकारसौ ॥९॥

ॐ ह्री उत्तम आकिञ्चन्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

शील-बाडि नौ राखि, ब्रह्मभाव अन्तर लखो।
करि दोनो अभिलाख, करहु सफल नर भव सदा॥

उत्तम ब्रह्मचर्य मन आनौ, माता बहिन सुता पहिचानौ।
सहै वान वर्षा बहु सूरे, टिकै न नयन-बान लखि कूरे॥

कूरे तियाके अशुचितन मे, काम रोगी रति करै।
बहु मृतक सडहि मसानमाही, काक ज्यो चोचें भरै॥
ससार मे विषवेलि नारी, तजि गये जोगीश्वरा।
'द्यानत' धरम दश पेडि चढिके, शिवमहल मे पग धरा ॥१०

ॐ ह्री उत्तमब्रह्मचर्यधर्माङ्गाय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा—दश लच्छन बन्दो सदा, मनवाछित फलदाय ।
कहौ आरती भारतो, हम पर होहु सहाय ।। १ ।।

वेसरी छन्द

उत्तम छिमा जहां मन होई, अन्तर बाहर शत्रु न कोई ।
उत्तम मार्दव विनय प्रकासै, नाना भेद ज्ञान सब भासै ।। १ ।।
उत्तम आर्जव कपट मिटावै, दुरगति त्यागि सुगति उपजावै ।
उत्तम सत्य वचन मुख बोलै, सो प्रानी ससार न डोलै ।। २ ।।
उत्तम शौच लोभ परिहारी, संतोषी गुरा रतन भंडारी ।
उत्तम संयम पालै ज्ञाता, नरभव सफल करै ले साता ।। ३ ।।
उत्तम तप निरवाछित पाले, सो नर करम शत्रु को टाले ।
उत्तम त्याग करै जो कोई, भोग भूमि सुर शिवसुख होई ।। ५ ।।
'उत्तम आकिचन व्रत धारैं, परमसमाधि दशा विस्तारै ।
उत्तम ब्रह्मचर्य मन लावै, नरसुर सहित मुकतिफल पावै ।।

दोहा—करे करमकी निरजरा, भवपींजरा विनाशि ।
अजर अमरपदको लहै, 'द्यानत' सुखकी राशि ।।

ॐ ह्री उत्तमक्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, सयम, तप, त्याग आकिचन्य, ब्रह्मचर्यदशलक्षरा धर्माय पूर्णार्घ्यं निर्वपामोति स्वाहा ।

स्वयंभूस्तोत्र भाषा

चौपाई ।

राजविषै जुगलनि सुख कियो, राजत्याग भुवि शिवपद लियो ।
स्वयं बोध स्वयम्भू भगवान, बन्दौ आदिनाथ गुराखान ।। १ ।।
इन्द्र छीरसागर-जल लाय, मेरु न्हवाये गाय बजाय ।
मदन विनाशक सुख करतार, बन्दौ अजित अजितपदकार ।।२।।

शुक्ल ध्यानकरि करमविनाशि, घाति अघाति सकल दुखराशि।
लह्यो मुकतिपद सुख अधिकार, बन्दौ संभव भवदुख टार ॥३॥
माता पच्छिम रयनमंझार, सुपने सोलह देखे सार।
भूप पूछि फल सुनि हरषाय, बन्दौ अभिनन्दन मनलाय ॥ ४ ॥
सर्व कुवादवादी सरदार, जीते स्यादवादधुनिधार।
जैन धरम परकाशक स्वामि, सुमतिदेवपद करहुं प्रणामि ॥ ५ ॥
गर्भ अगाऊ धनपति आय, करी नगर शोभा अधिकाय।
बरसे रतन पंचदश मास, नमौ पदमप्रभु सुखकी रास ॥ ६ ॥
इन्द फनिन्द नरिन्द त्रिकाल, बानी सुनि सुनि होहि खुस्याल।
द्वादश सभा ज्ञानदातार, नमौ सुपारसनाथ निहार ॥ ७ ॥
सुगुन छियालिस है तुम माहि, दोष अठारह कोऊ नाहि।
मोह महातमनाशक दीप, नमो चन्द्रप्रभु राख समीप ॥ ८ ॥
द्वादश विध तप करम विनाश, तेरह भेद चरित परकाश।
निज अनिच्छ भवि इच्छकदान, बन्दौ पहुपदन्त मन आन ॥९॥
भविसुखदाय सुरगतै आय, दशविध धरम कह्यो जिनराय।
आप समान सबनि सुख देह, बन्दौ शीतल धरम सनेह ॥ १० ॥
समता सुधा कोपविष नाश, द्वादशाङ्ग बानी परकाश।
चारसङ्घ-आनन्द-दातार, नमौ श्रेयास जिनेश्वर सार ॥ ११ ॥
रतनत्रय चिर मुकुट विशाल, सोभै कण्ठ सुगुन मनिमाल।
मुक्तिनार-भरता भगवान, वासुपूज्य बन्दौ धर ध्यान ॥ १२ ॥
परम समाधि-स्वरूप जिनेश, ज्ञानी ध्यानी हित उपदेश।
कर्मनाशि शिवसुख विलसत, बन्दौ विमलनाथ भगवन्त ॥ १३ ॥
अन्तर बाहिर परिग्रह डारि, परम दिगम्बरव्रतको धारि।
सर्व जीवहित-राह दिखाय, नमों अनन्त वचन मन लाय ॥१४॥
सात तत्त्व पंचासति काय, अरथ नवों छ-दरब बहुभाय।
लोक अलोक सकल परकाश, बन्दौ धर्मनाथ अविनाश ॥ १५ ॥

पंचम चक्रवर्त्ति निधिभोग, कामदेव द्वादशम मनोग।
शान्तिकरन सोलम जिनराय, शान्तिनाथ बन्दों हरषाय।। १६।।
बहु थुति करै हरष नहिं होय, निन्दे दोष गहै नहिं कोय।
शीलवान परब्रह्मस्वरूप, बन्दौं कुंथुनाथ शिवभूप ।। १७।।
द्वादशगण पूजै सुखदाय, थुति बन्दना करै अधिकाय।
जाकी निज थुति कबहुं न होय, बन्दौं अरजिनवर-पद दोय।।१८।।
परभव रतनत्रय-अनुराग, इह भव ब्याह-समय बैराग।
बालब्रह्मपूरनव्रतधार, बन्दौ मल्लिनाथ जिनसार ।। १९।।
बिन उपदेश स्वयं वैराग, थुति लोकांत करै पगलाग।
नमः सिद्ध कहि सब व्रत लेहि, बन्दौ मुनिसुव्रत व्रत देहि।।२०।।
श्रावक विद्यावंत विहार, भगतिभावसों दियो आहार।
बरसी रतनराशि ततकाल, बन्दौ नमिप्रभु दीनदयाल।। २१।।
सब जीवन की बन्दी छोर, रागद्वेष द्वै बन्धन तोर।
रजमति तजि शिवतिय सों मिले, नेमिनाथ बन्दौ सुख-निले।।२२।।
दैत्य कियो उपसर्ग अपार, ध्यान देखि आयो फनिधार।
गये कमठ शठ मुख कर श्याम, नमो मेरुसम पारस स्वामि।।२३।।
भवसागरतै जीव अपार, धरमपोत मे धरे निहार।
डूबत काढ़े दया विचार, वर्द्धमान बन्दौ बहुबार।। २४।।

दोहा—चौबीसों पद कमलजुग, बन्दौ मनवचकाय।
'द्यानत' पढै सुनै सदा, सौ प्रभु क्यों न सहाय।।

।। इति ।।

रत्नत्रय पूजा

दोहा—चहुगतिफणिविषहरनमणि, दुख पावक जलधार।
शिवसुख सुधा सरोवरी, सम्यक्त्रयी निहार।।१।।
ॐ ह्री सम्यग्रत्नत्रय! अत्रावतरावतर, संवौषट्। ॐ ह्रीं

सम्यग्रत्नत्रय ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । ॐ ह्री सम्यग्रत्नत्रय ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

सोरठा—क्षीरोदधि उनहार, उज्ज्वल जल अति सोहनो ।
जनम रोग निरवार, सम्यक्रत्नत्रय भजो ॥२॥

ॐ ह्री सम्यग्रत्नत्रयाय जन्म जरामृत्यु विनाशनाय जलं नि० ।

चन्दन केशरगार, परिमल महा सुगन्धमय ।
जनम रोग निरवार, सम्यक्रत्नत्रय भजो ॥ ३ ॥

ॐ ह्री सम्यग्रत्नत्रयाय भवतापविनाशनाय चन्दनं नि० ।

तंदुल अमल चिनार, वासमति सुखदायके ।
जनम रोग निरवार, सम्यक्रत्नत्रय भजों ॥४॥

ॐ ह्री सम्यग्रत्नत्रयाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० ।

महकें फ़ल अपार, अलि गुंजे ज्यो थुति करे ।
जनम रोग निरवार, सम्यक्रत्नत्रय भजो ॥५॥

ॐ ह्री सम्यग्रत्नत्रयाय कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं नि० ।

लाडू बहु विस्तार, चीकन मिष्ट सुगन्धयुक्त ।
जनमरोग निरवार, सम्यक्रत्नत्रय भजो ॥६॥

ॐ ह्री सम्यग्रत्नत्रयाय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्य नि० ।

दीप रतनमय सार, जोति प्रकाशै जगत मे ।
जनम रोग निरवार, सम्यक्रत्नत्रय भजो ॥ ७ ॥

ॐ ह्री सम्यग्रत्नत्रयाय मोहान्धकार विनाशनाय दीप नि. ।

धूप सुवास विथार, चन्दन अगर कपूर की ।
जनम रोग निरवार, सम्यक्रत्नत्रय भजो ॥ ८ ॥

ॐ ह्री सम्यग्रत्नत्रयाय अष्टकर्मविनाशनाय धूपं नि ।

फल शोभा अधिकार, लोंग छुहारे जायफल ।
जनम रोग निरवार, सम्यक्रत्नत्रय भजों ॥ ९ ॥

ॐ ह्री सम्यग्रत्नत्रयाय मोक्षफलप्राप्तये फल नि ।

आठ दरब निरधार, उत्तमसो उत्तम लियो।
जनम रोग निरवार, सम्यक्‌रत्‍नत्रय भजों ॥ १० ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्‍नत्रयाय अनर्घ्य पदप्राप्तये अर्घ्यं नि.।
सम्यक्‌दर्शनज्ञान, व्रत शिवमग तीनो मयी।
पार उतारण जान, 'द्यानत' पूजो व्रत सहित ॥
ॐ ह्रीं सम्यग्रत्‍नत्रयाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दर्शनपूजा

दोहा—सिद्ध अष्टगुण मय प्रकट, मुक्त जीव सोपान।
ज्ञान चरित्र जिहं बिन अफल, सम्यग्दर्श प्रधान ॥ १ ॥
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शन ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शन ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शन ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्
सोरठा—नीर सुगंध अपार, तृषा हरै, मल छय करै।
सम्यक्‌दर्शनसार, आठ अङ्ग पूजो सदा ॥ १ ॥
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय जलं नि०।
जल केशर घनसार, ताप हरै शीतल करै।
सम्यक्‌दर्शनसार, आठ अङ्ग पूजों सदा ॥ २ ॥
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय चदनं नि०।
अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै।
सम्यक्‌दर्शनसार, आठ अङ्ग पूजो सदा ॥ ३ ॥
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अक्षतान् नि०।
पुहुप सुवास उदार खेद हरै मन शुचि करै।
सम्यक्‌दर्शनसार, आठ अङ्ग पूजो सदा ॥ ४ ॥
ॐ ह्रीं अष्टांगसम्यग्दर्शनाय पुष्पं नि०।
नेवज विविध प्रकार, क्षुधा हरै थिरता करै।
सम्यक्‌दर्शनसार, आठ अङ्ग पूजो सदा ॥ ५ ॥

ॐ ह्री अष्टागसम्यग्दर्शनाय नैवेद्यं नि० ।

दीप ज्योति तमहार, घटपट परकाशै महा ।
सम्यक्दर्शनसार, आठ अङ्ग पूजौ सदा ॥ ६ ॥

ॐ ह्री अष्टागसम्यग्दर्शनाय दीपं नि० ।

धूप घ्रानसुखकार, रोग विघन जडता हरै ।
सम्यक्दर्शनसार, आठ अङ्ग पूजौं सदा ॥ ७ ॥

ॐ ह्री अष्टागसम्यग्दर्शनाय धूपं नि० ।

श्रीफल आदि विथार, निहचै सुरशिव फल करै ।
सम्यक्दर्शनसार, आठ अङ्ग पूजौ सदा ॥ ८ ॥

ॐ ह्री अष्टागसम्यग्दर्शनाय फल नि० ।

जल गन्धाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु ।
सम्यक्दर्शनसार, आठ अङ्ग पूजौ सदा ॥ ६ ॥

ॐ ह्री अष्टांगसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं नि० ।

जयमाला (दोहा)

आप आप निहचै लखैं, तत्त्व प्रीति व्योहार ।
रहित दोष पच्चीस है, सहित अष्टगुन सार ॥१०॥

चौपाई मिश्रित गीता छन्द ।

सम्यक्दरशन रतन गहीजै, जिनवच मे सदेह न कीजै ।
इह भव विभव चाह दुखदानी, परभव भोग चहै मत प्रानी ।
प्रानी गिलान न करि अशुचि लखि, धरम गुरु प्रभु परखिये ।
परदोष ढकिये धरम डिगते को, सुथिर कर हरखिये ॥
चउसङ्घ को वात्सल्य कीजे, धरम की परभावना ।
गुण आठसो गुन आठ लहि कै, इहा फेर न आवना ॥१॥

ॐ ह्री अष्टांगसहितपञ्चविंशतिदोषरहिताय सम्यग्दर्शनाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

ज्ञानपूजा ।

दोहा—पञ्चभेद जाके प्रगट, ज्ञेय प्रकाशन भान ।
मोह–तपन–हर–चन्द्रमा, सोई सम्यक्ज्ञान ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

सोरठा—नीर सुगंध अपार, तृषा हरै मल क्षय करै ।
सम्यक्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजों सदा ॥ २ ॥
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
जल केशर घनसार, ताप हरै शीतल करै ।
सम्यक्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा ॥२॥
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।
अछत अनूप निहार, दारिद नाशै सुख करै ।
सम्यक्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौ सदा ॥ ३ ॥
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।
पुहुप सुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै ।
सम्यक्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौ सदा ॥ ४ ॥
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।
नेवज विविध प्रकार, क्षुधा हरै थिरता करै ।
सम्यक्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौ सदा ॥ ५ ॥
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
दीपज्योति तमहार, घटपट परकाशै महा ।
सम्यक्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौ सदा ॥ ६ ॥
ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।
धूप घ्रानसुखकार, रोगविघन जड़ता हरै ।

सम्यक्ज्ञान विचार, आठ भेद भेद पूजौ सदा ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीफल आदि विथार, निहचै शिवसुरफल करै ।
सम्यक्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौ सदा ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल गंधाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु ।
सम्यक्ज्ञान विचार, आठ भेद पूजौं सदा ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला (दोहा)

आप आप जानै नियत, ग्रन्थपठन व्योहार ।
संशय विभ्रम मोह बिन, अष्टअङ्ग गुनकार ॥ १ ॥

चौपाई मिश्रित गीता छन्द

सम्यक्ज्ञानरतन मन भाया, आगम तीजा नैन बताया ।
अच्छर अरथ शुद्ध पहिचानो, अच्छर अरथ उभय सग जानो ॥
जानो सुकाल पठन जिनागम, नाम गुरु न छिपाइये ।
तपरीति गहि बहु मान देकै, विनय गुन चित लाइये ॥
ए आठ भेद करम उछेदक, ज्ञानदर्पण देखना ।
इस ज्ञानहीसो भरत सीजा, और सब पटपेखना ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अष्टविधसम्यक्ज्ञानाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

चारित्र पूजा

दोहा—विषयरोग औषधि महा, दवकषाय जलधार ।
तीर्थङ्कर जाको धरै, सम्यक्चारित सार ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्

सोरठा—नीर सुगन्ध अपार, तृषा हरै मल छय करै।
सम्यक्चारित सार, तेरहविध पूजों सदा॥ १॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय जलं निर्व०।
जलकेसर घनसार, ताप हरै शीतल करै।
सम्यक्चारित सार, तेरहविध पूजौ सदा॥ २॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय चन्दनं निर्व०।
अछत अनूप निहार, दारिद नासै सुख भरै।
सम्यक्चारित सार, तेरहविध पूजौ सदा॥ ३॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अक्षतान् निर्व०।
पुहुप सुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै।
सम्यक्चारित सार, तेरह विध पूजौ सदा॥ ४॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय पुष्पं निर्व०।
नेवज विविध प्रकार, क्षुधा हरै थिरता करै।
सम्यक्चारित सार, तेरहविध पूजौ सदा॥ ५॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय नैवेद्य निर्व०।
दीपजोति तमहार, घटपट परकाशै महा।
सम्यक्चारित सार, तेरहविध पूजौ सदा॥ ६॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय दीप निर्व०।
धूप घ्राण सुखकार, रोग विघन जडता हरै।
सम्यक्चारित सार, तेरहविध पूजौ सदा॥ ७॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय धूपं निर्व०।
श्रीफल आदि विथार, निश्चय सुरशिवफल करै।
सम्यक्चारित सार, तेरहविध पूजौ सदा॥ ८॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय फलं निर्व०।
जल गन्धाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु।
सम्यक्चारित सार, तेरहविध पूजौ सदा॥९॥
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला (दोहा)

आप आप थिर नियत नय, तपसञ्जम व्यौंहार।
स्व पर दया दोनों लिये, तेरहविधि दुखहार॥ १०।

चौपाई मिश्रित गीताछन्द

सम्यक्चारित रतन संभालो, पांच पाप तजिके व्रत पालो।
पंचसमिति त्रय गुपति गहीजै, नरभव सफल करहु तन छीजै॥१।
छीजैं सदा तनको जतन यह, एक संयम पालिये।
बहु रुल्यो नरक निगोद माहीं, विषय कषायनि टालिये॥ २।
शुभ करम जोग सुघाट आया, पार हो दिन जात है।
'द्यानत' धरम की नाव बैठो, शिवपुरी कुशलात है॥ ३।
ॐ ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय महार्घ्यं निर्व०।

समुच्चय जयमाला।

सम्यग्दरशन ज्ञान व्रत, इन बिन मुकति न होय।
अंध पंगु अति आलसी, जुदे जलैं दवलोय॥ १॥

चौपाई

तापै ध्यान सुथिर बन आवैं, ताकै करमबंध कट जावै।
तासौं शिवतिय प्रीति बढावै, जो सम्यक् रतनत्रय ध्यावै॥ २॥
ताको चहुंगति के दुख नांही, सो न परै भवसागर मांही।
जनम-जरा मृत दोष मिटावैं, जो सम्यक् रतनत्रय ध्यावै॥ ३॥
सोई दशलच्छनको साधै, सो सोलह कारण आराधै।
सो परमातम पद उपजावै, जो सम्यक् रतनत्रय ध्यावै॥ ४॥
सोई शक्रचक्रिपद लेई, तीनलोक के सुख बिलसेई।
सो रागादिक भाव बहावै, जो सम्यक् रतनत्रय ध्यावै॥ ५॥
सोई लोकालोक निहारै, परमानन्द दशा विस्तारै।
आप तिरै औरन तिरवावैं, जो सम्यक् रतनत्रय ध्यावै॥ ६॥

दोहा—एक स्वरूप प्रकाश निज, वचन कह्यो नहीं जाय।
तीनभेद व्यौहार सब, 'द्यानत' को सुखदाय ॥ ७ ॥
ॐ ह्री सम्यक्रत्नत्रयाय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री आदिनाथ जिनपूजा

नाभिराय मरुदेविके नंदन, आदिनाथ स्वामी महाराज।
सर्वार्थसिद्धितैं आप पधारे, मध्यलोक मांही जिनराज ॥
इन्द्रदेव सब मिलकर आये, जन्म महोत्सव करने काज।
आह्वानन सब विधि मिलकरके, अपने कर पूजे प्रभु पांय ॥
ॐ ह्री श्री आदिनाथ जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्
ॐ ह्री श्री आदिनाथ जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्री श्री आदिनाथ जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्

अष्टक

क्षीरोदधिके उज्ज्वल जल ले, श्री जिनवर पद पूजन जाय।
जन्म जरा दुख मेटन कारन, ल्याय चढाऊं प्रभुजीके पाय ॥
श्रीआदिनाथके चरण कमलपर, बलि बलि जाऊं मनवचकाय।
हो करुणानिधि भव दुख मेटो, यातैं मै पूजौ प्रभु पाय ॥
ॐ ह्री श्रीआदिनाथ जिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं।
मलयागिरि चंदन दाह निकंदन, कञ्चन झारीमे भर ल्याय।
श्रीजीके चरण चढावो भविजन, भवआताप तुरत मिटि जाय।श्री.
ॐ ह्री श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं।
शुभशालि अखंडित सोरभमंडित, प्रासुक जलसों धोकर ल्याय।
श्रीजीके चरण चढावो भविजन, अक्षयपदको तुरत उपाय। श्री.
ॐ ह्री श्रीआदिनाथ जिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपा०।
कमल केतकी बेल चमेली, श्री गुलाब के पुष्प मंगाय।
श्रीजीके चरण चढावो भविजन, कामबाण तुरत नसिजाय। श्री.।

ॐ ह्री आदिनाथ जिनेन्द्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं नि० ।
नेवज लीना षट रस भीना, श्रीजिनवर आगे धरवाय ।
थाल भराऊं क्षुधा नसाऊं, ल्याऊं प्रभुके मंगल गाय ॥ श्री. ।
ॐ ह्री श्रीआदिनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ।
जगमग जगमग होत दशोंदिश, ज्योति रही मंदिरमे छाय ।
श्रीजीके सन्मुख करत आरती, मोहतिमिर नासै दुखदाय । श्री.
ॐ ह्री श्रीआदिनाथ जिनेन्द्राय मोहाधकारविनाशनाय दीपं नि० ।
अगर कपूर सुगन्ध मनोहर, तगर कपूर सुद्रव्य मिलाय ।
श्रीजीके सन्मुख खेय धुपायन, कर्मजरे चहुँगति मिटिजाय । श्री. ।
ॐ ह्री श्रीआदिनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपा० ।
श्रीफल और बदाम सुपारी, केला आदि छुहारा ल्याय ।
महामोक्षफल पावन कारन, ल्याय चढाऊं प्रभुजीके पाय । श्री. ।
ॐ ह्री श्रीआदिनाथ जिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फल नि० ।
शुचि निरमल नीर गध सुअक्षत, पुष्प चरू ले मन हरषाय ।
दीप धूप फल अर्घ सुलेकर, नाचत ताल मृदङ्ग बजाय । श्री ।
ॐ ह्री श्रीआदिनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं नि० ।

पञ्चकल्याणक (दोहा)

सर्वारथसिद्धितैं चये, मरुदेवी उर आय ।
दोज असित आषाढ की, जजूं तिहारे पाय ॥

ॐ ह्री आषाढ कृष्णाद्वितीयाया गर्भकल्याणक प्राप्ताय श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामोति स्वाहा ।

चैतबदी नौमी दिना, जनम्या श्रीभगवान ।
सुरपति उत्सव अति करचा, मै पूजौ धर ध्यान ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णानवम्यां जन्मकल्याणक प्राप्ताय श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

तृणवत् ऋद्धि सब छाडिके, तप धारचो बन जाय ।

नौमी चैत्र असेत की, जजूं तिहारे पाँय ॥

ॐ ह्री चैत्र कृष्णा नवम्यां तपकल्याणकप्राप्ताय श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

फाल्गुन बदि एकादशी, उपज्यो केवलज्ञान ।
इन्द्र आय पूजा करी, मै पूजौ इह थान ॥

ॐ ह्री फाल्गुण कृष्णादश्या ज्ञानकल्याणक प्राप्ताय श्रीआदिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

माघ चतुर्दशि कृष्णाकी, मोक्ष गये भगवान ।
भवि जीवोको बोधिके, पहुंचे शिवपुर थान ॥

ॐ ह्री माघ कृष्णा चतुर्दश्या मोक्षकल्लाणक प्राप्ताय श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

आदीश्वर महाराज मै विनती तुमसे करूँ ।
चारों गति के मांहि मैं दुख पायो सो सुनो ।
अष्टकर्म मै हूं एकलो, यह दुष्ट महादुख देत हो ।
कबहूंक इतर निगोद मे मोकूं पकटत करत अचेत हो ॥
म्हारो दीनतणी सुन बीनती ॥ १ ॥
प्रभु कबहुंक पटक्यो नरक मे, जठै जीव महादुख पाय हो ।
नित उठि निरदई नारकी, जठै करत परस्पर घात हो ॥म्हा०
प्रभु नरकतणा दुख अब कहू जठै परस्पर घात हो ।
कोइयक बांध्यो खंभसो, पापी दे मुद्गरकी मार हो ॥
कोइयक काटै करोतसो, पापी अंगतणी दोय फाड़ हो ॥म्हा०॥
प्रभु इह विधि दुख भुगत्या घणा, फिर गति पाई तिरयञ्च हो ।
हिरणा बकरा बाछला पशु दीन गरीब अनाथ हो ॥म्हा०॥
प्रभु मैं ऊंट बलद भैसो भयो, ज्यापै लदियो भार अपार हो ।
नहि चाल्यो जठै गिरपरयो, पापी दे सोटनकी मारहो ॥म्हा०॥

प्रभु ! कोइयक पुण्य सजोगसूं मैं तो पायो स्वर्ग निवास हो।
देवांगना संग रमि रह्यो, कर कर अति अनुराग हो ॥म्हा०॥
कबहुंक नदनवन विषैं, कवहुक वन-गृह माहि हो।
प्रभु इह विधि काल गमायकैं, फिर माला गई मुरझायहो ॥म्हा०
देव थिती सब घट गई, फिर उपज्यो सोच अपार हो।
सोच करंता तनखिर पड्यो, फिर उपज्यो गरभमें जायहो॥म्हा०॥
प्रभु गर्भतणा दुख अब कहूं, जठै सकड़ाई की ठौर हो।
हलन चलन नहि कर सक्यो, जठै सघन कीच घनघोरहो॥म्हा०
माता खावे चरपरो, फिर लागे तन संताप हो।
प्रभु ज्यों जननी तातो भखै फिर उपजे तन संताप हो॥म्हा०॥
ओधे मुख भूल्यो रह्यो, फेर निकसन कौन उपाय हो।
कठिन कठिन कर नीसरयो, जैसे निसरै जंतीमे तारहो॥म्हा॥
प्रभु फिर निकसत धरत्यां पड्यो, फिर लागी भूख अपार हो।
रोय रोय बिलख्यो घणो, दुख वेदनको नहि पारहो॥म्हा०॥
प्रभु दुख मेटन समरथ घनो, यातै लागूं तिहारे पांय हो।
सेवक अरज करै प्रभू ! मोकू भवोदधि पार उतार हो॥म्हा०॥

दोहा—श्रीजीकी महिमा अगम है, कोई न पावै पार।
मै मति अल्प अज्ञान हो, कौन करै विस्तार॥
ॐ ह्री श्रीआदिनाथ जिनेन्द्राय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
विनती ऋषभ जिनेश की, जो पढसी मनलाय।
स्वर्गो मे संशय नही, निश्चय शिवपुर जाय॥

इत्याशीर्वाद.।

श्री आदिनाथ जिन–पूजा

अडिल्ल—परम पूज्य वृषभेश स्वयंभूदेव जू,
पिता नाभि मरुदेवि करैं सुर सेव जू।
कनक-वरण तन तुङ्ग धनुष पन-शत तनो,
कृपा-सिधु इत आइ तिष्ठ ममदुख हनो।।

ॐ ह्री श्रीआदिनाथजिन अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्री श्रीआदिनाथजिन अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ. ठः।
ॐ ह्रीं श्रीआदिनाथजिन अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक छन्द द्रुतविलंबित तथा सुन्दरी

हिमवनोद्भव-वारि सुधारिकैं, जजत हों गुन-बोध उचारिकै।
परम-भाव सुखोदधि दीजिए, जनम मृत्यु जरा छय कीजिए।।
ॐ ह्री श्रीवृषभदेवजिनेन्द्राय जन्ममृत्युविनाशनाय जलं नि०।
मलय-चंदन दाह-निकंदनं, घसि उभे करमे करि वंदनं।
जजत हो प्रशमाश्रम दीजिए, तपत ताप त्रिधा छै कीजिए।।
ॐ ह्री श्रीवृषभदेवजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चन्दनं नि०।
अमल तदुल खण्ड-विवर्जितं, सित निशेश-हिमामिय-तर्जितं।
जजत हो तसु पुञ्ज धरायजो, अखय संपति द्यो जिनरायजो।।
ॐ ह्री श्रीवृषभजिनेन्द्रायाऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि०।
कमल चंपक केतकि लीजिएं, मदन-भञ्जन भेट धरीजिए।
परम शील महा सुखदाय है, समर-सूल निमूल नशाय है।।
ॐ ह्री श्रीवृषभदेवजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्प नि०।
सरस मोदन मोदक लीजिए, हरन भूख जिनेश जजीजिए।
सकल आकुल-अन्तक हेतु है, अतुल शात-सुधारस देतु है।।
ॐ ह्री श्रीवृषभदेवजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि०।
निविड मोह-महातम छाइयौ, स्व-पर-भेद न मोहि लखाइयो।

हरन-कारन दीपक नासके, जजत हों पद केवल भासके ।।
ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि० ।
अगर-चन्दन आदिक लेयके, परम पावन गंध सुखेयके ।
अगनि-संग जरै मिस धूमके, सकल कर्म उड़े यह धूमके ।।
ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवजिनेन्द्रायाऽष्टकर्मदहनाय धूपं नि० ।
सुरस पक्क मनोहर पावने, विविध लै फल पूज रचावने ।
त्रिजगनाथ कृपा अब कीजिए, हमहि मोक्ष महाफल दीजिए ।।
ॐ ह्रीं श्रीवृषभजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ।
जल-फलादि समस्त मिलायकैं, जजत हों पद मंगल गायके ।
भगत-वत्सल-दीन-दयालजी, करहु मोहि सुखी लखि हालजी ।।
ॐ ह्रीं श्रीवृषभदेवजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि० ।

पञ्चकल्याणक द्रुतविलम्बित तथा सुन्दरी

असित दोज अषाढ सुहावनी, गरभ मंगलको दिन पावनी ।
हरि-सची पितु-मातहि सेवही, जजत है हम श्रीजिनदेव ही ।।
ॐ ह्रीं अषाढकृष्णाद्वितीयादिने गर्भमङ्गलप्राप्ताय श्रीवृषभदेवाय अर्घ्यं
असित चैत सुनौमि सुहाइयो, जनम-मंगल ता दिन पाइयो ।
हरि महागिरिपै जजियो तबै, हम जजै पद-पंकजको अबै ।।
ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवमीदिने जन्ममङ्गलप्राप्ताय श्रीवृषभ० अर्घ्यं नि०
असित नौमि सुचैत धरे सही, तप विशुद्ध सबै समता गही ।
निज सुधारससो भर लाइयो, हम जजै पद अर्घ चढायो ।।
ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवमीदिने दीक्षामङ्गलप्राप्ताय श्रीवृषभ० अर्घ्यं नि०
असित फागुन ग्यारसि सोहनो, परम केवलज्ञान जग्यो भनो ।
हरि-समूह जजै तहँ आइकै, हम जजैं इत मंगल गाइकैं ।।
ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णैकादश्यां ज्ञानमङ्गलप्राप्ताय श्रीवृषभ०अर्घ्यं नि०
असित चौदसि माघ विराजई, परम मोक्ष सुमंगल साजई ।
हरि-समूह जजै कैलाशजी, हम जजैं अति धार हुलासजी ।।

ॐ ह्रीं माघकृष्णचतुर्दश्या मोक्षमङ्गप्राप्ताय श्रीवृषभनाथाय अर्घ्यं

जयमाला–घत्तानन्द

जय जय जिन-चंदा आदि-जिनंदा, हनि भव-फंदा-कंदा जू।
वासव-शत-वंदा धरि आनंदा, ज्ञान अमंदा नंदा जू॥

छन्द मोतियादाम

त्रिलोक-हितंकर पूरन पर्म, प्रजापति विष्णु चिदातम धर्म।
जतीसुर ब्रह्म-विदांवर बुद्ध, वृषंक अशंक क्रियाम्बुधि शुद्ध॥
जबै गर्भागम-मङ्गल जान, तबै हरि हर्ष हिये अति आन।
पिता-जननीपद सेव करेय, अनेक प्रकार उमंग भरेय॥
जये जब ही तबही हरि आय, गिरीन्द्रविषै किय न्हौन सुजाय॥
नियोग समस्त किये तित सार, सुलाय प्रभु पुनि राज-अगार।
पिता-कर सोंपि कियो तित नाट, अमंद अनंद समेत विराट।
सुथान पयान कियो फिर इंद, इहां सुर-सेव करैं जिन-चंद॥
कियो चिरकाल सुखाश्रित राज, प्रजा सब आनदको तित साज।
सुलिप्त सुभोगनिमें लखि जोग, कियो हरिने यह उत्तम योग॥
निलञ्जन नाच रच्यो तुम पास, नवों रस-पूरित भाव विलास।
बजे मिरदंग द्रमं द्रम जोर, चले पग झारि झनाझन झोर॥
घनाघन घंट करे धुनि मिष्ट, बजै मुहचंग सुरान्वित पुष्ट।
खडी छिन पास छिनहि आकाश, लघू छिन दीरघ आदि विलास।
ततच्छन ताहि विलै अविलोय, भये भवतैं भय-भीत वहोय।
सुभावत भावन बारह भाय, तहां दिव-ब्रह्म-ऋपीश्वर आय॥
प्रबोध प्रभू सुगये निज धाम, तबै हरि आय रचो शिवकाम।
कियो कचलोंच प्रयाग अरन्य, चतुर्थम ज्ञान लह्यो जग-धन्य॥
धरो तब योग छ मास प्रमान, दियो गिरियंस तिन्हें इक दान।
भयो जब केवलज्ञान जिनेन्द्र, समोसृत-ठाठ रच्यो सु धनेन्द्र॥

तहा वृषतत्त्व प्रकाशि अशेष, कियो फिर निर्भय-थान प्रवेश।
अनंत गुनातम श्रीसुख-रास, तुम्हे नित भव्य नमै शिव-आस॥

घत्तानन्द

यह अरज हमारी, सुनि त्रिपुरारी, जनम जरा मृति दूर करो।
शिव-सपति दीजे, ढील न कीजे, निज लख लोजे कृपा धरो॥

ॐह्री वृषभदेवजिनेन्द्राय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छन्द आर्या

जो ऋषभेश्वर पूजै, मन-वच-तन भाव शुद्ध कर प्रानी।
सो पावै निश्चैसो, मुक्ति औ मुक्ति सार सुख-थानी॥

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलि क्षिपामि।

श्री चन्द्रप्रभ पूजा

चारित चन्द्र चतुष्टय मण्डित चारि प्रचण्ड अरि चक चूरे।
चन्द्र विराजित चर्ण विषै यह चन्द्र प्रभा सम है अनुपूरे॥
चारु चरित चकोरन के चित चोरन चद्र कला बहु सूरे।
सो प्रभु चन्द्र समत गुरु चित चितत ही सुख होय हजूरे॥

ॐ ह्री श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्री श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः॥
ॐ ह्री श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

पद्म द्रह सम उज्ज्वल जल ले, शीतलता अधिकाई।
जन्म जरा दुख दूर करन को, जिनवर पूज रचाई॥
चचल चित को रोकि चतुर्गति चक्रभ्रमण निखारो।
चारु चरण आचरण चतुरनर चन्द्र प्रभु चित धारो॥

ॐह्री श्रीचन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जल नि०

मलया गिर वर बावन चन्दन केशर संग घिसावो।
भव आताप निवारण करण, श्री जिन चरण चढावो॥चंचल०॥

ॐ ह्री श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय भवाताप विनाशनाय चन्दनम् निर्व०

चन्द्र किरण सम श्वेत मनोहर, खण्ड विवर्जित सोहै।
ऐसे अक्षत सों प्रभु पूजो, जग जीवन मन मोहै ।। चंचल ।।
ॐ ह्री श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतान् निर्व०
सुर तरु के शुचि पुष्प मनोहर, वर्ण वर्ण के लायो।
काम-दाह निरवारन कारन, श्री जिन चरण चढायो ।। चंचल०।।
ॐ ह्री श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय काम बाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्व०
नाना विध के व्यंजन ताजे, स्वच्छ अदोष बनाओ।
रोग क्षुधा दुःख दूर करन को श्री जिन चरण चढाओ ।।चंचल०।।
ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्व०
कनक रतन मय दीप मनोहर, उज्ज्वल ज्योति जगावो।
मोह महातम नाश करन को, जिनवर चरण चढावो ।।चंचल०।।
ॐ ह्री श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीप निर्व०
दश विध धूप हुताशन माही, खेय सुगन्ध बढावो।
अष्ट करम के नाश करन को श्री जिन चरण चढावो ।। चंचल०।।
ॐ ह्री श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय अष्ट कर्म दहनाय धूपं निर्व०
नाना विधि के उतम फल ले तन मन को सुखदाई।
दुःख-निवारण शिव-फल कारण पूजो श्री जिनराई ।। चंचल० ।।
ॐ ह्री श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्व०
वसु विधि अर्घ बनाय मनोहर, श्री जिन मन्दिर जावो।
अष्ट कर्म के नाश करन को, श्री जिन चरण चढावो ।। चंचल. ।।
ॐ ह्री श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय अनर्घ पद प्राप्तये अर्घ्यं।

पंच कल्याणक—कुसुमलता छन्द।

चैत्र प्रथम पंचम दिन जान, गर्भागम मंगल गुणखान।
मात लक्ष्मण के उर आये तजि दिव लोक चन्द्र भगवान ।।
षट् नव मास रतन्न बरसाये,इन्द्र हुकुमतें धनद महान।

तिनके चरण कमल मै पूजूं, अर्घ चढाय करूं नित ध्यान ॥
ॐह्री चैत्रकृष्णा पंचम्या गर्भमंगलप्राप्ताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं

पौष बदि ग्यारस को जन्मे, चन्द्रपुरी जिन चन्द्र महान ।
महासेन राजा के प्यारे, सकल सुरासुर माने आन ॥
सुर गिरिपर अभिषेक कियो हरि, चतुर निकाय देव सब आन ।
सो जिन चन्द्र जयो जग माही, अर्घ चढाय करू नित ध्यान ॥
ॐह्रीपौषकृष्णा एकादश्याजन्ममंगलप्राप्तायश्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्रायअर्घ्यं

पौष बदि ग्यारस तप लीनो, जान्यो जगत अथिर दुख दान ।
राज त्यागि वैराग्य धरो, बन जाय कियो आतम कल्यान ॥
सुर-नर-खग मिलि पूज रचाई, मन मे अति ही आनन्द मान ।
ऐसे चन्द्रनाथ जिनवर को, अर्घ चढाय करूं नित ध्यान ॥
ॐह्रीपौषकृष्णैकादश्यां तपोमंगलप्राप्तायश्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं

फाल्गुन बदि सप्तमी जानो, चार घातिया घाति महान ।
सकल सुरासुर पूजि जगतपति, पायो तिहिं दिन केवल ज्ञान ॥
समवसरण महिमा हरि कीनो, दीनो दृष्टि चरण निज आन ।
ऐसे चन्द्रनाथ जिनवर को, अर्घ चढाय करो नित ध्यान ॥
ॐह्रीफाल्गुणकृष्णासप्तम्यांकेवलज्ञानप्राप्तायश्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्रायअर्घ्यं

साते बदि फाल्गुन के महीना, सम्मेदाचल शृंग महान ।
ललित कूट ऊपर जगपतिने, पायो आतम शिव कल्यान ॥
सुर सुरेश मिलि पूज रचाई, गायो गुण हर्षित जिय ठान ।
सुगुरु समन्त भद्र के स्वामी, देहु 'जिनेश्वर' को सत-ज्ञान ॥
ॐह्रीफाल्गुनकृष्णासप्तम्यामोक्षमंगलप्राप्तायश्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्रायअर्घ्यं

जयमाला

दोहा—अष्टम थिति पति तुम धनी, अष्टम तीरथ राय ।
अष्टम पृथ्वी कारने, नमू अग वसु नाय ॥ १ ॥

चाल—अहो जगत गुरु देव

अहो चन्द्र जिन देव, तुम जग नायक स्वामी।
अष्टम तीरथराज, हो तुम अन्तरयामी ॥ १ ॥
लोकालोक मझार, जड चेतन गुण धारी।
द्रव्य छहों अनिवार, पर्यय शक्ति अपारी ॥ २ ॥
तिहिं सबको इकवार, जनि ज्ञान अनंता।
ऐसो ही सुख कार, दर्शन है भगवन्ता ॥ ३ ॥
तीन लोक तिहुं काल, ज्ञायक देव कहावो।
निरवाधा सुखसार, तिहिं शिवथान रहावो ॥४॥
हे प्रभु ! या जग माहि, मै वहुते दुख पायौ।
कहन जरूरति नाहि, तुम सबहिं लखि पायो ॥५॥
कबहूं नित्य निगोद, कबहूं नर्क मझारी।
सुरनर पशु गतिमांहि, दुःखसहे अतिभारी ॥६॥
पशुगति के दुख देव ! कहत बढे दुख भारी।
छेदन भेदन त्रास, शीत उष्ण अधिकारी ॥ ७ ॥
भूख प्यास के जोर, सबल पशु हनि मारै।
तहां वेदना घोर हे प्रभु ! कौन सम्हारै ॥ ८ ॥
मानुष गति के मांहि, यद्यपि है कछु साता।
तोहू दुख अधिकाय, क्षणक्षण होत असाता ॥९॥
धन जोवन सुत नारि, सम्पति और घनेरी।
मिलत हरप अनिवार, विछुरत विपत घनेरी ॥१०॥
सुरगति इष्ट वियोग, पर सम्पत्ति लखि झूरे।
मरण चिन्ह संयोग, उर विकलप वहु पूरे ॥ ११ ॥
यो चारों गति मांहि, दुःख भरपूर भरी है।
ध्यान धरी मन मांहि, यातें काज सरी है ॥१२॥
कर्म महा दुःख राज, याको नाश करी जी।

बडे गरीब निवाज, मेरी आश भरौजी ॥ १३ ॥
समन्तभद्र गुरुदेव, ध्यान तुम्हारो कीनो ।
प्रकट भयौ जिनवीर, जिनवर दर्शन कीनो ॥१४॥
जब तक जग मे बास, तब तक हिरदे मेरे ।
कहत जिनेश्वर दास, शरण गहौं मैं तेरे ॥१५॥
दोहा.—जग जयवन्ते होउ जिन, भरौ हमारी आस ।
जय-लक्ष्मी जिन दीजिये, कहत जिनेश्वर दास ॥
ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अडिल्ल—छन्द

वर्तमान जिनराय भरत के जानिये ।
पंच कल्याणक मानि गये शिव थान ये ॥
जो नर मन वच काय, प्रभु पूजे सही ।
सो नर दिव सुख पाय, लहै अष्टम मही ॥
इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

श्री शीतलनाथ जिन पूजा

है नगर भद्दिल भूप दृढ़रथ सुष्टु नंदा ता त्रिया,
तजि अच्युत-दिवि अभिराम शीतलनाथ सुत ताके प्रिया ।
इक्ष्वाकुवशी अंक श्रीतरु हेम-वरण शरीर है,
धनु नवे उन्नत पूर्व लख इक आयु सुभग परी रहे ॥
सोरठा—सो शीतल सुख-कंद, तजि परिग्रह शिव-लोक गे ।
छूट गयो जग-धंद, करियत तौ आह्वान अब ॥
ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्र ! अत्रावतरावतर, संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ, ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव, वषट् ।
नित तृषा-पीडा करत अधिकी दाव अबके पाइयो,
शुभ कुम्भ कचन-जडित गङ्गा-नीर भरि ले आइयो ।

तुम नाथ शीतल करो शीतल मोहि भवकी तापसों,
मै जजौं युग पद जोरि करि मो काज सरसी आपसों ।।
ॐ ह्री श्रीशीतनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युरोगविनाशनाय जलं०
जाकी महकसों नोम आदिक होत चन्दन जानिगे,
सो सूक्ष्म घिसके मिला केसर भरि कटोरा आनिये । तुम०
ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चन्दनं०
मै जोव ससारो भयो अरु मरयो ताको पार ना,
प्रभु पास अक्षत ल्याय धारे अखय-पदके कारना । तुम०
ॐ ह्री श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि०
इन मदन मोरी सकति थोरी रह्यो सब जग छायके,
ता नाथ कारन सुमन ल्यायो महाशुद्ध चुनायके । तुम०
ॐ ह्री श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय कामबाणविनाशनाय पुष्पं नि०
क्षुध-रोग मेरे पिंड लागो देत मांगे ना घरी,
ताके नसावन काज स्वामी ले चरू आगे धरी । तुम०
ॐ ह्री श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि०
अज्ञान तिमिर महान अन्धकार करि राखो सबै,
निज पर सुभेद पिछान कारण दीप ल्यायो हूं अबै । तुम०
ॐ ह्री श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि०
जे अष्ट कर्म महान अतिबल घेरि मो चेरा कियो,
तिन केर नाश विचारि के ले धूप प्रभु ढिग क्षेपियो । तुम०
ॐ ह्री श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि०
शुभ मोक्ष मिलन अभिलाष मेरे रहत कबकी नाथ जू,
फल मिष्ट नाना भांति सुथरे ल्याइयौ निज हाथ जू । तुम०
ॐ ह्री श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि०
जल गंध अक्षत फूल चरु, दीपक सुधूप कही महा,
फल ल्याय सुन्दर अरघ कीन्हों दोष सो वर्जित कहा । तुम०
ॐ ह्री श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्य पदप्राप्तये अर्घ्यं नि०

पंचकल्याणक

चैत वदी दिन आठ, गर्भावतार लेत भये स्वामी।
सुर नर असुरन जानो, जजहूँ शीतल प्रभु नामी ॥
ॐ ह्री चैत्रकृष्णाष्टम्या गर्भकल्याणकप्राप्ताय श्रीशीतलनाथ० अर्घ्यं०
माघ बदी द्वादशी को, जन्मे भगवान सकल सुखकारी।
मति श्रुत अवधि विराजे, पूजो जिन-चरण हितकारी ॥
ॐ ह्री माघकृष्णाद्वादश्यां जन्मकल्याणकप्राप्ताय श्रीशीतलनाथ०अर्घ्यं०
द्वादशि माघ बदीमे, परिग्रह तजि वन बसे जाई।
पूजत तहां सुरासुर, हम यहां पूजत गुणगाई ॥
ॐ ह्री माघकृष्णाद्वादश्यां तपःकल्याणकप्राप्ताय श्रीशीतलनाथ०अर्घ्यं०
चौदशि पूस वदीमे, जग-गुरु केवल पाय भये ज्ञानी।
सो मूरति मनमानी, मै पूजौं जिन-चरण सुखखानी ॥
ॐ ह्रीपौषकृष्णाचतुर्दश्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्तायश्रीशीतलनाथ०अर्घ्यं०
आश्विन सुदी अष्टमी दिन, मुक्ति पधारे समेदगिरि सेती।
पूजा करत तिहारी, नसत उपाधि जगतकी जेती ॥
ॐ ह्रीआश्विनशुक्लाष्टभ्यां मोक्षकल्याणकप्राप्ताय श्रीशीतलनाथ०अर्घ्यं

जयमाला

जय शीतल जिनवर, परम धरमधर, छबिके मन्दिर शिव-भरता।
जय पुत्र सुनन्दा, के गुण वृन्दा, सुखके कंदा, दुख-हरता ॥
जय नासादृष्टी, हो परमेष्ठी, तुम पदनेष्ठी अलख भये।
जय तपो चरनमा, रहत चरनमा, सुआचरणमा, कलुष गये ॥

स्त्रग्विणी छंद

जय सुनन्दा के नन्दा तिहारी कथा, भाषि को पार पावे कहावे यथा।
नाथ तेरे कभी होत भव-रोग ना, इष्ट-वियोग अनिष्ट संयोग ना।
अग्निके कुण्ड मे वल्लभा रामकी, नाम तेरे बची सो सती कामकी।

नाथ०।। द्रोपदी चीर बाढ़ो तिहारी सही, देव जानो सबोमे मुल्लजा रहो ।।नाथ०।। कुष्ठ राखो न श्रीपालको जो महा, अग्निमे काढ लीनो सितावी तहां ।। नाथ० ।। अंजना कोटि फासी गिरो जो हतो. औ सहाई तहां तो विना को हतो ।। नाथ० ।। शैल फूटो गिरो अंजनी पूतके, चोट जाके लगी ना तिहारै तके ।। नाथ० ।। कूदियो शीघ्र हो नाम तो गायके, कृष्ण काली नथो कुंडमे जायके ।। नाथ० ।। पाडवा जे घिरे थे लखागारमे, राह दीन्ही तिन्हे तू महाप्यार मे ।। नाथ० ।। सेठको शूलिकापै धरो देखके, कीन्ह सिंहासन आपनो लेखके ।।नाथ०।। जो गनाये इन्हें आदि देके सबै, पाद परसादते भे सुखारी सबै ।।नाथ०।। बार मेरी प्रभू देर कीन्ही कहा, कीजिये दृष्टि दयाकी मोपे अहा ।।नाथ०।। धन्य तू धन्य तू धन्य तू मैंनहा, जो महा पंचमो ज्ञान नीके लहा ।। नाथ० ।। कोटि तीरथ है तेरे पदो के तले, रोज ध्यावे मुनि सो बतावे भले ।। नाथ० ।। जानिके यों भली भांति ध्याऊं तुम्हे, भक्ति पाऊं यही देव दीजे मुझे ।। नाथ० ।।

गाथा—आपद सब दीजे भार झोकि यह पढत सुनत जयमाल,
हे पुनीत । करण अरु जिह्वा वरते आनन्द जाल ।
पहुचे जहं कबहूं पहुंच नही नहिं पाई सो पावे हाल ।
नही भयो कभी सो होय सवेरे भापत मनरंगलाल ।।

ॐ ह्रीं श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सोरठा—भो शीतल भगवान, तो पद पक्षी जगत मे ।
हे जेते परवान, पक्ष रहे तिन पर बनो ।।

इत्याशीर्वादः ।

श्री वासुपूज्य जिन पूजा

श्रीमन वासुपूज्य जिनवर पद, पूजन हेत हिये उमगाय ।
थापो मन-वच-तन शुचिकरके, जिनकी पाटल देव्या माय ।

महिष चिह्न पद लसै मनोहर, लाल-वरन-तन-समतादाय ।
सो करुनानिधि कृपा दृष्टि करि, तिष्ठहु सुपरितिष्ठ यहँ आय ।
ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर, संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

छन्द जोगीरासा । आंचलीबद्ध 'जिनपद पूजों लवलाई'

गंगा-जल भरि कनक कुम्भ में, प्रासुक गन्ध मिलाई ।
करम-कलंक विनाशन कारन, धार देत हरषाई ।। जिन० ।।
वासुपूज्य वसु-पूज-तनुज-पद, वासव सेवत आई ।
बालब्रह्मचारी लखि जिनको, शिवतिय सनमुख धाई ।। जिन० ।।
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ।।१।।
कृष्णागरु मलयगिरि चंदन, केशर संग घसाई ।
भव-आताप विनाशन कारन, पूजों पद चितलाई ।।वासु०।।
ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदनम् ।।२।।
देवजीर सुखदास शुद्ध वर सुवरन-थार भराई ।
पुंज धरत तुम चरनन आगैं, तुरित अक्षय-पद पाई ।।वासु०।।
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्ताये अक्षतान् ।।३।।
पारिजात संतान कल्प तरु,—जनित सुमन बहु लाई ।
मीन-केतु-मद-भंजन-कारन, तुम पद-पद्म चढाई ।।वासु०।।
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं० ।।४।।
नव्य गव्य आदिक रस-पूरित, नेवज तुरत उपाई ।
क्षुधा-रोग-निरवारन कारन, तुम्हें जजों शिरनाई ।।वासु०।।
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं० ।।५।।
दीपक-जोत उदोत होत वर, दशदिश मे छवि छाई ।
तिमिर-मोह-नाशक तुमको लखि, जजों चरन हरषाई ।।वासु०।।
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं० ।।६।।

दशविध गन्ध मनोहर लेकर, वातहोत्र में ढाई ।
अष्ट करम ये दुष्ट जरतु हैं, धूप सु धूम उड़ाई ।।वासु।।०
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि० ।।७।।
सुरस सुपक्व सुपावन फल ले, कंचन-थार भराई ।
मोक्ष महाफलदायक लखि प्रभु, भेंट धरो गुनगाई ।।वासु०।।
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ।।८।।
जल फल दरब मिलाय गाय गुन आठों अङ्ग नमाई ।
शिव-पद-राज हेतु हे श्रीपति ! निकट धरों यह लाई ।।वासु०।।
ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय अनर्घ्य पदप्राप्ताये अर्घ्यं नि० ।।९।।

पंचकल्याणक

कलिछट्ठि असाढ सुहायौ, गरभागम मंगल पायौ ।
दशमें दिवितें इत आये, शतइन्द्र जजे सिर नाये ।।१।।
ॐ ह्रीं अषाढ़कृष्णाषष्ठयां गर्भमंगलमंडिताय श्रीवासुपूज्यजि० अर्घ्यं
कलि चौदश फागुन जानौं, जनमें जगदीश महानों ।
हरि मेरु जजे तब जाई, हम पूजत है चितलाई ।। २ ।।
ॐ ह्री फाल्गुनकृष्णाचतुर्दश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीवासुपू० अर्घ्यं ।
तिथि चौदस फागुन श्यामा, धरियो तप श्रीअभिरामा ।
नृप सुन्दरके पय पायौ, हम पूजत अति सुख थायो ।।३।।
ॐ ह्री फाल्गुनकृष्णाचतुर्दश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीवासुपू० अर्घ्यं ।
वदि भादव दोइज सौहे, लहि केवल आतम जो है ।
अन अन्त गुनाकर स्वामी, नित बन्दौं त्रिभुवन नामी ।।४।।
ॐ ह्री भाद्रपदकृष्णाद्वितीयायां केवलज्ञानमंडिताय श्रीवासुपू०अर्घ्यं।
सित भादव चौदशि लीनों, निरवान सुथान प्रवीनों ।
पुर चंपा थानक सेती, हम पूजत निज हित हेती ।। ५ ।।
ॐ ह्रीं भाद्रपदशुक्लचतुर्दश्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीवासुपूज्यजिनेंद्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा—चम्पापुर मे पंचवर, कल्याणक तुम पाय ।
सत्तर धनु तन शोभनो, जय जय जय जिनराय ।।

महा-सुख-सागर आगर ज्ञान, अनंत सुखामृत मुक्त महान ।
महाबल मण्डित खण्डित काम, रमा शिव संग सदा विसराम ।।२।।
सुरिन्द फनिन्द खगिन्द नरिन्द, मुनिन्द जजैं तित पादरविन्द ।
प्रभु तुम अन्तर भाव विराग, सुबालहितें व्रतशील सों राग ।।३।।
कियो नहि राज उदास-स्वरूप, सुभावन भावत आतम रूप ।
अनित्य शरीर प्रपञ्च समस्त, चिदातम नित्य सुखाश्रित वस्त ।।४।।
अशर्न नही कोऊ शर्न सहाय, जह जिय भोगत कर्म-विपाय ।
निजातम कै परमेसुर शर्न, नही इनके बिन आपदहर्न ।।५।।
जगत्त जथा जल बुदबुद येव, सदा जिय एक लहै फलमेव ।
अनेक प्रकार धरी यह देह, भ्रमे भव कानन आनन नेह ।।६।।
अपावन सात कुधात भरीय, चिदातम शुद्ध सुभाव धरीय ।
धरैं इनसों जब नेह तबेव, सुआवत कर्म तबै वसुभेव ।।७।।
जबै तन भोग जगत्त उदास, धरै तब संवर निर्जर आस ।
करै जब कर्म कलङ्क विनाश, लहै तब मोक्ष महासुख राश ।।८।।
तथा यह लोक नराकृत नित्त, विलोकिय ते षट द्रव्य विचित्त ।
सुआतम जानन बोध विहीन, धरै किन तत्त्व प्रतीत प्रवीन ।।९।।
जिनागम ज्ञानरु संयम भाव, सबै जिन ज्ञान विना विरसाव ।
सुदुर्लभ द्रव्य सुक्षेत्र सुकाल, सुभाव सबै जिहतें शिव हाल ।।१०।।
लयो सब जोग सुपुन्य वशाय, कहो किम दीजिए नाहि गँवाय ।
विचारत यो लोकान्तिक आय, नमे पदपङ्कज पुष्प चढाय ।।११।।
कह्यो प्रभु धन्य कियो सुविचार, प्रबोधि सुयेम कियो जु विहार ।
तबै सौधर्म तनों हरि आय, रची शिविका चढि आप जिनाय ।।१२।।
धरे तप पाय सुकेवल बोध, दियो उपदेश सुभव्य संबोध ।

कनशालदुलि उजियाल हीर, हिमालगुलकनितै घनो ।
तसु पुञ्ज तुम पदतर धरत, पद लहत स्वच्छ सुहावनो ।।ज०।।
ॐ ह्री श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ।
पुष्कर अमरतरु जनितवर, अथवा अवर कर लाइया ।
तुम चरण पुष्करतर, सब समरसूल नशाइया ।।ज०।।
ॐ ह्री श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं नि० ।।
पकवान नैना घ्राण रसना, को प्रमोद सुदाय है ।
सो ल्याय चरण चढाय रोग, क्षुधाय नाश कराय है ।।ज०।।
ॐ ह्री श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ।
तममोहभानन जानि आनंद, आनि शरण गहो अबै ।
वर दीप धारो वार तुमढिग, सुपरज्ञान जु द्यो सबै ।।ज०।।
ॐ ह्री श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीप नि० ।
यह गंध चूरि दशांग सुन्दर, धूम्रध्वज मे खेय हो ।
वसुकर्म भर्म जराय तुम ढिग, निजसुधातम वेय हो ।।ज०।।
ॐ ह्री श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि० ।
रसथक्क पक्क सुभक्क चक्क, सुहावने मृदुपावने ।
फलसारवृन्द अमन्द ऐसो, ल्याय पूज रचावने ।।ज०।।
ॐ ह्री श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ।
शुचिनीर चंदन शालिचदन, सुमन चरु दीवाधरो ।
अरु धूप जुत फल अर्घ करि, करजोरजुग विनती करो ।।ज०।।
ॐ ह्री श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्य पदप्राप्तये अर्घ्यं नि० ।

पंचकल्याणक—छन्द सुन्दरी तथाद्रुतविलंबित

असित कातिक एकम भावनो, गरभको दिन सो गिन पावनो ।
किय सची तित चर्चन चावसो, हम जजै इत आनद भावसों ।।
ॐ ह्रीकार्तिककृष्णप्रतिपदिगर्भमङ्गलमंडितायश्रीअनंतनाथजि०अर्घ्यं
जनम जेठवदी तिथि द्वादशी, सकल मङ्गल लोकविषैं लशी ।

हरि जजे गिरिराज समाजतैं, हम जजैं इत आतमकाजतैं ।।
ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णद्वादश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीअनंतनाथ जि० अर्घ्यं०
भवशरीर विनश्वर भाइयो, असित जेठदुवादशि गाइयो ।
सकल इन्द्र जजे तित आइकैं, हम जजैं इत मङ्गल गाइकैं ।।
ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णद्वादश्यां निःक्रमणमहोत्सवमंडिताय श्रीअनन्तनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपा० ।
असित चैत अमावसको सही, परम केवलज्ञान जग्यो कही ।
लहि समोसृत धर्म धुरंधरो, हम समर्चत विघ्न सबै हरो ।।
ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णामावस्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीअनंतनाथ जि०अर्घ्यं०
असित चैततुरी तिथि गाइयो, अघतघाति हने शिव पाइयो ।
गिरि समेद जजे हरि आयकै, हम जजैं पद प्रीति लगाइकैं ।
*ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णचतुर्थ्यां मोक्षमङ्गलप्राप्ताय श्रीअनंतनाथ०अर्घ्यं ।

जयमाला

दोहा—तुम गुन वरनन येम जिम, खंविहाय करमान ।
तथा मेदिनी पदनि करि, कीनों चहत प्रमान ।।१।।
जय अनन्त रवि भव्यमन, जलजवृन्द विहसाय ।
सुमति कोकतिय थोक सुख, वृद्ध कियो जिनराय ।।
जे अनन्त गुनवन्त नमस्ते, शुद्धध्येय नितसन्त नमस्ते ।
लोकालोकविलोक नमस्ते, चिन्मूरत गुनथोक नमस्ते ।।३।।
रत्नत्रयधर धीर नमस्ते, करमशत्रुकरिकीर नमस्ते ।
चार अनन्त महन्त नमस्ते, जै जै शिवतियकन्त नमस्ते ।।४।।
पंचाचारविचार नमस्ते, पंचकर्णमदहार नमस्ते ।
पंच-परावृत-चूर नमस्ते, पंचमगतिसुखपूर नमस्ते ।।५।।
पंचलब्धिधरनेश नमस्ते, पंचभावसिद्धेश नमस्ते ।
छहो दरबगुन जान नमस्ते, छहों काल पहिचान नमस्ते ।।६।।

---

* चैत्रकृष्ण अमावस्याको मोक्षकल्याण अन्य पूजाओं मे लिखा गया है ।

छहो कायरक्षेश नमस्ते, छह सम्यक् उपदेश नमस्ते।
सप्तविशनववह्नि नमस्ते, जय केवलअपरह्नि नमस्ते ॥७॥
सप्ततत्त्वगुन भनन नमस्ते, सप्त श्वभ्रगत हनन नमस्ते।
सप्त भंग के ईश नमस्ते, सातो नयकथनीश नमस्ते ॥८॥
अष्टकरममलदल्ल नमस्ते, अष्टजोगनिरशल्ल नमस्ते॥
अष्टम धराधिराज नमस्ते, अष्ट-गुननि सिरताज नमस्ते ॥९॥
जै नवकेवल-प्राप्त नमस्ते, नव पदार्थथिति आप्त नमस्ते।
दशो धरम धरतार नमस्ते, दशों-बन्धपरिहार नमस्ते ॥१०॥
विघ्न-महीधर बिज्जु नमस्ते, जै ऊरधगति-रिज्जु नमस्ते।
तनकनक दुति पूर नमस्ते, इक्ष्वाकुजनसूर नमस्ते ॥११॥
धनु पचासतन उच्च नमस्ते, कृपासिन्धु गुन शुच्च नमस्ते।
सेहो-अङ्क निशङ्क नमस्ते, चितचकोर मृगअङ्क नमस्ते ॥१२॥
रागदोषमदटार नमस्ते, निज विचार दुखहार नमस्ते।
सुर-सुरेश-गन-वंद नमस्ते, 'वृन्द' करो सुखकंद नमस्ते ॥१३॥

घत्तानन्द छन्द

जय जय जिनदेवं, सुरकृतसेवं, नितकृतचित हुल्लासधरं।
आपद उद्धारं, समतागारं, वीतरागविज्ञान भरं ॥१४॥
ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(मदावलिप्तकपोल तथा रोडक छन्द मात्रा २४)

जो जन मनवचकायलाय, जिन जजै नेह धर।
वा अनुमोदन करै, करावै पढै पाठ वर॥
ताके नित नव होय, सुमगल आनन्ददाई।
अनुक्रमतैं निरवान, लहै सामग्री पाई॥१॥

इत्याशीर्वादः। परिपुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

श्री शान्तिनाथ जिनपूजा

(कवि वृन्दावन कृत) छन्द

या भव-कानन मे चतुरानन, पाप-पनानन घेरि हमेरी ।
आतम-जान न मान न ठान न, वान न हो न दई सठ मेरी ।
तामद भानन आपही हो, यह छान न आन न आननटेरी ।
आनगही शरनागत को, अब श्रीपतजो पत राखहु मेरी ।।१।।

ॐ ह्री श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्री श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठ. ।
ॐ ह्री श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव, वषट् ।

छन्द—हिमगिरि-गत-गङ्गा धार अभंगा, प्रासुक सङ्गा, भरिभृङ्गा ।
जर-मरन-मृतङ्गा, नाशिअघगा, पूजि पदङ्गा मृदुहिगा ।।
श्रीशांति-जिनेशं, नुतशक्रेशं वृषचक्रेशं चक्रेश ।
हनि अरि-चक्रेशं, हे गुनधेशं, दयामृतेशं, मक्रेशं ।।१।।

ॐ ह्री श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि०
वर वावन-चंदन, कदली नंदन, घन-आनन्दन सहित घसो ।
भव-ताप-निकंदन ऐरा नंदन, वंदि अमंदन चरन बसो ।।श्री.।।
ॐ ह्री श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चदनं नि० ।
हिमकरकरि लज्जत, मलयसुसज्जत, अच्छत जज्जत, भरि थारी ।
दुख-दारिद-गज्जत, सत-पद-सज्जत, भव-भय-भज्जत, अतिभारी ।।श्री०
ॐ ह्री श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० ।
मंदार सरोज कदली जोजं, पुञ्ज भरोजं, मलयभरं ।
भरि कञ्चन थारी, तुमढिग धारी, मदनविदारी, धीरधरं ।।श्री०
ॐ ह्री श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं नि० ।
पकवान नवीने, पावन कीने, षटरस-भीने, सुखदाई ।
मन-मोदन-हारे, क्षुधा-विदारे, आगैं धारे, गुन गाई ।।श्री०।।

ॐह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि० ।
तुम ज्ञान प्रकाशे, भ्रम-तम नाशे, ज्ञेय विकाशे, सुखरासे ।
दीपक उजियारा यातै धारा, मोह निवारा, निज भासे ।।श्री०।।
ॐ ह्रीं श्री शातिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि० ।
चन्दन करपूरं करि वर चूरं, पावक भूरं माहि जुरं ।
तसु धूम उड़ावै, नाचत आवै, अलि गुंजावै, मधुर सुरं ।।श्री०।।
ॐह्री श्री शातिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूप नि० ।
बादाम खजूरं दाडिम पूरं, निबुक भूर, लै आयो ।
तासो पद जज्जों, शिव फल सज्जो, निजरसरज्जों उमगायो ।।श्री०
ॐ ह्री श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ।
वसुद्रव्य सवारी तुम ढिग धारी, आनन्दकारी दृगप्यारी ।
तुम हो भवतारी, करुनाधारी, यातै थारी, शरणारी ।।श्री०।।
ॐ ह्री श्री शातिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि० ।

पचकल्याणक

असित सातय भादव जानिये, गरभ-मगल तादिन मानिये ।
शचि कियो जननी पद चर्चनं, हम करै इत ये पद अर्चनं ।
ॐ ह्री भाद्रपदकृष्णसप्तम्या गर्भमङ्गलमण्डिताय श्री शातिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि० ।
जनम जेठ चतुर्दशि श्याम है, सकलइंद्र सु आगत धाम है ।
गजपुरै गज साजि सबै तबै, गिरि जजे इत मै जजि हो अबै ।।
ॐ ह्री ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्या जन्ममगलप्राप्ताय श्रीशान्तिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि० ।
भव शरीर सुभोग असार है, इमि विचार तबै तप धार है ।
भ्रमर चोदश जेठ सुहावनी, धरमहेत जजो गुन पावनी ।।
ॐ ह्री ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां निःक्रमणमहोत्सवमण्डिताय श्रीशांति-नाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि० ।

शुकल पौष दशै सुखराश है, परम-केवलज्ञान प्रकाश है ।
भवसमुद्र उधारन देवकी, हम करै नित मंगल सेवकी ।।
ॐ ह्रीं पौषशुक्लदशम्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्रायार्घ्य
असित चौदस जेठ हने अरी, गिरि समेदथकी शिव-तियवरी ।
सकल इन्द्र जजे तित आइकै, हम जजैं इत मस्तक नाइकैं ।।
ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय श्रीशान्तिनाथायार्घ्यं ।

जयमाला (छन्द रथोद्धता)

शान्ति शान्ति गुन मंडिते सदा, जाहि ध्यावत सुपंडिते सदा ।।
मै तिन्हे भगत मंडिते सदा, पूजिहो कलुष खंडिते सदा ।। १ ।।
मोच्छहेत तुम ही दयालहो, हे जिनेश गुनरत्नमाल हो ।
मै अबै सुगुन-दाम ही धरों, ध्यावते तुरित मुक्ति-तिय वरो ।।२।।

छन्द पद्धरी

जय शान्तिनाथ चिद्रूपराज । भवसागर मे अद्भुत जहाज ।।
तुम तजि सरवारथ सिद्धथान । सरवारथजुत गजपुर महान ।।१।।
तित जनम लियौ आनन्द धार । हरि ततछिन आयो राजद्वार ।।
इन्द्रानी जाय प्रसूत-थान । तुमको करमे ले हरष मान ।। २ ।।
हरि गोददेय सो मोदधार । सिर चमर अमर ढारत अपार ।।
गिरराज जाय तित शिला पांड । तापे थाप्यौ अभिषेक मांड ।।३।।
तित पंचम उदधितनो सु वार । सुर कर कर करि ल्याये उदार ।।
तब इंद्रसहसकर करि अनंद । तुम सिर धारा ढारचौ सुनंद ।।४।।
अघ घघ घघ घघ धुनि होत घोर । भभ भभ भभ धध धध कलश शोर ।। द्रमद्रम द्रमद्रम बाजत मृदंग । झन नन नन नन नन नूपुरंग ।।५।। तन नन नन नन नन तनन तान । घन नन नन घंटा करत ध्वान । ताथेइ थेइ थेइ थेइ थेइ सुचाल । जुत नाचत नावत तुमहि भाल ।।६।। चट चट चट अटपट नटत नाट । झट झट झट हट नट शट विराट । इमि नाचत राचत भगत रंग । सुर लेत

तहां आनन्द संग ॥७॥ इत्यादि अतुल मंगल सुठाट। तित बन्यो जहा सुरगिरि विराट॥ पुनि करि नियोग पितु सदन आय। हरि सौंप्यौ तुम तित वृद्ध थाय ॥८॥ पुनि राजमांहि लहि चक्ररत्न। भोग्यो छखड करि घरम जत्न॥ पुनि तप धरि केवलरिद्धि पाय। भवि जीवन को शिवमग-बताय ॥९॥ शिवपुर पहुंचे तुम हे जिनेश। गुनमंडित अतुल अनन्त भेष ॥ मैं ध्यावतु हो नित शीश नाय। हमरी भवबाधा हरि जिनाय ॥ १०॥ सेवक अपनो निज जान जान। करुना करि भौ-भय भान भान॥ यह विघन-मूल-तरु खंड खंड। चितचिन्तित आनन्द मन्ड मन्ड ॥ ११ ॥

श्रीशपति महंता, शिव-तिय-कन्ता, सुगुन अनंता, भगवन्ता।
भव-भ्रमन हनन्ता, सौख्यअनन्ता, दातारं तारनवन्ता ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा !

शान्तिनाथ-जिनके पदपंकज, जो भवि पूजै मनवचकाय।
जनम जनम के पातक ताके, ततछिन तजिकै जाय पलाय ॥
मनवांछित सुख पावै सो नर, बांचै भगतिभाव अतिलाय।
तातैं 'वृन्दावन, नित बन्दै, जातैं शिवपुर राजकराय ॥ १ ॥

इत्याशीर्वादः, पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

श्री शांतिनाथ जिन पूजा

अडिल्ल।

शान्ति जिनेश्वर नमू तीर्थ वसु दुगुण ही,
पंचमचक्री अनग दुविध पट् सुगुण ही।
तृणवत रिधि सब छारि धारि तप शिव वरी,
आह्वाननविधि करूं वारत्रय उच्चरी ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथ जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर। संवौषट्।

ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथ जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथ जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव।

नाराच छन्द।

सैल हेमतै पतंत आपिका सुव्योमही।
रत्नभृंगधारि नीर सीत अंग सो मही॥
रोग सोग आधि ब्याधि पूजते नसाय है।
अनंत सौख्यसार शांतिनाथ सेय पाय हैं॥१॥
ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि०
चंदनादि कुंकमादि गंधसार ल्यावही।
भृंग वृंद गुंजतैं समीर संग ध्यावही॥ रोग सोग०॥२॥
ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्व०
इंदु कुंद हारतै अपार स्वेत साल ही।
दुति खंडकार पुंज धारिये विशाल ही॥ रोग सोग०॥३॥
ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथभगवज्जिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्०
पंचवरन पुष्पसार ल्याइये मनोग्य ही।
स्वर्न थाल धारिये मनोज नास जोग्यही॥ रोग सोग०॥४॥
ॐ ह्रीं श्रीशान्तिनाथभगवज्जिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं०
खंड घृत्तकार चारु सद्य मोदकादि ही।
सुष्ट मिष्ट हेमथाल धारि भव्य स्वादि ही॥ रोग सोग०॥५॥
ॐ ह्रीं श्रीशातिनाथभगवज्जिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं०
दीप जोतिको उद्योत धूम होत ना कदा।
रत्नथाल धारि भव्य मोहध्वात हूं विदा॥ रोग सोग०॥६॥
ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथभगवज्जिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं०
अग्र चंदनादि द्रव्य सार सर्व धार ही।
स्वर्ण धूप दानमे हुतास संग जार ही॥ रोग सोग०॥७॥
ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथभगवज्जिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्व०

घोटकेन श्रीफलेन हेमथाल मे भरैं।
जिनेशके गुणौघ गाय सर्व एनकूं हरैं ।। रोग० ।।८।।

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथभगवज्जिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपा०

छप्पय—सरद इन्दुसम अंबुतीर्थ उद्भव तृटहारी।
चंदन दाह निकंद सालि शशितैं दुति भारी ।।
सुर तरुके वर कुसुम सद्य चरु पावन वारैं।
दीप रतनमय जोति धूपतैं मधु झकारैं ।।
लहि फल उत्तम अरघ करि सुभ "रामचन्द्र" कन थाल भरि।
श्रीशांतिनाथके चरण जुग वसु विधि अरचै भाव धरि ।।६।।

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथभगवज्जिनेन्द्रायाऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व०

पंच कल्याणक अर्घं।

दोहा—सर्वारथ सिधितैं चये, भाद्रव सप्तमि स्याम।
ऐरादे उर अवतरे, जजू गर्भ अभिराम ।।१।।

ॐ ह्रीं भाद्रकृष्णसप्तम्यां गर्भमंगलमंडिताय श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व०।

जेठ चतुरदसि कृष्णही, जनमे श्रीभगवान।
सनपन करि सुरपदि जजे, मै जज हूं धरि ध्यान ।।२।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि०।

जेठ असित चउदसि धरचो, तप तजि राज महान।
सुर नर खगपति पद जजै, मै जज हू भगवान ।।३।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीशांतिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि०।

पोस सुकल ग्यारसि हने, घाति कर्म दुखदाय।
केवल लहि वृष भाखियौ, जजू शांति पद ध्याय ।।४।।

ॐ ह्रीं पौषशुक्लैकादश्या ज्ञान मगलमंडिताय श्रीशांतिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व० ।

कृस्न चतुरदसि जेठकी, हनि अघाति सिवथान ।
गये समेदाचल थकी, जजूं मोक्ष कल्यान ।। ५ ।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीशातिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व० ।

जयमाला ।

सोरठा—शांति जिनेस्वर पाय, बंदू मन वच कायतैं ।
देहु सुमति जिनराय, ज्यौं विनती रुचिसौं करौं ।।१।।

(चाल संसार सासरियो माई दोहिलौ ।)

शांति करम वसुहानिकैं, सिद्ध भये सिव जाय ।
शाति करो सब लोकमें, अरज यहै सुखदाय ।।
शांति करो जगशांतिजी ।। १ ।।
धन्य नयरि हथनापुरी, धन्य पिता विश्वसेन ।
धन्य उदर अयरा सती, शाति भये सुख देन ।। शांति० ।।२।।
भादव सप्तमि स्यामही, गर्भकल्याणक ठानि ।
रतन धनद वरषाइये, षट नव मास महान ।। शांति० ।।३।।
जेठ असित चउदस विषै, जनम कल्याणक इंद ।
मेरु करचौ अभिषेककैं, पूजि नचे सुरवृंद ।। शांति० ।।४।।
हेम वरन तन सोहनो, तुंग धनुष, चालीस ।
आयुवरसलख नरपती, सेवत सहस बतीस ।। शांति० ।।५।।
षटखंड नवनिधि तियसवैं, चउदहरतन भंडार ।
कछुकारण लखिके तजे, पणचव असिय अगार ।। शांति०।।६।।
देव रिषी सव आयकैं, पूजि चले जिन वोधि ।
लेय सुरा सिवका धरी, विरछ नंदीश्वर सोधि ।।शांति०।।७।।
कृष्ण चतुरदसि जेठकी, मनपरजै लहि ज्ञान ।
इंद कल्याणक तप करचो, ध्यान धरचौ भगवान ।।शांति०।।८।।

पष्टम करि हित असनकै, पुर सोमनस मझार ।
गये दयो पय मित्तजी, वरषे रतन अपार ।।शांति०।।६।।
मौनसहित वसु दुगुणही, बरस करे तप ध्यान ।
पौष सुकल ग्यारसि हने, घाति लह्यौ प्रभु ज्ञान ।।शांति।।१०।।
समवसरन धनपति रच्यौ, कमलासनपर देव ।
इन्द्र नरा षटद्रव्यकी, सुनि थिति थुति करि एव ।।शांति०।।११।।
धन्य जुगलपद मो तनौ, आयो तुम दरबार ।
धन्य उभै चखि ये भये, वदन जिनन्द निहारि ।।शांति०।।१२।।
आज सफल कर ये भये, पूजत श्रीजिन पाय ।
सीस सफल अब ही भयो, धोक्यो तुम प्रभु आय ।।शांति०।।१३।।
आज सफल रसना भई, तुम गुणगान करन्त ।
धन्य भयौ हिय मो तनौ, प्रभुपदध्यान धरन्त ।।शांति०।।१४।।
आज सफल जुग मो तनौ, श्रवन सुनत तुमबैन ।
धन्य भये वसु अग ये, नमत लयो अति चैन ।।शांति०।।१५।।
राम कहै तुम गुणतणा, इन्द लहै नहि पार ।
मै मति अलप अजान हूं, होय नही विसतार ।। शांति०।।१६।।
बरस सहस पचीसही, षोडस कम उपदेस ।
देय समेद पधारिये, मास रहे इक सेस ।। शांति०।।१७।।
जेठ असित चउदसि गये, हनि अघाति सिवथान ।
सुरपति उत्सव अति करे, मगल मोछि कल्यान ।।शांति०।।१८।।
सेवक अरज करै सुनो, हो करुणानिधि देव ।
दुखमय भवदधि तै मुझै, तारि करू तुम सेव ।। शांति०।।१६।।

घत्ता छन्द ।

इति जिन गुणमाला अमल रसाला जो भविजन कंठै धरई ।
हुय दिवि अमरेस्वर, पुहमि नरेस्वर, शिवसुन्दरि ततछिन वरई ।।
ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।

श्री नेमिनाथजिन पूजा

(छन्द लक्ष्मी, तथा अर्द्ध लक्ष्मीधरा)

जयति जय जयति जय जयति जय नेमकी, धर्म अवतार दातार शिव चैनकी। श्री शिवानन्द भौफन्द निकन्द ध्यावै जिन्है इन्द्र नागेन्द्र श्रो मैनकी। परम कल्याण के देन हारे तुम्हीं, देव तो एव नातें करौ एन की। थापि हो वार त्रय शुद्ध उच्चार के, शुद्धता धार भोपार कूं लेन की॥

ॐ ह्री श्री नेमिनाथ जिन! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्री श्री नेमिनाथ जिन! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्री श्री नेमिनाथ जिन! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

दाता मोक्षके श्री नेमिनाथ जिनराय दाता०॥ टेक॥
गंग नदी जल प्रासुक लीनौ, कंचन भृंग भराय।
मनवचतनतें धार देत ही सकल कलङ्क नसाय।
दाता मोक्ष के, श्री नेमिनाथ जिनराय, दाता॥ १॥
ॐ ह्री श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय जन्ममृत्युविनाशनाय जलं निर्व०।
हरिचन्दनजुत कदली नन्दन कुंकुम संघ घसाय।
विघ्नतापनाशनके कारन, जजौं तिहारे पाय॥२॥ दाता०
ॐ ह्री श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चन्दनं निर्व०।
पुण्य राशि तुम यश सम उज्ज्वल, तन्दुल शुद्ध मंगाय।
अखयसौख्य भोगनके कारण, पुञ्ज धरौं गुणगाय॥दाता०॥
ॐ ह्री श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व०।
पुंडरीक तृण द्रुमको आदिक, सुमन सुगन्धित लाय।
दर्पकमन्मथभञ्जनकारन जजहुं चरण लवलाय॥दाता०॥४॥

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय कामबाणविर्ध्वसनाय पुष्पं निर्वं० ।
घेवर बावर खाजे साजे, ताजे तुरित मंगाय ।
क्षुधा वेदनी नाश करणको, जजहुं चरण उमगाय ।।दाता०।।५
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वं० ।
कनकदीप नवनीत पूरकर, उज्ज्वल जोति जगाय ।
तिमिर मोहनाशक तुमको लखि जजहुं चरन हुलसाय ।।दा०।।
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वं० ।
दशविध गन्ध मंगाय मनोहर, गुञ्जत अलिगण आय ।
दशोबंध जारन के कारन, खेवौ तुम ढिग लाय ।।दा०।।७।
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वं० ।
सुरसवरण रसना मन भावन, पावन फल सु मंगाय ।
मोक्ष महाफल कारन पूजो, हे जिनवर तुम पाय ।।दा०।।८
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फल निर्वं० ।
जल फल आदि साज शुचि लीने, आठो दरब मिलाय ।
अष्टम छितिके राज करनको, जजौ अंग वसुनाय ।।दा०।।६
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि० ।

पंचकल्याणक

सित कातिक छट्ठ अमंदा, गरभागम आनन्द कन्दा ।
शचि सेव सिवापद आई, हम पूजत मनवच काई ।।१।।

ॐ ह्रीं कार्तिक शुक्ला षष्ठ्या गर्भमंगलप्राप्ताय श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वं० ।

सित सावन छट्टि अमंदा, जनमे त्रिभुवन के चन्दा ।
पितु समुद महासुख पायो, हम पूजत विघन नसायो ।।२।।

ॐ ह्रीं श्रावण शुक्ला षष्ठ्या जन्ममगलप्राप्ताय श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वं० ।

तजि राजमति व्रतलीनौ, सित सावन छट्टि प्रवीनो ।
शिवनारि तबै हरषाई, हम पूजैं पद शिर नाई ।।३।।
ॐ ह्रीं श्रावण शुक्ला षष्ठयां तपकल्याणकप्राप्ताय श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि० ।
सित आसिन एकम चूरे, चारों घाति अति क्रूरे ।
लहि केवल महिमा सारा, हम पूजे अष्ट प्रकारा ।।४।।
ॐ ह्रीं आश्विन शुक्ला प्रतिपदाया केवलज्ञानप्राप्ताय श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि० ।
सित षाढ अष्टमी चूरे, चारो अघातिया क्रूरे ।
शिव ऊर्जयन्त तै पाई, हम पूजैं ध्यान लगाई ।।५।।
ॐ ह्रीं आषाढ शुक्ला अष्टम्या मोक्षमगलप्राप्ताय श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि०

जयमाला ।

दोहा—श्याम छवि तनुचाप दश, उन्नत गुणनिधि धाम ।
शंख चिन्ह पदमे निरखि, पुनि पुनि करो प्रणाम ।। १ ।।
जय जय जय नेमि जिनंद चन्द, पितु समुद देन आनन्द कन्द ।
शिवमात कुमुद मन मोद दाय, भविवृन्द चकोर सुखी कराय ।।२।।
जय देव अपूरव मारतंड, तुम कीन ब्रह्मसुत सहज खण्ड ।
शिवतिय मुख जलज विकाशनेश, नहि रहा सृष्टि मे तम अशेष ।।३।।
भवि भीत कोक कीनो अशोक, शिव मग दरशायो शर्म थोक ।
जय जय जय जय तुम गुण गंभीर, तुम आगम निपुण पुनीत धीर ।।
तुम केवल जोति विराजमान, जय जय जय जय करुणा निधान ।
तुम समवसरण मे तत्त्व भेद, दरशायो जाते नशत खेद ।।६।।
तित तुमको हरि आनन्द धार, पूजत भगती जुत बहु प्रकार ।
पुनि गद्य पद्य मय सुजश गाय, जय बल अनत गुणवन्त राय ।।७।।
जय शिव शङ्कर ब्रह्मा महेश, जय बुद्ध विधाता विष्णुवेष ।
जय कुमति मतंगन को मृगेन्द्र, जय मदन ध्वात को रवि जिनेन्द्र।।८।।

जय कृपा सिन्धु अविरुद्ध बुद्ध, जय ऋद्धि सिद्धि दाता प्रबुद्ध।
जय जग जन मन रञ्जन महान, जय भवसागर महं सुष्ठुयान ।।९।।
तुम भगति करै ते धन्य जीव, ते पावे दिव शिवपद सदीव।
तुमरो गुण देव विविध प्रकार, गावत नित किन्नर की जुनार ।।१०।।
तुम भगति माहि लवलीन होय, नाचै ताथेई थेइ थेइ बहोय।
तुम करुणा सागर सृष्टि पाल, अब मोकों बेगि करो निहाल ।।११।।
मै दुख अनन्त वसु करम जोग, भोगे सदीव नहि और रोग।
तुम को जगमे जान्यो दयाल, हो वीतराग गुण रतन माल ।।१२।।
तातै शरणा अब गही आय, प्रभु करो बेगि मेरी सहाय।
यह विघन करम मम खण्ड खण्ड, मनवाछित कारज मण्ड मण्ड ।।१३।।
संसार कष्ट चक चूर चूर, सहजानन्द मम उर पूर पूर।
निज पर प्रकाश बुद्धि देह देह, तजिके विलंब सुधि लेह लेह ।।१४।।
हम जांचत है यह बार बार, भव सागर ते मो तार तार।
नही सह्यो जात यह जगत दु:ख, ताते बिनवो हे सुगुन मुक्ख ।।१५।।

घत्तानन्द

श्री नेमिकुमारं जितमदमारं, शीलागारं, सुखकारं।
भवभयहरतारं शिवकरतारं, दातारं धर्माधारं ।।१६।।
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय महार्घ्य निर्वपामीति स्वाहा।

मालिनी—सुख, धन, जश, सिद्धी पुत्र पौत्रादि वृद्धी।
सकल मनसि सिद्धी होति है ताहि ऋद्धी ।।
जजत हरषधारी नेमिको जो अगारी।
अनुक्रम अरि जारी सो वरै मोक्षनारी ।।१६।।

इत्याशीर्वादः।

श्री पार्श्वनाथ पूजा

गीताछन्द ।

वर स्वर्ग आनतको विहाय, सुमात वामा सुत भये ।
अश्वसेनके सुत पार्श्व जिनवर, चरन जिनके सुर नये ।।
नवहाथ उन्नत तन विराजै, उरग लच्छन पद लसै ।
थापूं तुम्हें जिन आय तिष्ठो, कर्म मेरे सब नसै ।।१।।
ॐह्ली श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर, संवौषट् ।
ॐह्ली श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐह्ली श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्र ! अत्रमम सन्निहितो भव भव वषट् ।

अथाष्टक-नाराच छन्द ।

क्षीरसोमके समान अंबुसार लाइये,
हेमपात्र धारकैं सु आपको चढाइये ।
पार्श्वनाथदेव सेव आपको करू सदा,
दीजिए निवास मोक्ष भूलिये नही कदा ।।१।।
ॐह्ली श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं० ।
चंदनादि केशरादि स्वच्छ गन्ध लीजिये ।
आप चर्न चर्च मोहताप को हनोजिये ।। पार्श्व० ।।२।।
ॐह्ली श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदन० ।
फेन चंदके समान अक्षतान् लाइकैं ।
चर्ण के समीप सार पुञ्जको रचाइकैं ।। पार्श्व० ।।
ॐ ह्ली श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ।
केवडा गुलाब और केतकी चुनायकै ।
धार चर्ण के समीप काम को नसाइकैं ।।पार्श्व०।।
ॐ ह्ली श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं नि० ।
घेवरादि बावरादि मिष्ट सद्य मे सने ।
आप चर्ण चर्चते क्षुधादि रोगको हनै ।।पार्श्व०।।

ॐ ह्री श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि० ।

लाय रत्नदीपको सनेह पूरके भरूं ।
वात्तिका कपूर वारि मोह ध्वातकूं हरूं ।। पार्श्व० ।।

ॐ ह्री श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि० ।

धूप गन्ध लेयकै सु अग्निसंग जारिये ।
तास धूपके सुसंग अष्ट कर्म वारिये ।। पार्श्व०।।७।।

ॐ ह्री श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मविनाशनाय धूपं नि० ।

खारिकादि चिरभटादि रत्नथाल मे भरूं ।
हर्षधारिकै जजू सुमोक्ष सुक्खको वरूं ।।पार्श्व०।।८।।

ॐ ह्री श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फल नि० ।

नीरगंध अक्षतान् पुष्प चरु लीजिये ।
दीप धूप श्रीफलादि अर्घतै जजीये ।।पार्श्व० ।।९।।

ॐ ह्री श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्य पदप्राप्तये अर्घ्यं नि० ।

पंच कल्याणक ।

शुभआनत स्वर्ग विहाये, वामा माता उर आये ।
वैशाखतनी दुतिकारी, हम पूजैं विघन निवारी ।।१।।

ॐ ह्री श्रीवैशाखकृष्णद्वितीयाया गर्भमंगलमण्डिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं० ।

जनमे त्रिभुवन सुखदाता, एकादशि पौष विख्याता ।
श्यामा तन अद्‌भुत राजै, रवि कोटिक तेज सु लाजै ।।२।।

ॐह्रीपौषकृष्णैकादश्या जन्ममङ्गलप्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्रायअर्घ्यं.

कलि पौष इकादशि आई, तब बारह भावना भाई ।
अपने कर लोच सु कीना, हम पूजैं चरन जजीना ।।३।।

ॐह्रीपौषकृष्णैकादश्यां तपोमगलमंडिताप्तायश्रीपार्श्वनाथजिनेद्राय अर्घ्यं

कलि चैत चतुर्थी आई, प्रभु केवलज्ञान उपाई ।
तब प्रभु उपदेश जु कीना, भवि जीवनको सुख दीना ।।४।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णचतुर्थीदिने केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं० ।

सित सात सावन आई, शिवनारि वरी जिनराई ।
सम्मेदाचल हरि माना, हम पूजै मोक्ष कल्याना ॥५॥

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लसप्तम्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं० ।

जयमाला ।

पारसनाथ जिनेन्द्रतने वच, पौनभखी जरते सुन पाये ।
करयो सरधान लह्यो पद आन भयो पद्मावति शेष कहाये ॥
नाम प्रताप टरें संताप सु भव्यनको शिवशरम दिखाये ।
हे विश्वसेनके नंद भले, गुण गावत है तुमरे हरखाये ॥१॥

दोहा—केकी-कंठ समान छवि, वपु उतंग नव हाथ ।
लक्षण उरग निहारपग, बंदो पारसनाथ ॥ २ ॥

पद्धरि छन्द ।

रची नगरी छहमास अगार, बने चहुंगोपुर शोभ अपार ।
सुकोटतनी रचना छबि देत, कंगूरनपै लहकैं बहुकेत ॥ ३ ॥
बनारस को रचना जु अपार, करी बहुभांति धनेश तैयार ।
तहा विश्वसेन नरेन्द्र उदार, करै सुख वाम सु दे पटनार ॥४॥
तज्यो तुम आनत नाम विमान, भये तिनके वर नंदन आन ।
तबै सुरइन्द्र नियोगन आय, गिरिंद करो विधि न्हौन सु जाय ॥५॥
पिता घर सौपि गये निज धाम, कुबेर करै वसु जाम सु जाम ।
बढ़ै जिन दोज मयंक समान, रमे बहु बालक निर्जर आन ॥६॥
भये जब अष्टम वर्ष कुमार, धरे अणुव्रत्त महासुखकार ।
पिता जब आनकरी अरदास, करौ तुम ब्याह वरैं मम आस ॥७॥
करी तब नांहि रहे जगचन्द, किये तुम काम कषाय जु मंद ।
चढे गजराज कुमारन संग, सु देखत गंगतनो सु तरंग ॥८॥

लख्यो इक रङ्क करै तप घोर, चहुंदिशि अगनि बलै अति जोर।
कही जिननाथ अरे सुन भ्रात, करै बहु जीवन की मत घात ॥९॥
भयो तब कोप कहै कित जीव, जले तब नाग दिखाय सजीव।
लख्यो यह कारण भावन भाय, नये दिव ब्रह्मऋषीसुर आय ॥१०
तबही सुर चार प्रकार नियोग, धरी शिविका निज कंध मनोग।
कियो वन माहि निवास जिनंद, धरे व्रत चारित आनद कद ॥११॥
गहे तहं अष्टम के उपवास, गये धनदत्त तने जु अवास।
दियो पयदान महा-सुखकार, भई पनवृष्टि तहां तिहि वार ॥१२॥
गये तब काननमांहि दयाल, धरचो तुम योग सबहि अघटाल।
तबै वह धूम सुकेत अयान, भया कमठाचरको सुर आन ॥१३॥
करै नभ-गौन लखे तुम धीर, जु पूरब वैर विचार गहीर।
कियो उपसर्ग भयानक घोर, चली बहु तीक्षण पवन झकोर ॥१४॥
रह्यो दसहूँ दिशि मे तम छाय, लगी बहु अग्नि लखो नहिं जाय।
सुरुण्डन के बिन मुण्ड दिखाय, पडै जल मूसलधार अथाय ॥१५॥
तबै पदमावति कंथ धनिंद, नये युग आय जहा जिनचद।
भग्यो तब रङ्क सु देखत हाल, लह्यो तब केवलज्ञान विशाल ॥१६॥
दियो उपदेश महा हितकार, सुभव्यन बोधि समेद पधार।
सुवर्णभद्र जहँ कूट प्रसिद्ध, वरी शिव नारि लही वसुरिद्ध ॥१७॥
जजूं तुम चरन दुहूं कर जोर, प्रभू लखिये अब ही मम ओर।
कहे 'बखतावर रतन' बनाय, जिनेश हमे भवपार लगाय ॥१८॥

घत्ता—जय पारस देव सुरकृत सेवं वंदत चरण सुनागपती।
करुणा के धारी परउपकारी, शिवसुखकारी कर्महती ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मदावलिप्त—जो पूजै मनलाय भव्य पारस प्रभु नितही,
ताके दुख सब जाय भीति व्यापै नहि कितही।

सुख संपति अधिकाय पुत्र मित्रादिक सारे,
अनुक्रमसों शिव लहै 'रतन' इमि कहै पुकारे ।।२०।।

इत्याशीर्वादः (पुष्पाञ्जलि)

श्री महावीर जिन पूजा

श्रीमत वीर हरै भवपीर भरै सुख सीर अनाकुलताई ।
केहरि अङ्क अरीकरदंक नये हरि पंकति मौलि सुआई ।।
मै तुमको इत थापतु हौ प्रभु भक्ति समेत हिये हरषाई ।
हे करुणाधन धारक देव ! इहा अब तिष्ठहु शीघ्रहि आई ।।
ॐह्री श्रीवर्धमान जिनेन्द्र ! अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वाननं ।
अत्र तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।
क्षीरोदधि सम शुचि नीर, कञ्चन भृङ्ग भरो ।
प्रभु वेग हरो भवपीर, यातैं धार करौ ।
श्री वीर महा अतिवीर, सन्मति नायक हो ।
जय वर्धमान गुण धीर सन्मति दायक हो ।।१।।
ॐह्री श्री महावीरजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं०।।
मलयागिर चन्दन सार, केसर संग घसों ।
प्रभु भव आताप निवार, पूजत हिय हुलसो ।श्रीवीर०। चदनं० ।
तन्दुल सित शशि सम शुद्ध, लीने थार भरी ।
तसु पुञ्ज धरो अविरुद्ध, पाऊं शिवनगरी ।।श्रीवीर०।।अक्षतं०।।
सुरतरु के सुमन समेत, सुमन सुमन प्यारे ।
सो मनमथ-भञ्जन हेत, पूजों पद थारे ।।श्रीवीर०।पुष्प०।।
रस रञ्जत सञ्जत सद्य, मञ्जत थार भरो ।
पद जञ्जत रञ्जत अद्य, भञ्जत भूख अरो ।।श्रीवीर०।।नैवेद्यं।।
तम खंडित मंडित-नेह, दीपक जोवत हौ ।
तुम पदतर हे सुख-गेह, भ्रमतम खोवत हौ ।।श्रीवीर०।।दीपं०।।

हरिचन्दन अगर कपूर, चूर सुगन्ध करा ।
तुम पदतर खेवत भूरि, आठो कर्म जरा ।।श्रीवीर०।।धूपम्।।
ऋतु फल कलवर्जित लाय, कञ्चन थार भरों ।
शिवफल हित हे जिनराय, तुम ढिग भेंट धरों ।।श्रीवीर०।।फलं०।।
जल फल वसु सजि हिम थार, तन मन मोद धरों ।
गुण गाऊं भवदधि पार, पूजत पाप हरों श्रीवीर०।अर्घ्यम्।।६।।

पंच कल्याणक

मोहि राखो हो शरना, वर्धमान जिनरायजो, मोहि०
गरभ षाढ सित छट्ठ लियो तिथि, त्रिशलाउर अघहरना ।
सुर सुरपति तित सेवकरी नित, मै पूजो भवतरना ।।मोहि०।।
ॐह्री आषाढ शुक्लाषष्ठ्यांगर्भमंगलमंडिताय श्रीमहावीरायऽर्घ्यं ।
जनम चैत सित तेरस के दिन कुण्डलपुर कनवरना,
सुरगिरि सुरगुरु पूज रचायो मैं पूजों भव हरना ।। मोहि०।।
ॐह्री चैत्रशुक्लात्रयोदश्या जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीमहा०अर्घ्यं ।।
मंगसिर असित मनोहर दशमी ता दिन तप आचरना,
नृपकुमार घर पारण कीनो मै पूजो तुम चरना ।।मोहि०।।
ॐह्रीमार्गशीर्षकृष्णादशम्यातपोमगलमंडितायश्रीमहावीरायऽर्घ्यं ।
शुकल दशे वैशाख दिवस अरि घाति चतुक क्षय करना ।
केवल लहि भवि भवसर तारे जजो चरन सुखभरना ।।मोहि०।।
ॐह्री वैशाखशुक्लादशम्या केवलज्ञानमंडिताय श्रीमहावीरायऽर्घ्यं ।
कार्तिक श्याम अमावस शिव तिय पावापुरतैं वरना,
गणफणिवृन्द जजै नितबहुविधि मै पूजों भव हरना ।।मोहि०।।
ॐ ह्री कार्तिक कृष्णामावश्याया मोक्षकल्याणकमंडिताय श्रीमहावीरजिनाय अर्घ्यं० ।

जयमाला—गनधर अशनिधर चक्रधर हरधर गदाधर वरवदा ।
अरु चापधर विद्यासुधर त्रिशूलधर सेवहि सदा ।।

दुख हरन आनद-भरन तारन तरन चरन रसाल है।
सुकुमाल गुनमनिमाल उन्नत भाल की जयमाल है ।।१।।
घत्ता–जय त्रिशलानन्दन हरिकृतवन्दन जगदानन्दन चन्दवरं,
भवतापनिकन्दन तनमनकन्दन रहित सपन्दन नयनधरं ।।२।।

त्रोटक छन्द ।

जय केवलभानु कला सदन, भवि कोक विकासन कञ्जवनं ।
जगजीत महारिपु मोह हरं, रजज्ञान दृगावर चूर करं ।।१।।
गर्भादिक मंगल मण्डित हो, दुख दारिद को नित खण्डित हो ।
जगमाहि तुम्ही सत पण्डित हो, तुमही भव भावविहण्डित हो ।।२।।
हरिवंश सरोजनको रवि हो, बलवन्त महन्त तुमही कवि हो ।
लहि केवल धर्म प्रकाश कियो, अबलौ सोई मारग राजति यो ।।३।।
पुनि आप तने गुनमाहि सही, सुरमग्न रहे जितने सबही ।
तिनकी वनिता गुनगावत है, लय ताननि सो मन भावत हैं ।।४।।
पुनि नाचत रङ्ग उमङ्ग भरी, तुव भक्ति विषै पग एम धरी ।
झननं झनन झननं झननं, सुर लेत तहां तननं तननं ।।५।।
घननं घनन घन घण्ट बजे, दृम दृम दृम दृम मरदङ्ग सजे ।
गगनागन-गर्भगता सुगता, ततता ततता अतता वितता ।।६।।
धृगता धृगता गति बाजत है, सुरताल रसाल जु छाजत है ।
सननं सननं सननं नभ मे, इक रूप अनेक जु धारि भ्रमै ।।७।।
केइ नारि सुवीन बजावति हैं, तुमरो जस उज्ज्वल गावति है ।
करताल विषै करताल धरै, सुरताल विशाल जु नाद करै ।।८।।
इन आदि अनेक उछाह भरो, सुर भक्ति करै प्रभुजो तुमरो ।
तुमही जगजोवन के पितु हो, तुमही विन कारनतें हितु हो ।।९।।
तुमही सब विघ्न विनाशक हो, तुमही निज आनन्द भासक हो ।
तुमही चित चिंतत दायक हो, जगमाहि तुमही सब लायक हो ।।१०।।
तुमरे पन मङ्गल मांहि सही, जिय उत्तम पुण्य लियो सबही ।
हम तो तुमरी शरणागत है, तुमरे गुनमें मन पागत है ।।११।।

प्रभु मो हिय आप सदा बसिये, जब लौं वसु कर्म नहीं नसिये।
तबलो तुम ध्यान हिये वरतो, तबलों श्रुतचिंतन चित्तरतो ॥१२॥
तबलो व्रत चारित चाहत हों, तबलो शुभ भाव सुगाहत हो।
तबलो सत सङ्गति नित्त रहो, तबलो मम सञ्जम चित्त गहो ॥१३॥
जबलो नहिं नाश करो अरिको, शिवनारि वरों समता धरिको।
यह द्यो तबलो हमको जिनजो, हम जाचतु है इतनी सुनजो ॥१४॥
घत्ता—श्रीवीर जिनेशा, नमत सुरेशा, नाग नरेशा, भगति भरा।
'वृन्दावन' ध्यावै, विघन नशावै, वांछित पावै, शर्मवरा।
ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय महार्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।
दोहा—श्रीसन्मति के जुगल पद, जो पूजे धरि प्रीत।
'वृन्दावन' सो चतुर नर, लहे मुक्ति नवनीत ॥
इत्याशीर्वाद.।

—देवपूजा—

दोहा—प्रभु तुम राजा जगत के, हमे देय दुख मोह।
तुम पद पूजा करत हूँ, हमपै करुणा होहि ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहित। षट्चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीजिनेन्द्र भगवन् अत्रावतरावतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

छन्द त्रिभङ्गी।

बहु तृषा सतायो, अति दुख पायो, तुमपे आयो जल लायो।
उत्तम गङ्गाजल, शुचि, अति शीतल, प्रासुक निर्मल, गुन गायो।
प्रभु अन्तरजामी, त्रिभुवननामी, सबके स्वामी, दोष हरो।
यह अरज सुनीजे, ढील न कीजे, न्याय करीजे, दया धरो ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीजिनेन्द्र भगवद्भ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं०।

अघतपत निरन्तर, अगनिपटन्तर, मो उर अन्तर, खेद करयो।
लै बावन चंदन, दाहनिकंदन, तुमपदबंदन, हरष धरयो॥ प्रभु० ॥
ॐ ह्रीं अष्टा० श्रीजिनेभ्यो भवतापनाशाय चन्दनं नि० ।
औगुन दुखदाता कह्यो न जाता, मोहि असाता, बहुत करै।
तन्दुल गुनमण्डित, अमल अखंडित, पूजत पंडित, प्रीतिधरै॥ प्रभु०
ॐ ह्रीं अष्टा० जिनेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० ।
सुर नर पशुको दल काम महाबल, बात कहत छल मोहि लिया।
ताके-शर लाऊं फूल चढाऊं, भगति बढाऊं खोल हिया॥ प्रभु० ॥
ॐ ह्रीं अष्टा० श्रीजिनेभ्यो कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं नि० ।
सब दोषनमाही, जासम नाही, भूख सदा ही मो लागै।
सदघेवर बावर, लाडू बहु धर, थार कनक भर, तुम आगै॥प्रभु०॥
ॐ ह्रीं अष्टा० श्रीजिनेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि० ।
अज्ञान महातम, छाय रह्यो मम, ज्ञान ढक्यो हम, दुख पावै।
तम मेटनहारा, तेज अपारा, दीप संवारा, जस गावै॥ प्रभु० ॥
ॐ अष्टा० श्रीजिनेभ्यो मोहान्धकारविनाशाय दीपं नि० ।
इह कर्म महावन, भूल रह्यो जन, शिवमारग नहिं पावत है।
कृष्णागुरुधूपं, अमल अनूपं, सिद्धस्वरूपं ध्यावत है॥ प्रभु० ॥
ॐ ह्रीं अष्टा० श्रीजिनेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं नि० ।
सबते जोरावर, अन्तराय अरि, सुफल विघ्न करि डारत है।
फलपुञ्ज विविध भर, नयनमनोहर, श्री जिनवर पद धारत है॥प्रभु०
ॐ ह्रीं अष्टा० श्रीजिनेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं० ।
आठों दुखदानी, आठ निशानी, तुम ढिग आनि निवारन हो।
दीननिस्तारन, अधम उधारन 'द्यानत' तारन, कारन हो॥प्रभु०॥
ॐ ह्रीं अष्टा० श्रीजिनेन्द्रभगवद्भ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं ।

जयमाला।

दोहा—गुण अनंत को कहि सकै, छियालीस जिनराय।
प्रगट सुगुन गिनती कहूं, तुम ही होहु सहाय॥ १ ॥

एक ज्ञान केवल जिन स्वामी, दो आगम अध्यातम नामी ।
तीन काल विधि परगट जानी, चार अनन्तचतुष्टय ज्ञानी ।।२।।
पञ्च परावर्तन परकासो, छहो दरब गुन परजय भासो ।
सातभङ्गवानी परकाशक, आठो कर्म महारिपु नाशक ।।३७
नव तत्त्वनके भाखनहारे, दश लच्छनसो भविजन तारे ।
ग्यारह प्रतिमाके उपदेशी, बारह सभा सुखी अकलेशी ।।४।।
तेरहविधि चारितके दाता, चौदह मारगना के ज्ञाता ।
पन्द्रह भेद प्रमाद निवारी, सोलह भावन फल अविकारी ।।५।।
तारे सत्रह अङ्क भरत भुव, ठारै थान दान दाता तुव ।
भाव उनीस जु कहे प्रथम गुन, बोस अङ्कगणधरजोकी धुन ।।
इकइस सर्व घातविधि जानै, बाइस बंध नवम गुणथानै ।
तेइस निधि अरु रतन नरेश्वर, सो पूजे चौबीस जिनेश्वर ।।७।।
नाश पचीस कषाय करी है, देशघाति छब्बीस हरी है ।
तत्त्व दरब सत्ताइस देखे, मति विज्ञान अठाइस पेखे ।।८।।
उनतीस अङ्क मनुष सब जाने, तीस कुलाचल सर्व बखाने ।
इकतिस पटल सुधर्म निहारे, बत्तिस दोष समाइक टारे ।।९।।
तेतिस सागर सुखकर आये, चौतिस भेद अलब्धि बताये ।
पैंतिस अक्षर जप सुखदाई, छत्तिस कारन रीति मिटाई ।।१०।।
सैतिस मग कहि ग्यारह गुनमे, अडतिस पद लहि नरक अपुनमे ।
उनतालीस उदीरन तेरम, चालिस भवन इन्द्र पूजे नम ।।११।।
इकतालीस भेद आराधन, उदै बियालिस तीर्थंकर भन ।
तैतालीस बन्ध ज्ञाता नहि, द्वार चवालीस नर चौथेमहि ।।१२।।
पैतालीस पल्य के अक्षर, छियालीस बिन दोष मुनीश्वर ।
नरक उदै न छियालिस मुनिधुन, प्रकृतछियालीस नाश दशमगुन ।
छियालीस घन राजु सात भुव, अङ्क छियालीस सरसो कहि कुव ।
भेद छियालीस अन्तर तपवर, छियालीस पूरन गुन जिनवर ।

अडिल्ल—मिथ्यातमन निवारण चद्र समान हो। मोहतिमिर वारनको कारन भान हो॥ काम कषाय मिटावन मेघ मुनीश हो। 'द्यानत' सम्यकरतनत्रयगुनईश हो॥१५॥

ॐ ह्री अष्टादशदोषरहितषट्चत्वारिंशतगुणसहितश्रीजिनेन्द्रभगवद्भ्यो पूर्णाऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ सरस्वती पूजा

(शास्त्रजी को उच्चासन पर विराजमान करके पूजा करनी चाहिये)

दोहा—जनम जरा मृत्यु क्षय करै, हरै कुनय जडरीति।
भवसागरसो ले तिरै, पूजै जिनवचप्रीति॥ १॥

ॐ ह्री श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतिवाग्वादिनी! अत्र अवतर अवतर, संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ. ठ.। अत्र मम सन्निहिता भव भव वषट्।

क्षीरोदधि गगा, विमल तरंगा, सलिल अभगा, सुखसंगा।
भरि कंचन झारी, धार निकारी, तृषा निवारी, हित चंगा॥
तीर्थंकरकी धुनि, गणधरने सुनि, अंग रचे चुनि ज्ञान मई।
सो जिनवरवानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवन मानी, पूज्य भई॥१॥
ॐ ह्री श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वती देव्यै जलं नि०।

करपूर मंगाया, चन्दन आया, केशर लाया, रग भरी।
शारदपद वन्दौ, मन अभिनन्दौ, पापनिकंदौ, दाहहरी॥तीर्थं०॥२॥
ॐ ह्री श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै चन्दन नि० स्वाहा।

सुखदास कमोदं, धारकमोद, अतिअनुमोदं चंदसमं।
बहु भक्ति बढाई, कीरति गाई, होहु सहाई, मात ममं॥तीर्थं०॥
ॐ ह्री श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अक्षतान् नि०॥३॥

बहुफूलसुवासं, विमलप्रकासं, आनन्दरासं लाय धरे।
मम काम मिटायो, शील बढायो, सुख उपजायो दोष हरे॥तीर्थं०॥
ॐ ह्री श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै पुष्पं नि०॥४॥

पकवान बनाया, बहुघृत लाया, सब विध भाया, मिष्ट महा।
पूंजूं थुति गाऊं, प्रीति बढाऊं, क्षुधा नसाऊं, हर्ष लहा ।।तीर्थं०।।
ॐ ह्री श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै नैवेद्यं नि० ।।५।।
करि दीपक ज्योतं, तम छय होतं, ज्योति उदोतं, तुमहि चढै ।
तुमहो परकाशक, भरमविनाशक, हम घट भाशक ज्ञान बढै ।।तीर्थं०।।
ॐ ह्री श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै दीपं नि० ।।६।।
शुभगंध दशोंकर, पावकमे धर, धूप मनोहर खेवत है । सब
पाप जलावैं, पुण्य कमावैं, दास कहावे, सेवत हैं ।।तीर्थं०।।
ॐ ह्री श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै धूपं नि० ।।७।।
बादाम छुहारी, लोंग सुपारी, श्रीफल भारी ल्यावत है ।
मनवाछितदाता-मेट असाता, तुम गुन माता ध्यावत है ।।तीर्थं०।।
ॐ ह्री श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै फलं नि० ।।८।।
नयननिसुखकारी, मृदुगुनधारी, उज्ज्वल भारी, मोल धरैं ।
शुभगंधसम्हारा, बसन निहारा, तुमतर धारा ज्ञान धरै ।।तीर्थं०।।
ॐ ह्री श्रीजिनसुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अर्घ्यं नि० ।।९।।
जल चन्दन अच्छत, फूल चरु चत, दीप धूप अति फल लावै ।
पूजाको ठानत, जो तुम जानत, सो नर 'द्यानत' सुख पावै ।।तीर्थं०
ॐह्री श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्येऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।१०।।

जयमाला

सोरठा—ओंकार धुनिसार, द्वादशांग वाणी विमल ।
नमो भक्ति उरधार, ज्ञान करै जडता हरै ।।
पहलो आचारांग बखानो, पद अष्टादस सहस प्रमानो ।
दूजा सूत्रकृतं अभिलाष, पद छत्तीस सहस गुरुभाष ।।१।।
तीजा ठाना अंग सुजान, सहस छियालिस पद सरधानं ।
चौथा समवायांग निहारं, चौसठ सहस लाख इकधारं ।।२।।
पञ्चम व्याख्याप्रगपति दरशं, दोयलाख अट्ठाइस सहसं ।

छट्ठा ज्ञातृकथा विस्तारं, पांचलाख छप्पन हज्जारं ।।३।।
सप्तम उपासकाध्ययनंगं, सत्तर सहस ग्यारह लख भंगं ।
अष्टम अन्तकृतं दश ईशं, सहस अठाईस लाख तेइसं ।।४।।
नवम अनुत्तरदश सुविशालं, लाख बानवै सहस चवालं ।
दशम प्रश्न व्याकरण विचारं, लाखतिरानव सोल हजारं ।।५।।
ग्यारम सूत्रविपाक सुभाखं, एक कोड चौरासी लाखं ।
चार कोडि अरु पन्द्रह लाखं, दो हजार सब पद गुरुशाखं ।।६।।
द्वादश दृष्टिवाद पन भेदं, इकसौ आठ कोडिपन वेदं ।
अड़सठ लाख सहस छप्पन है, सहित पंचपद मिथ्याहन है ।।७।।
इक सौ बारह कोडि बखानो, लाख तिरासी ऊपर जानो ।
ठावन सहस पंच अधिकाने, द्वादश अङ्ग सर्व पद माने ।।८।।
कोड़ि इकावन आठहि लाखं, सहस चुरासी छहसौ भाखं ।
साढे इकइस श्लोक बताये, एक एक पदके ये गाये ।।९।।

घत्ता—जा बानीके ज्ञानमे, सूझै लोक अलोक ।
'द्यानत' जगजयवन्त हो, सदा देत हों धोक ।। १ ।।

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति० ।

इति सरस्वती पूजा ।

गुरु पूजा।

दोहा—चहुं गति दुखसागरविषैं, तारनतरन जहाज ।
रतनत्रयनिधि नगन तन, धन्य महा मुनिराज ।। १ ।।

ॐ ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुसमूह ! अत्रावतरावतर, संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव २ वषट् ।

शुचि नीर निरमल क्षीरदधिसम सुगुरु चरन चढाइया ।
तिहुं धार तिहुं गदटार स्वामी, अति उछाह बढ़ाइया ।।

भवभोगतन वैराग धार, निहार शिव तप तपत है।
तिहु जगतनाथ आराध साधु सु पूज नित गुन जपत हैं ॥
ॐ ह्री आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यः जलं नि० ॥ १ ॥
करपूर चन्दन सलिलसो घसि, सुगुरुपदपूजा करौ।
सब पाप ताप मिटाय स्वामी, धरम शीतल विस्तरों ॥ भव० ॥
ॐ ह्री आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यः चन्दनं नि० ॥ २ ॥
तन्दुल कमोद सुवास उज्ज्वल, सुगुरु पगतर धरत है।
गुनकार औगुनहार स्वामी, बन्दना हम करत है ॥ भव० ॥
ॐ ह्री आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यः अक्षतान् नि० ॥३॥
शुभफूलरासप्रकाश परिमल, सुगुरुपायनि परत हो।
निरवार मार उपाधि स्वामी, शील दृढ उर धरत हों ॥ भव० ॥
ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यः पुष्पं नि० ॥ ४ ॥
पकवान मिष्ट सलौन सुन्दर, सुगुरु पाँयन प्रीतिसो।
कर क्षुधारोग विनाश स्वामी, सुथिर कीजे रीतिसौ।
ॐ ह्री आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्य. नैवेद्य नि० ॥ भव० ॥
दीपक उदोत सजोत जगमग, सुगुरु पद पूजों सदा।
तमनास ज्ञानउजास स्वामी, मोहि मोह न हो कदा ॥ भव० ॥
ॐ ह्री आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यः दीपं नि० ॥ ६ ॥
बहु अगर आदि सुगध खेऊं सुगुण पद पद्महि खरे।
दुख पुञ्जकाठ जलाय स्वामी, गुण अखय चित मे धरे ॥भव०॥
ॐ ह्री आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं नि० ॥७॥
भर थार पूग बदाम बहु विधि, सुगुरुक्रम आगे धरो।
मंगल महाफल करो स्वामी, जोर कर विनती करो ॥ भव० ॥
ॐ ह्री आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्ताय फलं नि० ॥८॥
जल गंध अक्षत फूल नेवज, दीप धूप फलावली।
'द्यानत' सुगुरुपद देहु स्वामी, हमहि तार उतावली ॥भव०॥
ॐ ह्री आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं नि० ॥९॥

जयमाला

दोहा—कनककामिनी विषयवश, दीसै सब संसार।
त्यागी वैरागी महा, साधु सुगुरु भंडार ॥ १ ॥
तीन घाटि नवकोड सब, बंदौं शीश नवाय।
गुन तिन अट्ठाईस लों कहूं आरती गाय ॥ २ ॥

एक दया पालै मुनिराजा, रागद्वेष द्वै हरन परं।
तीनो लोक प्रगट सब देखै, चारौं आराधननिकरं ॥
पंच महाव्रत दुद्धर धारै, छहो दरब जाने सुहितं।
सातभंग वानी मन लावै, पावै आठ रिद्ध उचित ॥३॥
नवो पदारथ विधिसौ भाखै, बंध दशौ चूरन करनं।
ग्यारह शंकर जानै मानै, उत्तम बारह व्रत धरन।
तेरह भेद काठिया चूरे, चौदह गुणथानक लखियं।
महाप्रमाद पंचदश नाशे, शील कषाय सबै नखियं ॥४॥
बधादिक सत्रह सब चूरे, ठारह जन्म न मरन मुन।
एक समय उनईस परीषह, बीस प्ररूपनि में निपुनं ॥
भाव उदीक इकीसौ जानैं, बाईस अभखन त्याग करं।
अहिमिदर तेईसों बंदे, इन्द्र सुरग चौबीस वरं ॥५॥
पच्चीसौ भावन नित भावै, छब्बिस अङ्गउपंग पढै।
सत्ताइससो विषय विनाशै, अट्ठाईसौ गुण सु बढै ॥
शीत समय सरचौपटवासी, ग्रीषमगिरिसिर जोग धरै।
वर्षा वृक्षतरै थिर ठाडे, आठ करम हनि सिद्ध वरैं ॥६॥

दोहा—कहो कहां लो भेद मै, बुध थोडी गुण पूर।
'हेमराज' सेवक हृदय, भक्ति भरो भरपूर ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो अर्घ्यं नि०।

सिद्ध पूजा भाषा

स्वयं सिद्ध जिन भवन रतनमई विम्ब विराजैं।
नमत सुरासुर इन्द्र, दरस लखि रवि शशि लाजैं॥
चार शतक पच्चास आठ, भुवि लोक बताये।
तिन पद पूजन हेत, भाव धरि मंगल गाये,॥
मंगलमय मंगल करण, शिवपद दायक जानिकै।
आह्वानन करके जजौ, सिद्ध सकल उर आनिकै॥

ॐ ह्री णमो सिद्धाण सिद्धपरमेष्ठिन् अत्रावतरावतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

उज्ज्वल जल शीतल लाय, जिन गुण गावत है।
सब सिद्धन कौं सु चढाय, पुण्य बढावत है॥
सम्यक सुक्षायक जान, यह गुण गावतु है।
पूजौं श्रीसिद्ध महान, बलि बलि जावतु है ॥ १ ॥

ॐ ह्री णमोसिद्धाण सिद्धपरमेष्ठिभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं।

करपूर सु केसर सार, चन्दन सुखकारी।
पूजो श्रीसिद्ध निहार, आनन्द मनधारी॥
सब लोकालोक प्रकाश, केवल ज्ञान जग्यो।
यह ज्ञान सुगुण मनभास, निजरस माहि पग्यो ॥२॥ चदनं
मुक्ताफल की उनहार अक्षत धोय धरे।
अक्षय पद प्रापति जान, पुण्य भंडार भरे॥
जग मे सुपदारथ सार, ते सब दरसावैं।
सो सम्यग्दर्शन सार, इह गुण मनभावै ॥३॥ अक्षतं
सुन्दर सुगुलाब अनूप, फूल अनेक कहे।
श्री सिद्धन पूजन भूप, बहुविधि पुण्य लहै॥
तहा वीर्य अनन्तो सार, यह गुण मनमानो।
ससार समुदतैं पार, कारक प्रभु जानो ॥४॥ पुष्पं

फेनी गोंजा पकवान, मोदक सरस बने ।
पूजों श्री सिद्ध महान, भूख विथा जु हने ।।
झलकै सब एकहि बार, ज्ञेय कहे जितने ।
यह सूक्षमतागुण सार, सिद्धनके सु तने ।।५।। नैवेद्यं
दीपक की ज्योति जगाय, सिद्धन को पूजों ।
करि आरति सनमुख जाय, निरमल पद हूजो ।।
कुछ घाटि न बाढि प्रमाण, अगुरुलघुगुण राख्यो ।
हम सीस नमावत आन, तुम गुण मुख भाख्यो ।।६।। दीपं
वरधूप सु दश विधि ल्याय, दस विधि गंध धरे ।।
वसु कर्म जलावत जाय, मानो नृत्य करे ।
इक सिद्धमे सिद्ध अनंत, सत्ता सब पावे ।।
यह अवगाहन गुण संत, सिद्धनके गावे ।।७।।धूपं।।
ले फल उत्कृष्ट महान, सिद्धन को पूजौ ।
लहि मोक्ष परमगुणधाम, प्रभुसम नहि दूजौ ।।
यह गुण बाधाकरि होन, बाधा नाश भई ।
सुख अव्याबाध सुचोन, शिवसुन्दरि सु लई ।।८।।फलं।।
जल फल भरि कञ्चन थाल, अर्चतु करजोरो ।
प्रभु सुनियो दीनदयाल, विनती है मोरो ।।
कर्मादिक दुष्ट महान, इनको दूर करो ।
तुम सिद्ध सदा सुखदान, भवभव दुःख हरो ।।९।। अर्घ्यं।।

जयमाला-दोहा

नमो सिद्ध परमात्मा, अद्भुत परम विशाल ।
तिन गुण महिमा अगम है, सरस रचो जयमाल ।।

द्धड़ी-जय जय श्रीसिद्धनकूं प्रणाम, जय शिवसुखसागर के सुथान ।
य बलि बलिजात सुरेश जान, जय पूजत तनमन हर्ष ठान ।।१।।
य क्षायिक गुण सम्यक्त्व लीन, जय केवलज्ञान सुगुन नवीन ।

जय लोकालोक प्रकाशवान, यह केवल अतिशय हिये आन ।।२।।
जय सरव तत्त्व दरसे महान, सोइ दरसन गुन तीजो महान।
जय वीर्य अनन्तो है अपार, जाकी पटतर दूजो न सार ।।३।।
जय सूक्ष्मता गुण हिये धार, सब ज्ञेय लख्यो एकहि सुवार।
इक सिद्ध मे सिद्ध अनन्त जान, अपनी अपनी सत्ता प्रमाण ।।४।।
अवगाहन गुण अतिशय विशाल, तिनके पद बन्दो नमित भाल।
कछु घाटि न बाधि कहे प्रमाण, गुण अगुरुलघु धारै महान ।।५।।
जय बाधा रहित विराजमान, सोइ अव्याबाध कह्यो बखान।
ये वसुगुण है व्यवहार संत, निश्चय जिनवर भाषे अनन्त ।।६।।
तिनको भविजन मन वचन काय, पूजत वसुविधि, अति हर्षलाय।
सब सिद्धनिके गुण कहे गाय, इन गुण करि शोभित हैं जिनाय।।७।।
सुरपति फणिपति चक्री महान, बलि हरि प्रतिहरि मनमथ सुजान।
गणपति मुनिपति मिल धरतध्यान, जयसिद्ध शिरोमणि जगप्रधान।८

सोरठा—ऐसे सिद्ध महान, तुम गुण महिमा आगम है।
वरणन कर्यो बखान, तुच्छ बुद्धि कवि 'लाल' जू ।।
ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं सिरपरमेष्ठिभ्यो नमोऽर्घ्यं।

दोहा—करता की यह वीनती, सुनो सिद्ध भगवान।
मोहि बुलावो आप ढिग, यही अरज उर आन ।इत्याशीर्वादः।

अकृत्रिम चैत्यालय पूजा

आठ किरोड रु छप्पन लाख। सहस सत्याणव चतुशत भाख।
जोड इक्यासी जिनवर थान। तीनलोक आह्वान करान ।। १ ।।

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बंध्यष्टकोटिषट् पञ्चासलक्षसप्तनवतिसहस्र-चतुःशतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयानि अत्र अवतरत अव-तरत, संवौषट्। ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बध्यष्टकोटिषट्पञ्चासलक्ष सप्तनवतिसहस्र चतु शतैकाशीतिअकृत्रिमजिनचैत्यालयानि अत्र

तिष्ठत तिष्ठत, ठ. ठः। ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसम्बंध्यष्टकोटिषट्पञ्चाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयानि अत्र मम सन्निहितानि भवत भवत, वषट्।

क्षीरोदधिनीरं उज्ज्वल सीरं, छान सुचीरं, भरि झारी।
अति मधुर लखावन, परम सु पावन, तृषा बुझावन गुण भारी।
वसुकोटि सु छप्पन लाख सत्ताणव, सहस चारशत इक्यासी।
जिनगेह अकीर्तिम तिहुँजग भीतर, पूजत पद ले अविनाशी ॥१॥

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यसंबंध्यष्ट्कोटिषट् पञ्चाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा

मलयागिर पावन, चंदन बावन, ताप बुझावन घसि लीनो।
धरि कनक कटोरी, है करजोरी, तुम पद ओरो चित दीनो। वसु।चं.
बहुभांति अनोखे, तंदुल चोखे, लखि निरदोखे हम लीने।
धरिकञ्चन थाली, तुमगुणमाली, पुञ्जविशाली करदीने ॥ वसु।अक्षतं
शुभ पुष्प सुजाती है बहुभांती, अलि लिपटाती लेय वरं।
धरि कनकरकेबी, करगह लेवी, तुम पद जुगको भेट धरं।वसु. पुष्पं
खुरमा जु गिदौडा, बरफी पेडा, घेवर मोदक भरि थारी।
विधिपूर्वक कीने, घृतपयभीने, खंड मै लीने, सुखकारी।।वसु०। नैवे०
मिथ्यात महातम, छाय रह्यो हम, निजभव परणति नहि सूझै।
इह कारण पाकै, दीप सजाकै, थाल धराकै, हम पूजैं ।।वसु०।।दीपं
दशगंध कुटाकैं, धूप बनाकै, निजकर लेकै, धरि ज्वाला।
तसु धूम उडाई, दशदिश छाई, बहु महकाई, अति आला ।।वसु. ।धूपं
बादाम छुहारे, श्रीफल धारे, पिस्ता प्यारे, द्राख वरं।
इन आदि अनोखे लखि निरदोखे, थालपजोखे, भेट धरं।।वसु०।फलं
जल चंदन तन्दुल कुसुम रु नेवज दीप धूप फल थाल रचौ।
जयघोष कराऊं, बीन बजाऊं, अर्घ चढाऊं, खूब नचौ ।।वसु०।।६।।

ॐ ह्री त्रैलोक्यसबंध्यष्टकोटिषट्पञ्चाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुः शतैकाशीति अकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति०।

अथ प्रत्येक अर्घ ।। चौपाई ।

अधोलोक जिन आगमसाख । सात कोडि अरु बहत्तर लाख ।
श्रीजिनभवन महाछवि देइ । ते सब पूजौं वसुविध लेइ ।। १ ।।

ॐ ह्री अधोलोकसम्बन्धिसप्तकोटिद्विसप्ततिलक्षाकृत्रिम श्रीजिन चैत्यालयेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

मध्यलोक जिन मन्दिर ठाठ, साढे चारशतक अरु आठ ।
ते सब पूजो अर्घ चढाय, मन वच तन त्रयजोग मिलाय ।।२।।

ॐह्री मध्यलोकसम्बन्धिचतुःशताष्टपञ्चाशत् श्रीजिनचैत्यालयेभ्यो अर्घ्यं

अडिल्ल—ऊर्ध्वलोक के माहि भवन जिन जानिये ।
लाख चुरासी सहस सत्याणव मानिये ।।
तापै धरि तेईस, जजौ शिर नायकै ।
कञ्चन थाल मझार जलादिक लायकै ।।

ॐ ह्री ऊर्ध्वलोकसम्बन्धिचतुरशीतिलक्षसप्तनवतिसहस्रत्रयोविंशति श्रीजिनचैत्यालयेभ्यो अर्घ्यं ।।३।।

वसुकोटि छप्पनलाख ऊपर, सहस सत्याणव मानिये ।। सतच्यारपै गिनले इक्यासी, भवन जिनवर जानिये ।। तिहुलोक भीतर सासते, सुर असुर नर पूजा करैं ।। तिन भवन को हम अर्घलेकैं, पूजि है जगदुख हरै ।।

ॐ ह्री त्रैलोक्यसम्बन्ध्यष्टकोटिषट्पञ्चाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुः शतैकाशीतिअकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्व० ।

दोहा—अब वरणो जयमालिका, सुनो भव्य चितलाय ।
जिन मन्दिर तिहुंलोक के, देहु सकल दरसाय ।। १ ।।

पद्धरि छन्द ।

जय अमल अनादि अनन्त जान। अनिमित जु अकीर्तम अचल थान ।
जय अजय अखण्ड अरूपधार । षटद्रव्य नही दीसै लगार ।। २ ।।
जय निराकार अविकार होय। राजत अनन्त परदेश सोय ।।
जे शुद्ध सुगुण अवगाह पाय । दश दिशांमाहि इहविध लखाय ।।३।।
यह भेद अलोकाकाश जान । तामध्य लोक नभ तीन भान ।।
स्वयमेय बन्यो अविचल अनत । अविनाशि अनादि जु कहत संत ।।४।।
पुरुषा आकार ठाडो निहार । कटि हाथ धारि द्वै पग पसार ।।
दच्छिन उत्तरदिशि सर्व ठौर, राजू जु सात भाख्यो निचोर ।।५।।
जय पूर्व अपर दिश घाटवाधि । सुन कथन कहूं ताको जु साधि ।।
लखि श्वभ्रतलें राजू जु सात । मधिलोक एक राजू रहात ।। ६ ।।
फिर ब्रह्मसुरग राजू जु पांच । भूसिद्ध एक राजू जु पांच ।
दश चार ऊंच राजू गिनाय । षट्द्रव्य लये चतुकोण पाय ।। ७ ।।
तसु वातवलय लपटाय तीन । इह निराधार लखियो प्रवीन ।।
त्रसनाडी तामधि जान खास । चतुकोन एक राजू जु व्यास ।।८।।
राजू उतङ्ग चौदह प्रमान । लख स्वयंसिद्ध रचना महान ।।तामध्य जीव त्रस आदि देय । निज थान पाय तिष्ठै भलेय ।।६।। लखि अधो भाग मैं श्वभ्रथान । गिन सात कहे आगम प्रमान ।। षट थानमांहि नारकि बमेय । इक श्वभ्रभाग फिर तीन भेय ।।१०।। तसु अधोभाग नारकि रहाय । फुनि ऊर्ध्वभाग द्वय थान पाय ।। बस रहे भवन व्यंतर जु देव । पुर हर्म्य छज्जे रचना स्वमेव ।। ११ ।।
तिह थान गेह जिनराज भाख । गिन सातकोटि बहतरि जु लाख ।।
ते भवन नमों मन वचन काय । गति श्वभ्रहरनहारे लखाय ।।१२।।
पुनि मध्यलोक गोला अकार । लखि दीप उदधि रचना विचार ।।
गिन असंख्यात भाखे जु संत । लखि सभुरमन सबके जु अंत ।।१३।।
इक राजु-व्यासमै सर्वजान । मधिलोक तनो इह कथन मान ।

सब मध्य दीप जंबू गिनेय। त्रयदशम रुचिकवर नाम लेय॥ १४॥ इन तेरह मे जिनधाम जान। शतचार अठावन हैं प्रमान॥ खग देव असुर नर आय आय। पद पूज जांय शिर नाय नाय ॥ १५॥ जय ऊर्ध्वलोक सुर कल्प-वास। तिहँ थान छजैं जिन भवन खास॥ जय लाख चुरासीपै लखेय। जय सहससत्याणव और ठेय॥ १६॥ जय बीसतीन फुनि जोड देय। जिनभवन अकीर्तम जान लेय॥ प्रतिभवन एक रचना कहाय। जिन बिंब एकसत आठ पाय॥ १७॥ शतपंच धनुष उन्नत लसाय। पदमासनजुत वर ध्यान लाय। शिर तीन छत्र शोभित विशाल। त्रय पादपीठ मणिजडित लाल॥ १८॥ भामंडलकी छवि कौन गाय। फुनि चंवर ढुरत चौसठि लखाय। जय दुंदुभिरव अद्भुत सुनाय। जय पुष्पवृष्टि गंधोदकाय॥ १९॥ जय तरु अशोक शोभा भलेय। मंगल्न विभूति राजत अमेय। घट तूप छजे मणिमाल पाय। घटधूम्र धूम दिग सर्व छाय॥ २०॥ जय केतुपंक्ति सोहै महान। गंधर्वदेवगन करत गान॥ सुर जनम लेत लखि अवधि पाय। तिहँ थान प्रथम पूजन कराय॥ जिनगेह तणों बरनन अपार। हम तुच्छबुद्धि किम लहत पार॥ जय देव जिनेसुर जगत भूप। नमि 'नेम' मंगे जिन देहरूप ॥२२॥

दोहा—तीन लोक मे सासते, श्रीजिनभवन विचार।
मन वच तनकरि शुद्धता, पूजो अरघ उतार॥

ॐ ह्रीं त्रिलोक सम्बन्धी ८५६,९७,४८१ अकृत्रिम जिनचैत्यालयेभ्योऽर्घ्यम्।

श्री तीसचौबीसीजी की पूजा

पाच भरत शुभक्षेत्र पाच ऐरावते,
आगत-नागत वर्तमान जिन सास्वते।

सो चौबीसी तीस जजूं मन लायके,
आह्वानन विधि करूं वार त्रय गायके ।।

ॐ ह्री पंचमेरुसम्बन्धी-पंचभरत-पंचऐरावत-क्षेत्रस्था भूतानागतवर्तमान सम्बन्धित चतुर्विंशतितीर्थंकरा अत्र अवतरत २ संवौषट् इति आह्वाननं । अत्र तिष्ठत २ ठः ठः स्थापनं । अत्र मम सन्निहिता भवत २ वषट्, सन्निधिकरणं ।

अष्टक ।

नीर दधि क्षीर सम ल्यायो, कनक को भृङ्ग भरवायो,
अबै तुम चरण ढिग आयो, जनम जरा रोग नशवायो ।
द्वीप अढाई सरस राजे, क्षेत्र दस ता विषैं छाजे,
सात शत बीस जिनराजे, जे पूजतां पाप सब भाजें ।।१।।

ॐ ह्रीं पंचभरतपंचैरावतक्षेत्रस्थभूतागतवर्तमानकालसंबन्धिचतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
सुरभिजुत चन्दनं ल्यायो, संग करपूर घसवायो,
धार तुम चरण ढ़रवायो, भव आताप नशवायो ।।द्वीप०।।

ॐ ह्रीं पांच भरत पांच ऐरावत क्षेत्र संबन्धी तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्यः चन्दनं नि० ।

चन्द्रसम तन्दुलं सारं, किरण मुक्ता जु उनहारं,
पुञ्ज तुम चरण ढिग कारं अक्षयपद प्राप्ति के कारं । द्वीप० ।अक्षतं
पुष्प शुभ गंधजुत सोहै, सुगन्धित नाश मन मोहै ।
जजत तुम मदन छय होवे, मुकति पद पलक में जोवे।।द्वीप०।पुष्पं।।
सरस व्यञ्जन लिया ताजा, तुरत बनवायके खाजा ।
धरन तुम जजत महाराजा, क्षुधादिक पलकमे भाजा ।।द्वीप०।नैवेद्यं
दीप तम नाशकारी है, सरस शुभ जोतिधारी है ।
होय दशों दिश उजारी है, धूम्र मिस पाप हारी है ।।द्वीप०।।दीपं

सरस शुभ धूप दश अंगी, जलाऊं अग्नि के संगी।
करमकी सेन चतुरंगी, चरन तुम पूजते भृङ्गी ।।द्वीप०।।धूपं
मिष्ट उत्कृष्ट फल ल्यायो, अष्ट अरि दुष्ट नशवायो।
श्रीजिन भेट धरवायो, कार्य मनवाछता पायो ।।द्वीप०।। फलं
द्रव्य आठो जु लीना है, अर्घ करमे नवीना है।
पूजते पाप छीना है, 'भानमल' जोर कीना है ।। द्वीप०।।

ओ ह्री पाच भरत पांच ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी तीस चौबीस के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं नि०।

प्रत्येक अर्घ

जम्बूद्वीप की प्रथममेरु की, दक्षिणदिशा भरत शुभ जान।
तहां चौबीसी तीन बिराजे, आगत नागत औ वर्तमान ।।
तिनके चरण कमलको निशदिन, अर्घ चढाय करू उर ध्यान।
इस संसार भ्रमणते तारो, अहो जिनेश्वर ! करुणावान ।।

ॐ ह्री सुदर्शन मेरुकी दक्षिण दिशा भरत क्षेत्र सम्बन्धी ती चौबीसी के बहत्तर जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं।

सुदर्शन मेरुकी उत्तरदिशमे, ऐरावत क्षेत्र शुभ जान।
आगत नागत वर्तमान जिन, बहतर सदा सास्वते जान। तिन०

ॐ ह्री सुदर्शन मेरुकी उत्तर दिशा क्षेत्र सम्बन्धी तीन चौबीस के बहतर जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं !

खण्ड घातकी विजय मेरुके, दक्षिण दिशा भरत शुभ जान।
तहां चौबीसी तीन विराजे, आगत नागत अरु वर्तमान ।।
तिनके चरण कमलको निशिदिन अर्घ चढाय करू उरध्यान।
इस संसार भ्रमणतें तारो अहो जिनेश्वर ! करुणावान ।।

ॐ ह्री धातकीखण्ड द्वीपकी पूर्व दिशि विजय मेरुकी दक्षि दिशि भरतक्षेत्र सम्बन्धी तीन चौबीसी के बहतर जिनेन्द्रभ्यो अर्घ

इसी द्वीपकी प्रथम् शिखरिको, उत्तर ऐरावत जु महान ।
आगत नागत वर्तमान जिन, बहत्तरिसदा सासते जान ।।
तिनके चरण कमलको निशदिन, अर्घ चढाय करूं उरध्यान ।
इस संसारभ्रमणतैं तारो, अहो जिनेश्वर ! करुणावान ।।

ॐ ह्रीं धातकीखण्ड द्वीप की पूर्व दिशि विजय मेरुकी उत्तर दिशि ऐरावतक्षेत्र सम्बन्धी तीनचौबीसी के बहत्तर जिनेद्रेभ्यो अर्घ्यं.

खंड धातकी अचल सुमेर, दक्षिण तास भरत चहुं घेर ।
तामे चौबीसी त्रय जान, आगत नागत और वर्तमान ।।तिन०।।

ॐ ह्रीं धातकीखण्ड द्वीपकी पश्चिम दिशा अचलमेरु की दक्षिणदिशा भरतक्षेत्रसम्बन्धी तीनचौबीसी के बहत्तर जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं ।

अचल मेरुकी उत्तर दिश जान, ऐरावत शुभ क्षेत्र बखान ।
तामे चौबीसीत्रय जान, आगत नागत और वर्तमान ।।तिनके०।।

ॐ ह्रीं धातकीखण्डकी पश्चिम दिशा अचलमेरु की उत्तरदिशा ऐरावत क्षेत्र सम्बन्धी तीनचौबीसीके बहत्तर जिनेशेभ्योनमः अर्घ्यं ।

द्वीप पुष्करकी पूरब दिशा, मन्दिरमेरुकी दक्षिण भरत-सा ।
ताविषे चौबीसी तीन जू, अर्घ लेय जजूं परवीन जू ।।तिनके०।।

ॐ ह्रीं पुष्कर द्वीपकी पूर्व दिशा मंदिरमेरुकी दक्षिण दिशा भरत क्षेत्र सम्बन्धी तीन चौबीसी के बहत्तर जिनेद्रेभ्यो नमः अर्घ्यं ।

गिरि सूं मंदर उत्तर जानिये, ताके पूर्व दिशा बखानिये ।
ताविषे चौबीसी तीन जू, अर्घलेय जजूं परवीन जू ।। तिनके०।।

ॐ ह्रीं पुष्कर द्वीपकी पूर्वदिशा मंदरमेरु की उत्तरदिशा ऐरावत क्षेत्र संबंधी तीन चौबीसी के बहत्तर जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं ।

पश्चिम पुष्करगिरि विद्युन्माल, ताके दक्षिण भरत विशाल ।
तामे चौबीसी है जु तीन, वसु द्रव्य लेय जजूं परवीन ।।तिनके०

ॐ ह्रीं पुष्कर द्वीपकी पश्चिम दिशा विद्युन्माली मेरु की दक्षिण दिशा भरतक्षेत्रसबंधी तीन चौबीसीके बहत्तर जिनेन्द्रेभ्योनमः अर्घ्यं

याही गिरिके उत्तर जु ओर, ऐरावत क्षेत्र बनो निहोर।
तामे चौबीसी हैं जु तीन, वसु द्रव्य लेल जजूं परवीन ॥

ॐ ह्री पुष्कर द्वीपकी पश्चिम दिशा विद्युन्माली मेरुकी उत्तरदिशा ऐरावतक्षेत्र सम्बन्धी तीनचौबीसी के बहत्तरजिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं।

द्वीप अढ़ाइ के विषै, पंचमेरु हित दाय।
दक्षिण उत्तर तासकै, भरत ऐरावत भाय ॥
भरत ऐरावत भाय, एक क्षेत्र के मांही।
चौबीसी है तीन, दशो दिशि ही के मांही ॥
दसो क्षेत्रके सातसो बीस जिनेश्वर।
अर्घ ल्याय करजोडि जे जे रविमल सुमनकर ॥

ॐ ह्री पंचमेरु सम्बन्धो भरतैराव क्षेत्र के विषै तीन चौबीसी के सातसै बोस जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं नि० ।

जयमाला।

दोहा—चौबीसी तीसो नमो, पूजा परम रसाल।
मन वच तन को शुद्धकर, अब वरणो जयमाल ॥

जय द्वीप अढाई मे जु सार, गिरि पाच मेरु उन्नत अपार।
तागिरि पूर्व-पश्चिम जु ओर, शुभ क्षेत्र विदेह बसै जु ठौर ॥
ता दक्षिण क्षेत्र भरत जु जानि, है उत्तर ऐरावत महान।
गिरि पाँचतने दश क्षेत्र जोय, छबि ताको कहिय न सके कोय ॥
ताको वरणूं वरणन विशाल, तैसा ही ऐरावत है रसाल।
इस क्षेत्र बीच विजयार्द्ध एक, ता ऊपर विद्याधर अनेक ॥
इस क्षेत्र विषे षट खंड जानि, तहां छहों काल बरते महान।
जो तोन काल मे भोग भूमि, दस जाति कल्पतरु रहे भूमि ॥
जब चौथौ काल लगे जे आय, तब कर्म भूमि बर्तें सुहाय।
तब तीर्थंकर को जन्म होय, सुरलेय जजै गिरि पर सुजोय ॥
बहु भक्ति करे सब देव आय, ताथेई थेई की तान ल्याय।
हरि ताडव नृत्य करें अपार, सब जोवन मन आनन्दकार ॥

इत्यादि भक्ति करके सुरेन्द्र, निजथान जाय जुत देव वृन्द ।
इहविधि पांचों कल्याण होय, हरिभक्ति करै अति हर्ष जोय ।।
या कालविषै पुण्यवंत जीव, नरजन्मधार शिव लहै अतीव ।
तब श्रेष्ठ पुरुष परवीन होय, सब याही काल विषै जु होय ।।
जब पंचम काल करे प्रवेश, मुनिधर्म तणों नहीं रहे लेश ।
विरले कोई दक्षिन देश मांहि, जिनधर्मी नर, बहुते जु नांहि ।।
जब षष्ठम काल करे प्रवेश, तब धर्मरंच नहिं रहे लेश ।
दश क्षेत्रन में रचना समान, जिनवाणी भाष्यो सो प्रमाण ।।
चौबीसो होइके क्षेत्र तीन, दश क्षेत्रनिमे जानो प्रवीन ।
आगत व अनागत वर्तमान, सतसातशतक अरु बीसजान ।।
सबही महाराज नमूं त्रिकाल, मम भवसागरतें लेहु निकाल ।
यह वचन हिये मे धार लेव, मम रक्षा करहु जिनेन्द्र देव ।।
'विमल' की बिनती सुनहु नाथ, मैं पांय परूं जुग जोरि हाथ ।
मम वांछित कारज करो पूर, यह अरज हृदय में धरि जरूर ।।
घत्ता—शत सात जु बीसं श्रीजगदीशं, आगतनागत अरु वर्ततु है ।
मन वच तन पूजे सुध मन हूजे, सुरग मुक्ति पद पावत है ।।
ॐ ह्रीं पंचमेरु सम्बन्धी दश क्षेत्रनिके विषै तीस चौबीसो के सात सौ बीस जिनेन्द्रेभ्यो नमः अर्घ्यं नि० ।

दोहा—सम्बत् सत उन्नीस के, ता ऊपर पुनि आठ ।
पौष कृष्ण तृतीया गुरु, पूरन भयो जु पाठ ।।
अक्षर मात्रा की कसर, बुधजन शुद्ध करेय ।
अल्पबुद्धि मो सोचकें, दोष कबहुं नहिं देय ।।
पढी नही व्याकरण मै, पिंगल देख्यो नांहि ।
जिनवाणी परसादतें, उमंग भई घट मांहि ।।
मान बड़ाई ना चहूँ, चहूँ धर्म को अंग ।
नित प्रति पूजा कीजियो, मनमें धारि उमंग ।।

इत्याशीर्वादः ।

रविव्रत पूजा

अडिल्ल—यह भविजन हितकार, सु रविव्रत जिन कही।
करहु भव्यजन लोक, सुमन देके सही॥
पूजों पार्श्व जिनेन्द्र, त्रियोग लगाय के।
मिटै सकल सन्ताप, मिले निधि आयके॥
मतिसागर इक सेठ कथा ग्रन्थन कही।
उन्ही ने यह पूजा कर आनन्द लही॥
तातैं रविव्रत सार सो भविजन कीजिये।
सुख सम्पति सन्तान, अतुल निधि लीजिये॥
दोहा—प्रणमो पार्श्व जिनेशको, हाथ जोड शिरनाय।
परभव सुख के कारने, पूजा करूं बनाय॥
ऐतवार व्रत के दिना, एही पूजन ठान।
ता फल स्वर्ग सम्पति लहैं, निश्चय लीजे मान॥

ॐ ह्री श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्, आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः, प्रतिष्ठापनम्! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्, सन्निधिकरणम्।

अष्टक

उज्ज्वल जल भरकरके अति लायो रतन कटोरन माही।
धार देत अति हर्ष बढावत जन्म जरा मिट जाहीं॥
पारसनाथ जिनेश्वर पूजो रविव्रत के दिन भाई।
सुख सम्पति बहु होय तुरत ही आनन्द मंगलदाई॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥१॥

मलयागिरि केशर अति सुन्दर कुंकुम रंग बनाई।
धार देत जिन चरनन आगे भवआताप नशाई। पारस० ।चंदनं॥२

मोती सम अति उज्ज्वल तन्दुल ल्यायो नीर पखारो ।
अक्षय पद के हेतु भावसों श्रीजिनवर ढिग धारो ।।
पारसनाथ जिनेश्वर पूजों रविव्रत के दिन भाई ।
सुख सम्पत्ति बहु होय तुरत ही आनन्द मंगलदाई ।अक्षतं०।
बेला अरु मचकुन्द चमेली पारिजात के ल्यावो ।।
चुन चुन श्रीजिन अग्र चढाऊँ मनवांछित फल पावो ।।पारस०।पुष्पं
बावर फेनी गूंजा आदिक घृत मे लेत पकाई ।
कञ्चन थार मनोहर भर के चरनन देत चढाई ।। पार० ।। नैवेद्यं ।।
मणिमय दीप रतनमय लेकर जगमग जोति जगाई ।
जिनके आगे आरति करके मोह तिमिर नश जाई ।।पारस०।।दीपं।।
चूरनकर मलयागिरि चंदन धूप दशांग बनाई ।
तट पावक मे खेय भावसों कर्म नाश हो जाई ।।पारस०।।धूपं।।
श्रीफल आदि बादाम सुपारी भांति भांति के लावो ।
श्रीजिनचरण चढाय हरष कर तातैं शिवफल पावो ।।पारस०।फलं।।
जल गन्धादिक अष्ट दरव ले अर्घ बनाओ भाई ।
नाचत गावत हर्ष भावसों, कञ्चन थार भराई । पारस० ।।अर्घ्यं।।
गीता छन्द—मन वचन काय विशुद्ध करके पार्श्वनाथ सुपूजिये ।
जल आदि अर्घ बनाय भविजन भक्तिवंत सुहूजिये ।।
पूज्य पारसनाथ जिनवर सकल सुख दातार जी ।
जे करत है नरनार पूजा लहत सुक्ख अपारजी।पूर्णार्घ्यं

जयमाला

दोहा—यह जग मे विख्यात है, पारसनाथ महान ।
जिनगुण की जयमालिका, भाषा करों बखान ।।

छन्द पद्धरी

जय जय प्रणमों श्री पार्श्वदेव, इन्द्रादिक तिनकी करत सेव ।
जय जय सु बनारस जन्म लीन्ह, तिहुंलोक विषै उद्योत कीन ।।१।।

जय जिनके पितु श्री विश्वसेन, तिनके घर भए सुख चैन एन।
जय वामादेवी मात जान, तिनके उपजे पारस महान ॥ २ ॥
जय तीन लोक आनन्द देन, भविजन के दाता भए ऐन।
जय जिनने प्रभुका शरण लीन. तिनकी सहाय प्रभुजी सो कीन ॥३॥
जय नाग नागनी भए अधीन, प्रभु चरनन लाग रहे प्रवीन।
तजके सो देह स्वर्ग सुजाय, धरणेन्द्र पद्मावती भये आय ॥४॥
जय अञ्जन चोर अधर्मि जान, चोरी तज प्रभु को धरैं ध्यान।
जय मृत्यु भये स्वर्गे सुजाय, ऋद्धि अनेक उनने सुपाय ॥ ५ ॥
जय मतिसागर इक सेठ जान, जिन रविव्रत पूजा करी ठान।
तिनके सुत थे परदेशमांहि, जिन अशुभ कर्म काटे सु ताहि ॥६॥
जय रविव्रत पूजन करी सेठ, ता फलकर सबसे भई भेट।
जिन जिनने प्रभु का शरण लीन, तिन रिद्ध सिद्ध पाई नवीन ॥७॥
जय रविव्रत पूजा करहि जेय, तें सुख्य अनन्तान्त लेय।
धरणेन्द्र पद्मावति हुए सहाय, प्रभु भक्त जान तत्काल जाय ॥८॥
पूजा विधान इहिविधि रचाय, मन वचन काय तीनों लगाय।
जो भक्तिभाव जयमाल गाय, सो ही सुख सम्पत्ति अतुल पाय ॥९॥
बाजत मृदंग वीनादि सार, गावत नाचत नाना प्रकार।
तन नन नन नन नन ताल देत, सन नन नन नन सुर भर सुलेत ॥१०॥
ता थेई थेई थेई पग धरत जाय, छमर छमर घुंघरू बजाय।
जे करहिं नृत्य इहि भांत २ ते, लहहिं सुख्य शिवपुर सुजात ॥११॥

दोहा—रविव्रत पूजा पार्श्व की, करे भविक जन कोय।
सुख सम्पत्ति इह भव लहै, तुरत सुरग पद होय ॥

पूर्णार्घ्यम्

अडिल्ल—रविव्रत पार्श्व जिनेन्द्र पूज्य भवि मन धरे।
भव भव के आताप सकल छिन में टरे।

होय सुरेन्द्र नरेन्द्र आदि पदवी लहै।
सुख सम्पति सन्तान अटल लक्ष्मी रहैं ।।
फेर सर्व विध पाय भक्ति प्रभु अनुसरै।
नाना विधि सुख भोग बहुरि शिव तियवरै ।।

इत्याशीर्वादः ।

रविव्रत जाप्यमन्त्र

ॐ नमो भगवते चिंतामणिपार्श्वनाथाय सप्तफणमंडिताय ॐ ह्रीं श्री धरणेन्द्र पद्मावतीसहिताय मम ऋद्धि-सिद्धि-वृद्धि-सौख्यं कुरु कुरु स्वाहा। (१०८ लवंग से जाप्य करे, प्रत्येक मन्त्र पर अग्नि मे लौग छोड़े।)

रक्षाबन्धन पूजा

(श्री विष्णुकुमार पूजा)

अाडिल्ल छन्द

विष्णुकुमार महामुनि को ऋद्धी भई। नाम विक्रिया तास सकल आनन्द ठई ।। सो मुनि आये हथनापुर के बीच में। मुनि बचाये रक्षाकर बन बीच मे ।।१।। तहां भयो आनन्द सर्व जीवन घनो। जिन चिन्तामणि रत्न एक पायो मनो ।। सब पुर जय जयकार शब्द उचरत भये। मुनिको देय आहार आप करते भये ।।२।।

ॐ ह्रीं श्री विष्णुकुमार मुनी अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः प्रतिस्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

अथाष्टक—चाल—सोलहकारण पूजा की।

गङ्गाजल सम उज्ज्वल नीर, पूजों विष्णुकुमार सुधीर।
दयानिध होय, जय जगबन्धु दयानिध होय ।।

सप्त सैकडा मुनिवर जान, रक्षा करी विष्णु भगवान ।
दयानिध होय जग जगबन्धु दयानिध होय ।।१।।
ॐ ह्रीं श्रीविष्णुकुमार मुनिभ्यो नमः जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं
मलयागिर चदन शुभसार, पूजों श्रीगुरुवर निर्धार ।
दयानिध होय, जय जगबन्धु दयानिध होय ।।सप्तसैंकडा ।।चन्द०।।
श्वेत अखडित अक्षत लाय, पूजों श्रीमुनिवर के पाय ।
दयानिध होय, जय जगबन्धु दयानिध होय ।।सप्तसैकडा।।अक्षतं०।।
कमल केतकी पुष्प चढाय, मेटो कामवाण दुखदाय ।
दयानिध होय, जय जगबन्धु दयानिध होय ।।सप्तसैकड़ा।।पुष्पं०।।
लाडू फेनी घेवर लाय, सब मोदक मुनि चरण चढ़ाय ।
दयानिध होय, जय जयबन्धु, दयानिध होय ।।सप्तसैकडा।।नैवेद्यं० ।
घृत कपूर का दीपक जोय, मोहितिमिर सब जावे खोय ।
दयानिध होय, जय जगबन्धु, दयानिध होय ।। सप्तसैकडा।।दीपं०।।
अगर कपूर सुधूप बनाय, जारे अष्ट कर्म दुखदाय ।
दयानिध होय, जय जगबन्धु दयानिध होय ।।सप्तसैकडा।।धूप०।।
लौंग इलायची श्रीफल सार, पूजो श्रीमुनि सुखदातार ।
दयानिध होय, जयजगबन्धु दयानिध होय।। सप्त सैकड़ा।।फल०।।
जलफल आठों द्रव्य संजोय, श्रीमुनिवर पद पूजों दोय ।
दयानिध होय, जय जगबन्धु दयानिध होय ।।
सप्त सैकडा मुनिवर जान, रक्षा करी विष्णु भगवान । दया०।।
ॐ ह्रीं श्री विष्णुकुमार मुनिभ्यो नमः अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं ।

अथ जयमाला

दोहा—श्रावण सुदी सु पूर्णिमा, मुनि रक्षा दिन जान ।
रक्षक विष्णुकुमार मुनि, तिन जयमाल बखान ।।

चाल—छन्द भुजंगप्रयात

श्री विष्णु देवा करूं चर्ण सेवा ।।
हरो जगकी बाधा सुनो टेर देवा ।।

जगपुर पधारे महा सुक्खकारी ।
धरो रूप वामन सु मनमे विचारी ॥२॥
गये पास बलि के हुआ वो प्रसन्ना ।
जो मांगो सो पावो दिया ये वचन्ना ॥
मुनि तीन डग मांगि धरनी सु तापे ।
दई ताने ततक्षिन सु नहिं ढील थापे ॥३॥
कर विक्रिया मनि सु काया बढ़ाई ।
जगह सारो लेलो सुडग दो के मांहो ॥
धरो तीसरी डग बलो पीठ मांहो ।
सु मांगी क्षमा तब बलो ने बनाई ॥
जलको सुवृष्टि करी सुक्खकारो ।
सरव अग्नि में भई भस्म सारो ॥
टरे सर्व उपसर्ग श्री विष्णुजो से ।
भई जै जैकारा सरव नग्र हो से ॥४॥

चौपाई ।

फिर राजा के हुक्म प्रमान, रक्षा बन्धन बंधी सुजान ।
मुनिवर घर घर कियो विहार, श्रावक जन तिन दियो आहार ॥
जाघर मुनि नहिं आये कोय, निज दरवाजे चित्र सुलोय ।
स्थापन कर तिन दियो आहार, फिर सब भोजन कियो सम्हार ॥
तबसे नाम सलूना सार, जैनधर्म का है त्यौहार ।
शुद्ध क्रिया कर मानो जीव, जासो धर्म बढै सु अतीव ॥
धर्म पदारथ जगमे सार, धर्म बिना भूठो संसार ।
सावन सुदि पूनम जब होय, यह दो पूजन कोजे लोय ॥
सब भाइन को दो समझाय, रक्षाबन्धन कथा सुनाय ।
मुनिका निज घर करो आकार, मुनि समान तिन देउ आहार ।
सबके रक्षा बन्धन बांध, जैन मुनिन को रक्षा ज्ञान ।
इस विधि से मानो त्योहार, नाम सलूना है संसार ॥११॥

घत्ता—मुनि दीनदयाला सब दुख टाला, आनन्द माला सुखकारी।
'रघुसुत' नित बन्दे आनन्द कंदे, सुक्ख करन्दे हितकारी॥
ॐ ह्रीं श्री विष्णुकुमार मुनिभ्यो महा अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा—विष्णुकुमार मुनिके चरण, जो पूजे धर प्रीत॥
'रघुसुत' पावै स्वर्गपद, लहै पुन्य नवनीत।

इत्याशीर्वादः।

सलूना पर्व पूजा

श्री अकम्पनाचार्यादि सप्तशत मुनि पूजा।

(चाल जोगीरासा)

पूज्य अकम्पन साधु शिरोमणि सात शतक मुनि ज्ञानी।
आ हस्तिनापुर के कानन मे हुए अचल दृढ़ ध्यानी।
दुखद सहा उपसर्ग भयानक सुन मानव घबराये।
आत्म-साधना के साधक वे, तनिक नही अकुलाये॥
योगिराज श्री विष्णु त्याग तप, वत्सलता-वश आये।
किया दूर उपसर्ग, जगत–जन मुग्ध हुए हर्षाये॥
सावन शुक्ला पन्द्रस पावन शुभदिन था सुखदाता।
पर्व सलूना हुआ पुण्य-प्रद यह गौरवमय गाथा॥
शान्ति दया समता का जिनसे नव आदर्श मिला है।
जिनका नाम लिये से होती जागृति पुण्य कला है॥
करूं वन्दना उन गुरुपद की वे गुण मैं भी पाऊं।
आह्वानन संस्थापन सन्निधि-करण करूं हर्षाऊं॥

ॐ ह्रीं श्रीअकम्पनाचार्यादि सप्तशतमुनिसमूह अत्र अवतर २ संवौषट् इत्याह्वाननम्। अत्र तिष्ठ २ ठः ठः प्रतिष्ठापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

अथाष्टकम्—गीता-छन्द ।

मैं उर-सरोवर से विमल जल भाव का लेकर अहो ।
नत पाद—पद्मों में चढाऊं मृत्यु जनम जरा न हो ।।
श्रीगुरु अकम्पन आदि मुनिवर मुझे साहस शक्तिदें ।।
पूजा करूं पातक मिटें, वे सुखद समता भक्ति दें ।।

ॐ ह्री श्रीअकम्पनाचार्यादि सप्तशतमुनिभ्यो जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा !

सन्तोष मलयागिरिय चन्दन निराकुलता सरस ले ।
नत पादपद्मों में चढाऊं, विश्वताप नहीं जले ।।
श्रीगुरु अकम्पन आदि मुनिवर, मुझे साहस शक्ति दे ।
पूजा करूं पातक मिटे, वे सुखद समता भक्ति दें ।।

ॐह्रीं श्रीअकम्पनाचार्यादिसप्तशतमुनिभ्यः संसारतापविनाशनाय चं०

तंदुल अखंडित पूत आशा के नवीन सुहावने ।
नत पाद-पद्मों में चढाऊं दीनता क्षयता हने ।।
श्रीगुरु अकम्पन आदि मुनिवर मुझे साहस शक्ति दें ।
पूजा करूं पातक मिटे, वे सुखद समता भक्ति दे ।

ॐह्री श्रीअकम्पनाचार्यादिसप्तशतमुनिभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतं०

ले विविध विमल विचार सुन्दर सरस सुमन मनोहरे ।
नत पाद-पद्मों मे चढाऊं काम की बाधा हरे ।।
श्रीगुरु अकम्पन आदि मुनिवर मुझे साहस शक्ति दें ।
पूजा करूं पातक मिटें, वे सुखद समता भक्ति दे ।।

ॐ ह्री श्रीअकम्पनाचार्यादिशप्तशतमुनिभ्यः कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

शुभ भक्ति घृतमे विनयके पकवान पावन मैं बना ।
नत पाद्-पद्मों मे चढा मेटूं क्षुधा की यातना ।

श्रीगुरु अकम्पन आदि मुनिवर मुझे साहस शक्ति दे।
पूजा करूं पातक मिटे, वे सुखद समता भक्ति दें॥

ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यादिसप्तशतमुनिभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम कपूर विवेक का ले आत्म-दीपक मै जला।
कर आरती-गुरुकी हटाऊ मोहतमकी यह बला॥
श्रीगुरु अकम्पन आदि मुनिवर मुझे साहस शक्ति दे।
पूजा करूं पातक मिटे, वे सुखद समता भक्ति दे॥

ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यादिसप्तशतमुनिभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ले त्याग तपकी यह सुगन्धित धूप मै खेऊँ अहो।
गुरुचरण-करुणासे करमका कष्ट यह मुझको न हो॥
श्रीगुरु अकम्पन आदि मुनिवर मुझे साहस शक्ति दे।
पूजा करूं पातक मिटे, वे सुखद समता भक्ति दें॥

ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यादिसप्तशतमुनिभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुचि-साधना के मधुरतम प्रिय सरस फल लेकर यहां।
नत पाद-पद्मोमे चढाऊं मुक्ति मैं पाऊँ यहां॥
श्रीगुरु अकम्पन आदि मुनिवर मुझे साहस शक्ति दे।
पूजा करूं पातक मिटें, वे सुखद समता भक्ति दें॥

ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यादिसप्तशतमुनिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्ववामीति स्वाहा।

यह आठ द्रव्य अनूप श्रद्धा स्नेह से पुलकित हृदय।
नत पाद-पद्मो मे चढाऊं भव-पार मै होऊ अभय॥
श्रीगुरु अकम्पन आदि मुनिवर मुझे साहस शक्ति दे।
पूजा करूं पातक मिटें, सुखद समता भक्ति दे।

ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यादिसप्तशतमुनिभ्योऽनर्घ्य पदप्राप्तये अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला।

सोरठा—पूज्य अकम्पन आदि, सात शतक साधक सुधी।
यह उनकी जयमाल, वे मुझको निज भक्ति दे॥

(पद्धडी छन्द)

वे जीव दया पालै महान, वे पूर्ण अहिंसक ज्ञानवान।
उनके न रोष उनके न राग, वे करें साधना मोह त्याग॥
अप्रिय असत्य बोले न बैन, मन वचन कायमे भेद है न।
वे महासत्य धारक ललाम, है उनके चरणों मे प्रणाम॥
वे ले न कभी तृणजल अदत्त, उनके न धनादिक मे ममत्त।
वे व्रत अचौर्य दृढ धरे सार, है उनको सादर नमस्कार।
वे करें विषय की नही चाह, उनके न हृदय मे काम-दाह।
वे शील सदा पाले महान, कर मग्न रहै निज आत्मध्यान॥
सब छोड़ वसन भूषण निवास, माया ममता अरु स्नेह आस।
वे धरें दिगम्बर वेष शान्त, होते न कभी विचलित न भ्रात।
नित रहै साधनामें सुलीन, वे सहै परीषह नित नवीन।
वे करे तत्त्वपर नित विचार, है उनको सादर नमस्कार।
पंचेन्द्रिय दमन करें महान, वे सतत बढ़ावे आत्मज्ञान।
संसार देह सब भोग त्याग, वे शिव-पथ साधें सतत जाग।
'कुमरेश' साधु वे है महान, उनसे पाये जग नित्य त्राण।
मै करूं वन्दना बार बार, वे करें भवार्णव मुझे पार॥

घत्ता—मुनिवर गुण धारक पर-उपकारक भव-दुख-हारक सुखकारी।
वे करम नशायें सुगुण दिलाये, मुक्ति मिलायें भव-हारी॥

ॐ ह्रीं श्रीअकम्पनाचार्यादिसप्तशतमुनिभ्यो महार्घ्यं निर्व०।

सोरठा—श्रद्धा भक्ति समेत, जो जन यह पूजा करे।
वह पाये निज ज्ञान, उसे न व्यापे जगतदुख ॥

इत्याशीर्वादः।

क्षमावणी पूजा

छप्पय।

अङ्ग क्षमा जिन धर्मतनों दृढ मूल बखानो।
सम्यक् रत्न संभाल हृदय मे निश्चय जानो ॥
तज मिथ्या विष-मूल और चित निर्मल ठानो।
जिनधर्मी सो प्रीति करो सब पातक भानो ॥
रत्नत्रय गह भविक जन जिन आज्ञा सम चालिये।
निश्चय कर आराधना करमराशि को जालिये ॥

ॐ ह्री सम्यग्रत्नत्रय अत्रावतर अवतर संवौषट्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अथाष्टकम्।

नीर सुगंध सुहावनों पदम द्रह को लाय।
जन्म रोग निर्वारिये, सम्यकरतन लहाय ॥
क्षमा गहो उर जीवडा जिनवर वचन गहाय।क्षमा०॥

ॐ ह्री निःशङ्कितांगाय ॥१॥ निःकांक्षितांगाय ॥२॥ निर्विकित्सतांगाय ॥३॥ निमूढतांगाय ॥४॥ उपगूहनांगाय ॥५॥ सुस्थितिकरणांगाय ॥६॥ वात्सल्यतांगाय ॥७॥ प्रभवनांगाय ॥८॥ अष्टांगसहिताय सम्यग्दर्शनाय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं नि०। ॐ ह्री व्यञ्जनव्यञ्जताय ॥१॥ अर्थसमग्राय ॥२॥ तदुभयसमग्राय ॥३॥ कालाध्ययनाय ॥४॥ उपध्यानोपहिताय ॥५॥ विनयलब्धिप्रभावनाय ॥६॥ गुर्वपन्हवाय ॥७॥ बहु मानोन्मानसमेताय ॥८॥ अष्टांग सम्यज्ञानाय जलं नि०। ॐ ह्री अहिंसाव्रताय ॥१॥

सत्यव्रताय ॥२॥ अचौर्यव्रताय ॥३॥ ब्रह्मचर्यव्रताय ॥४॥ अपरिग्रहमहाव्रताय ॥५॥ मनोगुप्तये ॥६॥ वचन गुप्तये ॥ ७ ॥ कायगुप्तये ॥८॥ ईर्यासमितये ॥९॥ भाषासमितये ॥१०॥ एषणा समितये ॥११॥ आदाननिक्षेपणसमितये ॥१२॥ प्रतिष्ठापनासमित्तये ॥१३॥ त्रयोदशविध सम्यकचारित्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि० ।

केशर चन्दन लीजिये, संग कपूर घिसाय ।
अलि पङ्कति आवत घनी बास सुगन्ध सुहाय ॥क्षमा०॥ चं०
शालि अखंडित लीजिये, कंचन थाल भराय ।
जिनपद पूजौं भावसौं, अक्षय पदको पाय ॥ क्षमा० ॥ अक्षतं०
पारिजात अरु केतकी, पहुप सुगन्ध गुलाब ।
श्री जिन चरण सरोजकूं, पूज हरष चित लाय ।क्षमा०।।पुष्प
शक्कर घृत सुरभी तनो व्यञ्जन षट्रस स्वाद ॥
जिनके निकट चढाय कर, हिरदे धरि अहलाद ।क्षमा०।।नैवेद्यं
हाटकमय दीपक रचो, वाति कपूर सुधार ।
शोधक घृत कर पूजिये, मोह तिमिर निर्वार ।।क्षमा०।। दीपं
कृष्णागर करपूर हो, अथवा दशविध जाव ।
जिन चरण ढिग खेइये, अष्ट करम की हाव ।। क्षमा०।।धूपं
केला अम्ब अनार ही, नारिकेल ले दाख ।
अग्र धरो जिनपद तने, मोक्ष होय जिन साख ।।क्षमा०।। फल
जलफल आदि मिलायके, अरघ करो हरषाय ।
दु:ख जलाजलि दीजिये, श्रीजिन होय सहाय ॥
क्षमा गहो उर जीवड़ा, जिनवर वचन गहाय ।

ॐ ह्रीं अष्टाग सम्यग्दर्शनाय, अष्टाग सम्यग्ज्ञानाय, त्रयोदशविध सम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला।

दोहा—उनतीस अङ्ग की आरती, सुनो भविक मनलाय।
मन वच तन सरधा करो, उत्तम नर भव पाय॥
जैन धर्म मे शङ्क न आनै, सो निःशङ्कित गुण चित ठानै।
जप तप कर फलवाछै नाही, निःकांक्षित गुण हो चित माही॥
परको देख गिलानी न आनै, सो तीजा सम्यक् गुण ठानै।
अन्य देव को रञ्च न मानो, सो निमूंढता गुण पहिचानो॥
परको औगुण देख जो ढाके, सो उपगूहन श्री जिन भाखे।
जैनधर्म ते डिगता देखे, थापै बहुरि थिति करलेखै॥
जिनधर्मी सौ प्रीति निबहिये, गउ वच्छवत वच्छल कहिये।
ज्यो त्यो जैन उद्योत बढावे, सो प्रभावना अङ्ग कहावे॥
अष्ट अङ्ग ये पाले जो ही, सम्यग्दृष्टी कहिये सो ही।
अब गुण आठ ज्ञानके कहिये, भाषे श्रीजिन मनमे गहिये॥
व्यञ्जन अक्षर सहित पढीजे, व्यञ्जन व्यञ्जित अंग कहीजे।
अर्थ सहित शुध शब्द उचारे, दूजा अर्थ समग्रह धारे॥
तदुभय तीजा अङ्ग लखीजे, अक्षर अर्थ सहित जु पढीजे।
चौथा कालाध्ययन विचारै, काल समय लखि सुमरण धारै।
पञ्चम अङ्ग उपधान बतावे, पाठ सहित जु बहु फल पावे॥
षष्ठम विनय सुलब्धि सुनीजे, वाणी बहुत विनय सु पढीजे।
जापै पढे न लोपे जाई, अङ्ग सप्तम गुरुवाद कहाई॥
गुरुकी बहुत विनय जु करीजे, सो अष्टम अंगधर सुख लीजै।
ये आठो अंग ज्ञान बढावे, ज्ञाता मन वच तन कर ध्यावे॥
अब आगे चारित्र सुनीजै, तेरह विधिकर शिव सुख लीजै।
छहो काय की रक्षा कर है, सोई अहिंसा व्रत चित धर है॥
हित मित सत्य वचन मुख कहिये, सो सतवादी केवल लहिये।
मन वच काय न चोरी करिये, सोई अचौर्य व्रत चित धरिये॥

मनमथ भय मन रञ्च न आने, सो मुनि ब्रह्मचर्यव्रत ठाने।
परिग्रह देख न मूर्च्छित होई, पञ्च महाव्रत धारक सोई॥
महाव्रत ये पांचों जु खरे, सब तीर्थङ्कर इनको करे।
मनमें विकलप रञ्च न होई, मनो गुप्ति मुनि कहिये सोई।
वचन अलीक रञ्च नहि भाखै, वचन गुप्ति सो मुनिवर राखै।
कायोत्सर्ग परीषह सहि है, ता मुनिकायगुप्ति जिन कहि है॥
पञ्च समिति अब सुनिये भाई, अर्थ सहित भाषे जिन राई।
हाथ चार जब भूमि निहारे, तब मुनि ईर्या समिति धारे॥
मिष्ट वचन मुख बोले सोई, भाषा समिति तास मुनि होई।
भोजन छ्यालिस दूषण टारैं, सो मुनि एषण शुद्ध विचारै॥
देखके पोथी ले अरु धर है, सो आदान निक्षेपन वर है।
मल मूत्र एकान्त जु डारै, परतिष्ठापन समिति संभारै॥
यह सब अङ्ग उनतीस कहे है, श्रीजिनभाषे गनधरने गहे है।
आठ आठ तेरह विध जानों, दर्शन ज्ञान चरित्र सु ठानौ॥
तातैं शिवपुर पहुंचो जाई, रत्नत्रय की यह विधि भाई।
रत्नत्रय पूरण जब होई, क्षमा क्षमा करियो सब कोई॥
चैत माघ भादों त्रयवारा, क्षमा क्षमा हम उरमे धारा॥

ॐ ह्रीं रत्नत्रयाय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यह क्षमावणी आरती, पढ़े सुने जो कोय।
कहे "मल्ल" सरधा करो, मुक्ति श्रीफल होय॥

इत्याशीर्वादः।

अनन्तव्रत पूजा

श्री जिनराज चतुर्दश, जग जयकारजी,
कर्म नाश भवतार सु, शिवसुखधारजी।
संवौषट् ठः ठः सु, वषट् यह उच्चरूं,
आह्वानन स्थापन, निज सन्निधि करूं॥

ॐ ह्रीं श्री वृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रा अत्र अवत-रत्त अवतरत संवौषट् । अत्र तिष्ठत २ ठः ठः । अत्र मम सन्निहिता भवत भवत वषट् सन्निधापनम् ।

गीता छन्द

गङ्गादि तीरथका सुजल भर कनकमय भृङ्गार में,
चउदशजिनेश्वर चरणयुगपरि, धार डारी सार मै ।
श्री वृषभ आदि अनन्त जिन, पर्यन्त पूजों ध्याय के,
करि व्रत अनन्त सुकर्म हनिके, लहों शिवसुख जायके ।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथ पर्यन्त चतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यो जलम् ।

चन्दन अगर घनसार आदि, सुगन्ध द्रव्य घसाय के ।
सरजहि सुगंध जिनेन्द्रके पद, चर्चे हों सुखदाय के ।।श्री०।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्त चतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यः चंदनं ।

तदुल अखंडित अतिसुगन्ध, सुमिष्ट लेके कर धरो ।
जिनराज तुम चरनन निकट, भविपाय पूजों शुभ धरो ।।श्री०।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्त चतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यो अक्षतम् ।

चम्पा चमेली केतकी पुनि, मोगरा शुभ लायके ।
केवडा कमल गुलाब गैंदा, जुही सुमाल बनाय के ।।श्री०।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्त चतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यो पुष्पम् ।

लाडू कलाकंद सेव घेवर, और मोतीचूर ले ।
गूझा सुपेड़ा क्षीर व्यञ्जन, थाल मे भरपूर ले ।।श्री०।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्त चतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यो नैवेद्यम् ।

ले रत्नजडित सुआरती, तामाहि दीप संजोय के ।
जिनराज तुम पद आरतीकर, तिमिरमिथ्या खोयके ।।श्री०।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्त चतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यः दीपम् ।

चन्दन अगर तगर सिलारस, कर्पूरको करि धूप को ।
तागंधते अलिहो चकितसो, खेऊं निकट जिनभूपको ।।श्री०।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्त चतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यो धूपम् ।

नारिंग केला दाख दाडिम, बीजपूर मंगाय के ।
पुनि आम्र और बादाम खारक, कनक थार भरायके ।। श्री० ।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्त चतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यो फलम् ।

जल सुचन्दन अक्षत पुष्प, सुगन्ध बहुविधि लायके ।
नैवेद्य दीप सु धूप फल इन-को जु अर्घ बनाय के ।। श्री० ।।

ॐ ह्री श्रीवृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्त चतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यो अर्घम् ।

जयमाला, पद्धरी छन्द

जय वृषभनाथ वृषको प्रकाश, भविजन को तारे पाप नाश ।
जय अजितनाथ जीते सुकर्म, ले क्षमा खड्ग भेदे जु मर्म ।।
जय संभव जग सुखके निधान, जग सुखकरता तुम दियो ज्ञान ।
जय अभिनन्दन पद धरो ध्यान, तासो प्रगटे शुभज्ञान भान ।।
जय सुमति सुमति के देनहार, जासो उतरे भवउदधि पार ।
जय पद्म पद्म पदकमल तोहि, भविजन अति सेवहि मगनहोंहि ।
जय जय सुपार्श्व तुम नमत पांय, क्षय होत पाप बहु पुन्य थाँय ।।
जय चन्द्रप्रभ शशकोटि भान, जगका मिथ्यातम हरो जान ।।
जय पुष्पदन्त जगमाहि सार, पुष्पकको मारयो अति सुमार ।
करि धर्मभाव जगमे प्रकाश, हर पापतिमिर दियो मुक्तिवास ।।
जय शीतलजिन हरभव प्रवीन, हर पापताप जग सुखी कीन ।
श्रेयांस कियो जगको कल्यान, दे धर्म दुखित तारे सुजान ।।
जय वासुपूज्य जिन नमों तोहि, सुरनर मुनि पूजत गर्व खोहिं ।
जय विमल २ गुण लीन मेय, भवि करे आप सम सगुण देव ।।
जय अनंतनाथ करि अनंतवीर्य, हनि घातकर्म धरि अनंत धीर्य ।
उपजायो केवल ज्ञानभान, प्रभु लखे चराचर सब सुजान ।।

दोहा—ये चौदह जिन जगत मे, मङ्गलकरण प्रवीन ।
पापहरन बहुसुख करन, सेवक सुखमय कीन ।।

ॐ ह्रीं वृषभाद्यनन्तनाथपर्यन्तचतुर्दशजिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यम् ।

चांदनगांव महावीर स्वामी पूजा

(स्व० श्री पूरणमलजी शमशाबाद कृत)

छन्द

श्री वीर सन्मति गांव चांदन मे प्रकट भयो आय कर।
जिनको वचन मन काय से मैं पूजहूं सिर नाय कर॥
हुये दया मम नार नर लखि, शान्ति रूपी वेष को।
तुम ज्ञान रूपी भानु से, कीना सुशोभित देश को॥
सुर इन्द्र विद्याधर मुनि, नरपति नवावें शीश को।
हम नमत हैं नित चावसों, महावीर प्रभु जगदीश को॥

ॐ ह्रीं श्री चांदनगांव महावीर स्वामिन् अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं। ॐ ह्री श्री चांदनगांव महावीर स्वामिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। ॐ ह्री श्री चांदनगांव महावीर स्वामिन् अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अथाष्टकम्

क्षीरोदधि से भरि नीर, कञ्चन के कलशा।
तुम चरणनि देत चढाय, आवागमन नशा॥
चांदनपुर के महावीर, तेरी छवि प्यारी।
प्रभु भव आताप निवार, तुम पद बलिहारी॥ १॥
ॐ ह्री श्री चादनगांव महावीर, स्वामिने जलं।
मलयागिर और कपूर, केशर ले हरषों।
प्रभु भव आताप मिटाय, तुम चरणनि परसों॥ चांदन०॥चंदनं॥
तंदुल उज्ज्वल अति धोय, थारी मे लाऊं।
तुम सन्मुख पुञ्ज चढाय, अक्षय पद पाऊं॥ चांदन०॥ अक्षतं॥
बेला केतकी गुलाब, चम्पा कमल लऊं।
दे कामबाण करि नाश, तुमरे चरण दऊं॥चांदन०॥ नैवेद्यम्॥

फेनी गुञ्जा अरु स्वार, मोदक ले लीजे।
करि क्षुधा रोग निरवार, तुम सन्मुख कीजे ।। चादन०।।नैवेद्यं ।।
घृत मे कर्पूर मिलाय, दीपक मे जारों।
करि मोह तिमिर को दूर, तुम सन्मुख वारों ।। चांदन०।।दीपम् ।।
दश विधि ले धूप बनाय, तामे गन्ध मिला।
तुम सन्मुख खेऊं आय, आठों कर्म जला ।। चांदन० ।। धूपम् ।।
पिस्ता किसमिस बादाम, श्रीफल लोंग सजा।
श्री वर्द्धमान पद राख, पाऊं मोक्ष पदा ।। चांदन० ।। फलम् ।।
जल गन्ध सु अक्षत पुष्प, चरुवर जोर करों।
ले दीप धूप फल मेलि, आगे अर्घ्य करो ।। चांदन० ।। अर्घ्यं ।।

चरणों का अर्घ

जहां काम धेनु नित आय, दुग्ध जु बरसावे।
तुम चरणनि दरशन होत, आकुलता जावे ।।
जहा छतरी बनी विशाल, तहां अतिशय बहु भारी।
हम पूजत मन वच काय, तजि संशय सारी ।। चांदन० ।।

ॐ ह्रीं टोंक में स्थापित श्री महावीर चरणेभ्यो अर्घ्यं।

टीले में विराजमान का अर्घ

टीले के अन्दर आप सोहे पद्मासन,
जहां चतुरनिकाई देव, आवें जिन शासन।
नित पूजन करत तुम्हार कर में ले झारी,
हम हूं वसुद्रव्य बनाय, पूजें भरि थारी ।।चांदन०।।

ॐ ह्रीं चांदनपुर महावीर जिनेन्द्राय टीले में विराजमान समय का अर्घ्यं।

पञ्चकल्याणक

कुण्डलपुर नगर मंझार, त्रिशला उर आयो ।
सुदि छठि असाढ सुर आइ, रतनजु बरसायो ।। चांदन० ।।
ॐ ह्री श्रीमहावीरजिनेन्द्राय आषाढ सुदि छठ गर्भमङ्गलप्राप्ताय०

जनमत अनहद भई घोर, सब जग सुख छाई ।
तेरस शुक्ला को चैत्र, सुरगिर ले जाई ।। चादन० ।।
ॐ ह्री श्रीमहावीरजिनेन्द्राय चैत्र सुदि तेरस जन्ममंगल प्राप्ताय०

कृष्णा मगसिर दश जानि, लौकान्तिक आये ।
करि केश लौच तत्काल, झट बनको ध्याये ।। चांदन० ।।
ॐ ह्री श्रीमहावीरजिनेन्द्राय मंगसिर बुदि दशमी तपमंगल प्राप्ताय०

बैशाख सुदी दशमांहि, घाती क्षय करना ।
पायो तुम केवल ज्ञान, इन्द्रन की रचना ।। चादन० ।।
ॐ ह्री श्रीमहावीरजिनाय बैशाख सुदी दशमी केवलज्ञान प्राप्ताय०

कार्तिक जु अमावश कृष्ण पावापुर ठाही ।
भयो तीनलोक मे हर्ष, पहुचे शिव मांही ।। चादन० ।।
ॐ ह्री श्रीमहावीरजिनाय कार्तिकबदी अमावस मोक्षमंगल प्राप्ताय०

जयमाला

मंगलमय तुम हो सदा, श्री सन्मति सुखदाय ।
चादनपुर महावीर की, कहू आरती गाय ।।

जय जय चादनपुर महावीर, तुम भक्तजनो की हरत पीर ।
जड चेतन जगके लखत आप, दई द्वादशांग वानी अलाप ।।१।।
अब पंचमकाल मंझार आय, चादनपुर अतिशय दई दिखाय ।
टीले के अंदर बैठ वीर, नित हरा गायका आप क्षीर ।।२।।
ग्वाला को फिर आगाह कीन, जब दर्शन अपना आप दीन ।
मूरत देखी अति ही अनूप, है नग्न दिगम्बर शान्ति रूप ।।३।।

तहाँ श्रावक जन बहु गये आय, कीने दर्शन मन वचन काय ।
है चिन्ह शेरका ठीक जान, निश्चय है ये श्री वर्द्धमान ।।४।।
सब देशनके श्रावक जु आय, जिन भवन अनूपम दियो बनाय ।
फिर शुद्ध दई वेदी कराय, तुरतहि गजरथ फिर लियो सजाय ।।५।।
ये देख ग्वाल मन मे अधीर, मम गृह को त्यागो नही वीर ।
तेरे दर्शन बिन तजूं प्राण, सुन विनय मेरी कृपा निधान ।।६।।
कीने रथ में प्रभु विराजमान, रथ हुआ अचलगिरि के समान ।
तब तरह तरह के किये जोर, बहुतक रथ गाडो दिये तोड ।।७।।
निशिमाहि स्वप्न सचिवहिं दिखात, रथचले ग्वालका लगत हाथ ।
भोरहि झट चरण दियो बनाय, संतोष दियो ग्वालहिं कराय ।।८।।
करि जय जय प्रभु से करी टेर, रथ चल्यो फेर लागि न देर ।
बहु नृत्य करन बाजे बजाइ, स्थापन कीनै तहं भवन जाइ ।।९।।
इक दिन मन्त्री को लगा दोष, धरि तोप कही नृप खाई रोष ।
तुमको जब ध्याया वहां वीर, गोलासे झट बच गया वजीर ।।१०।।
मन्त्री नृप चांदन गांव आय, दर्शन करि पूजा की बनाय ।
करि तीन शिखर मन्दिर रचाय, कंचन कलशा दीने धराय ।।११।।
यह हुकम कीयो जयपुर नरेश, सालाना मेला हो हमेश ।
अब जुडन लगे बहु नर औ नार, तिथि चैत सुदी पूनौ मझार ।
मीना गूजर आवें विचित्र, सब वर्ण जुड़े करि मन पवित्र ।।१२।।
बहु निरत करत गावे सिहाय, कोइ कोई दीपक रह्या चढाय ।
कोई जय जय शब्द करे गम्भीर, जय जय जय हे श्रीमहावीर ।
जैनी जन पूजा रचत आन, कोई छत्र चँवर के करत दान ।
जिसकी जो इच्छा मन करंत, मनवाञ्छित फल पावै तुरंत ।।
जो करै वंदना एक बार, सुख पुत्र संपदा हो अपार ।
जो तुम चरणो मे रक्खे प्रीति, जा को जगमे को सके जीत ।
है शुद्ध यहां का पवन नीर, जहां अति विचित्र सरिता गंभीर ।।

पूरनमल पूजा रची सार, होय भूल लेउ सज्जन सुधार ।
मेरा है शमशाबाद ग्राम, त्रिकाल करूं प्रभु को प्रणाम ।।
श्री वर्द्धमान तुम गुणनिधान, उपमा न बनी तुम चरनन की ।
है चाह यही नित बनी रहे, अभिलाष तुम्हारे दरशन की ।।
दोहा—अष्ट कर्म के दहन को, पूजा रची विशाल ।
पढ़े सुने जो भाव से छूटे जग जंजाल ।। अर्घ्यं ।।
संबत जिन चौबीस सौ, है बासठ की साल ।
एकादश कार्तिक बदी, पूजा रची सम्हाल ।।

।। इति आशीर्वादः ।।

श्री पद्मपुरा में विराजित

श्री पद्मप्रभ पूजा

दोहा—श्रीधर नन्दन पद्म प्रभ, वीतराग जिन नाथ ।
विघ्न हरण मंगल करन, नमों जोरि जुग हाथ ।।
जन्म महोत्सव के लिए, मिलकर सब सुर राज ।
आये कौशाम्बी नगर, पद पूजा के काज ।।
पद्मपुरी मे पद्मप्रभ, प्रगटे पद्मा रूप ।
परम दिगम्बर शांतिमय, छबि साकार अनूप ।।
हम सब मिल करके यहां, प्रभु पूजा के काज ।
आह्वानन करते सुखद, कृपा करो महाराज ।।
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव, वषट्

[अष्टक]

क्षीरोदधि उज्ज्वल नीर, प्रासुक गन्ध भरा ।
कंचन झारी में लेय, दीनों धार धरा ।।

बाड़ा के पद्म जिनेश, मंगल रूप सही ।
काटो सब क्लेश महेश, मेरी अर्ज यही ॥१॥
ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि० ।
चन्दन केशर कर्पूर, मिश्रित गन्ध धरो ।
शीतलता के हित देव, भव आताप हरो ॥ बाडा के० ॥
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चंदनं नि० ।
ले तंदुल अमल अखंड, थाली पूर्ण भरो ।
अक्षय पद पावन हेतु, हे प्रभु पाप हरो ॥ बाडा के० ॥
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि० ।
ले कमल केतकी बेल, पुष्प धरूं आगे ।
प्रभु सुनिये हमरी टेर, काम कला भागे ॥ बाडा के० ॥
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि० ।
नैवेद्य तुरत बनवाय, सुन्दर थाल सजा ।
मम क्षुधा रोग नश जाय, गाऊं वाद्य बजा ॥ बाड़ा के० ॥
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं नि० ।
हो जगमग २ ज्योति, सुन्दर अनियारी ।
ले दीपक श्री जिनचन्द, मोह नशे भारी ॥ बाड़ा के० ॥
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं नि० ।
ले अगर कपूर सुगन्ध, चंदन गन्ध महा ।
खेवत हों प्रभु ढिग आज, आठों कर्म दहा ॥ बाड़ा के० ॥
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि० ।
श्रीफल बादाम सुलेय, केला आदि धरे ।
फल पाऊं शिव पद नाथ, अरपूं मोद भरे ॥ बाड़ा के० ॥
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि० ।
जल चन्दन अक्षत पुष्प, नेवज आदि मिला ।
मैं अष्ट द्रव्य से पूज, पाऊं सिद्ध-सिला ॥ बाड़ा के० ॥
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि० ।

अर्घ चरणों का

चरण कमल श्री पद्म के, वन्दो मन वच काय।
अर्घ्य चढाऊं भाव से, कर्म नष्ट हो जाय ।। बाडा के० ।।
ॐ ह्री श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्र के चरणो मे अर्घ्यं नि० ।

भूमि मे विराजमान का अर्घ

धरती मे श्री पद्म की पद्मासन आकार।
परम दिगम्बर शान्तिमय, प्रतिमा भव्य अपार।
सौम्य शक्ति अति कातिमय, निर्विकार साकार।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य ले, पूजों विविध प्रकार ।।बाड़ा०।।
ॐ ह्री श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय भूमि मे स्थित समय अर्घ्यं नि० ।

[पञ्चकल्याणक]

(हर एक दोहा के बाद नीचे लिखी अचरी पढना चाहिए)
श्री पदम प्रभु जिनराज जी, मोहे राखो हो सरना।

दोहा।

माघ कृष्ण छट मे प्रभो, आये गर्भ मझार।
मात सुसोमा का जनम, किया सफल करतार ।। श्री पदम०।।
ॐ ह्री माघ कृष्णा षष्ठी दिने गर्भ मङ्गल प्राप्ताय श्रीपद्मप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कातिक सुदी तेरस तिथी, प्रभो लियो अवतार।
देवो ने पूजा करी, हुआ मंगलाचार ।। श्री पदम०।।
ॐ ह्री कातिक शुक्ला त्रयोदश्या जन्ममंगलप्राप्ताय श्रीपद्मप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कातिक शुक्ला त्रयोदशी, तृणवत बन्धन तोड़।
तप धारों भगवान ने, मोह कर्म मोड़ ।। श्री पद्म० ।।
ॐ ह्री कातिक शुक्ला त्रयोदश्या तप कल्याणकप्राप्ताय श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चैत्र शुक्ला की पूर्णिमा, उपज्यो केवलज्ञान ।
भवसागर से पार हो, दियो भव्य जन ज्ञान ।। श्री पद्मप्रभ०।।

ॐ ह्रीं चैत्र शुक्ला पूर्णिमायां केवलज्ञानप्राप्ताय श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

फाल्गुन बदी सुचोथ को, मोक्ष गये भगवान ।
इन्द्र आय पूजा करी, मै पूजौ धर ध्यान ।। श्री पदम०

ॐ ह्रीं फाल्गुन कृष्ण चतुर्थी दिने मोक्षमंगलप्राप्ताय श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्य निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला

दोहा—चौतीसों अतिशय सहित, बाड़ा के भगवान् ।
जयमाला श्री पद्म की, गाऊं सुखद महान ।।

पद्धरी छन्द

जय पद्मनाथ परमात्म देव, जिनकी करते सुर चरण सेव ।
जय पदम २ प्रभु तन रसाल, जय २ करते मुनिमन विशाल ।।
कोशाम्बी मे तुम जन्म लीन, बाड़ा मे बहु अतिशय करीन ।
इक जाट पुत्र ने जमी खोद, पाया तुमको होकर समोद ।।
सुनकर हर्षित हो भविक वृन्द, आकर पूजा की दुख निकंद ।
करते दुखियो का दु.ख दूर, हो नष्ट प्रेत बाधा जरूर ।।
डाकिन शाकिन सब होय चूर्ण, अन्धे हो जाते नेत्र पूर्ण ।
श्रीपाल सेठ अञ्जन सुचोर, तारे तुमने उनको विभोर ।।
अरु नकुल सर्प सीता समेत, तारे तुमने निज भक्ति हेत ।
हे सङ्कट मोचन भक्त पाल, हमको भी तारो गुण विशाल ।।
बिनती हूँ करता बार बार, होवे मेरा दुख क्षार क्षार ।
मोना गूजर सब जाट जैन, आकर पूजे कर तृप्त नैन ।।
मन वच तन से पूजे जो कोय, पावे वे नर शिव सुख जो सोय।
ऐसी महिमा तेरी दयाल, अब हम पर भी होवो कृपाल ।

ॐ ह्रीं श्रीपद्मप्रभ जिनेन्द्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

पूजा विधि जानूं नहीं, नहिं जानूं आह्वान।
भूल चूक सब माफ कर, दया करो भगवान्॥

इत्याशीर्वादः।

देव, शास्त्र गुरू–पूजा

[श्री युगल बी० ए० साहित्यरत्न कृत]

स्थापना

केवल-रविकिरणो से जिसका, सम्पूर्ण प्रकाशित है अन्तर।
उस श्री जिनवाणी मे होता, तत्त्वों का सुन्दरतम दर्शन॥
सद्दर्शन बोध चरण पथ पर, अविरल जो बढते हैं मुनिगण।
उन देव परम आगम गुरु को, शत-शत वंदन शत-शत वंदन॥
ॐ ह्रीं देवशास्त्र गुरु समूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

जल

इन्द्रिय के भोग मधुर विष सम, लावण्यमयी कञ्चन काया।
यह सब कुछ जड की क्रीडा है, मै अब तक जान नही पाया॥
मै भूल स्वयं के वैभव को, पर ममता मे अटकाया हूँ।
अब निर्मल सम्यक् नीर लिये, मिथ्या मल धोने आया हूँ॥जलं

चन्दन

जड चेतन की सब परिणति प्रभु, अपने अपने मे होती है।
अनुकूल कहे प्रतिकूल कहे, यह झूंठी मन की वृत्ति है॥
प्रतिकूल संयोगो मे क्रोधित, होकर संसार बढाया है।
संतप्त हृदय प्रभु! चदन सम, शीतलता पाने आया है॥ चं०

अक्षत

उज्ज्वल हूँ कुन्द धवल हू प्रभु, पर से न लगा हूँ किञ्चित् भी।

फिर भी अनुकूल लगे उन पर, करता अभिमान निरन्तर हो ।।
जड़ पर झुक झुक जाता चेतन, की मार्दव की खंडित काया ।
निज शाश्वत अक्षत-निधि पाने, अब दास चरण-रजमें आया ।अ०

पुष्प

यह पुष्प सुकोमल कितना है, तन मे माया कुछ शेष नही ।
निज अन्तर का प्रभु ! भेद कहूं, उसमे ऋजुता का लेश नहीं !
चितन कुछ, फिर सम्भाषण कुछ, किरिया कुछकी कुछ होती है ।
स्थिरता निज मे प्रभु पाऊं जो, अन्तर का कालुष धोती है । पु०

नैवेद्य

अब तक अगणित द्रव्यो से, प्रभु ! भूख न मेरी शान्त हुई !
तृष्णा की खाई खूब भरी, पर रिक्त रही वह रिक्त रही ।।
युग युग से इच्छा सागर मे, प्रभु ! गोते खाता आया हूं ।
पंचेन्द्रिय मन के षट्रज तज, अनुपम रस पीने आया हूं ।।नैवे०।।

दीपं

जग के जड दीपक को अब तक, समझा था मैने उजियारा ।
झंझा के एक झकोरे मे, जो बनता घोर तिमिर कारा ।।
अतएव प्रभो ! यह नश्वर दीप, समर्पण करने आया हूं ।
तेरी अन्तर लौ से निज अन्तर, दीप जलाने आया हूं ।।दीपं०।।

धूप

जड कर्म घुमाता है मुझको, यह मिथ्या भ्रांति रही मेरी ।
मै राग-द्वेष किया करता, जब परिणति होती जड केरी ।।
यो भाव करम या भाव मरण, सदियों से करता आया हूं ।
निज अनुपम-गन्ध अनल से प्रभु, पर-गंध जलाने आया हूं ।।धूपं०

फल

जग मे जिसको निज कहता मैं, वह छोड़ मुझे चल देता है ।

मै आकुल व्याकुल हो लेता, व्याकुल का फल व्याकुलता है ।।
मै शान्त निराकुल चेतन हूं, है मुक्तिरमा सहचर मेरी ।
यह मोह तड़क कर टूट पड़े प्रभु ! सार्थक फल पूजा तेरी ।।फ०।

अर्घ

क्षण भर निज रस को पी चेतन, मिथ्या मल को धो देता है ।
काषायिक भाव विनष्ट किये, निज आनन्द अमृत पीता है ।।
अनुपम सुख तब बिलसित होता, केवल रवि जगमग करता है ।
दर्शन बल पूर्ण प्रगट होता यह ही अर्हन्त अवस्था है ।।
यह अर्घ समर्पण करके प्रभु ! निज गुण का अर्घ बनाऊंगा ।
और निश्चित तेरे सदृश प्रभु ! अर्हन्त अवस्था पाऊंगा ।।अर्घ्यं०।।

स्तवन

भव वन मे जीभर घूम चुका, कण कण को जी भर भर देखा ।
मृग-सम मृग-तृष्णा के पीछे, मुझको न मिली सुख की रेखा ।।१।।
झूठे जगके सपने सारे, झूठी मन की सब आशाये ।
तन-जीवन-यौवन-अस्थिर है, क्षणभंगुर पल मे मुरझाये ।।२।।
सम्राट महा बल सेनानी, उस क्षण को टाल सकेगा क्या ।
अशरण मृत काया मे हर्षित, निज जीवन डाल सकेगा क्या ।।३।।
संसार महा दुख-सागर के, प्रभु दुख मय सुख-आभासो मे ।
मुझको न मिला सुख क्षण भर भी, कञ्चन-कामिनी-प्रासादो मे ।।४।।
मै एकाकी एकत्व लिए, एकत्व लिए सबही आते ।
तन धन को साथी समझा था, पर ये भी छोड चले जाते ।।५।।
मेरे न हुए ये मै इनमे, अति भिन्न अखड निराला हूं ।
निज मे पर से अन्यत्व लिये, निज सम रस पीने वाला हूं ।।६।।
जिनके शृङ्गारो मे मेरा, यह मंहगा जीवन घुल जाता ।
अत्यन्त अशुचि जड काया से, इस चेतन का कैसा नाता ।।७।।

दिन रात शुभाशुभ भावों से, मेरा व्यापार चला करता ।
मानस वाणी और काया से, आश्रव का द्वारा खुला रहता ॥८॥
शुभ और अशुभ की ज्वाला से, झुलसा है मेरा अन्तस्तल ।
शीतल समकित किरणें फूटें, संवर से जागे अन्तर्बल ॥ ९ ॥
फिर तपकी शोधक वह्नि जगे, कर्मों की कड़ियां टूट पडे ।
सर्वाङ्ग निजात्म प्रदेशों से, अमृत के निर्झर फूट पडे ॥ १० ॥
हम छोड चलें यह लोक तभी, लोकांत विराजें क्षण मे जा ।
निज लोक हमारा वासा हो, शोकांत बनें फिर हमको क्या ॥११॥
जागे मम दुर्लभ बोधि प्रभो ! दुर्नयतम सत्वर टल जावे ।
बस ज्ञाता दृष्टा रह जाऊं, मद-मत्सर-मोह-विनश जावे ॥ १२ ॥
चिर रक्षक धर्म हमारा हो, हो धर्म हमारा चिर साथी ।
जग मे न हमारा कोई था, हम भी न रहे जग के साथी ॥१३॥
चरणों में आया हूँ प्रभुवर, शीतलता मुझको मिल जावे ।
मुर्झाई ज्ञान लता मेरी, निज अन्तर्बल से खिल जावे ॥१४॥
सोचा करता हूँ भोगों से, बुझ जावेगी इच्छा ज्वाला ।
परिणाम निकलता है लेकिन, मानों पावक मे घी डाला ॥१५॥
तेरे चरणों की पूजा से, इन्द्रिय सुख की ही अभिलाषा ।
अब तक न समझ मे पाया प्रभु ! सच्चे सुखकी भी परिभाषा ॥१६॥
तुम तो अविकारी हो प्रभुवर ! जगमें रहते जग से न्यारे ।
अतएव झुके तव चरणों में, जगके माणिक मोती सारे ॥ १७ ॥
स्याद्वादमयी तेरी वाणी, शुभनय के झरने झरते है ।
उस पावन नौका पर लाखों, प्राणी भव-वारिधि तिरते है ॥१८॥
हे गुरुवर ! शाश्वत सुख दर्शक, यह नग्न स्वरूप तुम्हारा है ।
जगकी नश्वरता का सच्चा, दिग्दर्शन करने वाला है ॥ १९ ॥
जब जग विषयों मे रच पच कर, गाफिल निद्रा मे सोता हो ।
अथवा वह शिव के निष्कंटक, पथ मे विष कंटक बोता हो ॥२०॥

हो अर्ध निशा का सन्नाटा, वन मे वनचारी चरते हो ।
तब शान्त निराकुल मानस तुम, तत्त्वोंका चितन करते हो ।।२१।।
करते तप शैल नदी तट पर, तरु तल वर्षा की झड़ियों मे ।
समता रस पान किया करते, सुख दुख दोनोको घड़ियों मे ।।२२।।
अन्तर ज्वाला हरती वाणी, मानो झडती हों फुलझडियां ।
भव बन्धन तड़ तड़ टूट पड़े, खिल जावे अन्तर की कलियां ।।२३।।
तुम सा दानी क्या कोई हो, जग को देदी जग की निधियां ।
दिन रात लुटाया करते हो, सम शम की अविनश्वर मणिया ।।२४।।
हे निर्मल देव ! तुम्हे प्रणाम, हे ज्ञान दीप आगम ! प्रणाम ।।
हे शान्ति त्याग के मूर्तिमान, शिव पथ पंथी गुरुवर ! प्रणाम ।।

ॐ ह्री देवशास्त्रगुरुभ्यः जयमालार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

पञ्च परमेष्ठीजी पूजा

दोहा—मंगलमय मंगल करन, पञ्चपरम पदसार ।
अशरण को येही शरण, उत्तम लोक मंझार ।।१।।

चव अरिष्ट को नष्ट कर, अनन्त चतुष्टय पाय ।
परमइष्ट, अरिहन्त पद, बन्दो शीश नवाय ।। २ ।।

वसुविधिहरि, वसु भू बसे, वसुगुणयुत शिव ईस ।
नमूं नाम वसु अंग तिन, दायक पद जगदीश ।।३।।

आप धरैं आचार शुभ, पर अचरावन हार ।
सो आचारज गुणनधर, नमूं शीस कर धार ।।४।।

आप अंग पूरब पढैं, शिषनि पढावत सोय ।
ते उवझाय सु नाय सिर, नमूं देव धो मोय ।।५।।

मोक्ष मार्ग साधन उदित, धरैं मूल गुण साध ।
मैं शिव साधन साधु पद, नमूं हरन भव वाधि ।।६।।

इह विधि पंचनि प्रणामिकर, रचूं पूज सुखकार ।
तातै प्रथमहि पढ़नि को, समुच्चय जजिहूं सार ।।७।।पुष्पां०

पञ्च परमेष्ठी सामान्य पूजा

अडिल्ल—प्रथम नमूं अरिहंत सिद्ध अरु सूरहो,
उपाध्याय सब साधु नमूं गुण पूरही ।
परम इष्ट यह पञ्च जजौ जुग पादहो,
आह्वानन विधि करूं सगुन गण गायही ।।

ॐ ह्रीं श्री अरिहंतादि सर्व साधु पर्यंत पंच परमेष्ठिन् अत्र-अवतर २ संवौषट् आह्वाननं । श्री अरिहंतादि सर्व साधु पर्यंत पंच परमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं । श्री अरिहंतादि सर्व साधु पर्यन्त पञ्च परमेष्ठिन् अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्, सन्निधापनम् ।

।। अथाष्टकम्—गीता छन्द ।।

वर मिष्ट स्वच्छ सुगंध शीतल, सुर सरित जल लाइये ।
भरि कनक झारीधार देतें, जन्म मृत्यु नशाइये ।।
अरिहंत सिद्ध आचार्य, अध्यापक सुपद सब साधही ।
पूंजूं सदा मन वचन तन तें, हरो मो भव बाधही ।।

ॐ ह्रीं अरिहंत सिद्धाचार्य उपाध्याय सर्व साधुभ्यो जन्म मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामोति स्वाहा ।।

मलय माहि मिलाय केशर, घसो चन्द बावना ।
भृङ्गार भर करि चरण पूजन, भवआताप नसावना ।।
अरहंत सिद्ध० ।। चन्दनम् ।।

अक्षत अखंडित सुरभि श्वेतहि, लेत भर करि थालही ।
जे जजैं भविजन भाव सेती, अक्षय पद पावैं सही ।।
अरिहंत० ।। अक्षतम् ।।

स्वर्ण रूप्य मई मनोहर, विविध पुष्प मिलाइये।
भरि कनक थाल सु पूजि हैं, भविसमर बान नशाइये ॥
अरिहंत० ॥ पुष्पम् ॥
बहु मिष्ट मोदक सुष्ट फैनी, आदि बहु पकवान हो !
भरि थाल प्रभु पद जजै विधितै, नसै क्षुत दुख नाशहो ॥
अरिहत ॥ नैवेद्यम् ॥
मणि स्वर्ण आदि उद्योत कारण, दीप बहुविध लीजिये।
तम मोह पटल विध्वंसने जुग, पाद पूजन कीजिये ॥
अरिहंत० ॥ दीपम् ॥
कर्पूर अगर सुगन्ध चन्दन, कनक धूपायन भरै।
भवि करहि पूजा भाव सेतो, अष्ट कर्म सबै जरै ॥
अरिहंत० ॥ धूपम् ॥
बादाम श्रीफल लौंग खारिक, दाख पुंगी आदि हो।
भरि थाल भविजन पूजि करते, मोक्षफल पावै सही ॥
अरिहंत० ॥ फलम् ॥
जल गंध अक्षत पुष्प चरुलें, दीप धूप फलो गहो।
करि अर्घ पूजैं पच पद को, लहै शिव सुख बृन्द ही ॥
अरिहंत० ॥ अर्घ्यम् ॥

जयमाला

दोहा—नमूं प्रथम अरिहंत सिद्ध, आचारज उवझाय।
साधु सकल विनती करूं, मन वच तन सिरनाय ॥१॥

पद्धडी छन्द।

चव घाति चूर अरहंत नाम, पायो च्युत दोष न सु गुण धाम।
तिनमे षट चाल जु मुख्य थाय, तिनमे दस गुण जनमत उपाय ॥२
जय केवल ज्ञान उद्योत ठान, उपजे दश गुण को कहि बखान।
चौदह गुण देवनि करत होय, तिनकी महिमा वरणे सु कोय ॥३॥

वर अष्ट प्रातिहारज संयुक्त, चामर छत्रादिक नाम युक्त।
केवल दर्शन वर ज्ञान पाय, सुख वीर्य अनन्त चतुष्ट पाय ।।४।।
ये कहिवे के गुण है छियार, गुण अनन्त लसैं तिनको न पार।
तातैं करि हो करि अर्घ लेय, मोहि तारि तारि अरहंत देव ।।५।।
वसुविधिहरि वसु भू बसे सिद्ध, वसुगुण आदिक लहि अत्यंतरिद्ध।
पूजूं मन वच तन अर्घ ल्याय, मोकूं तुम थानक मे बसाय ।।६।।
वर द्वादश तप दस धर्म भेव, षट् आवस पंचाचार येव।
त्रय गुप्ति सुगुन छत्तीस पाय सब सङ्घ ज्येष्ठ गुरु सूरिथाय ।।७।।
बहु जीवन वृष को मग बताय, शिव संपति दीनी मुनीराय।
पूजूं मन वच तन अर्घ लेय, मोकूं अजरामर पद करेय ।।८।।
वर ग्यारह अंगरु चवद पूर्व, पढि उपाध्याय पद लयो पूर्व।
तिनके पद पूजत अर्घ लाय, सब भ्रम नाशन निज ज्ञान पाय ।।९।।
गुण मूल अष्ट--विंशति अनूप, धरि है सब साधु सु शिव सरूप।
व्रत पञ्चसमिति पणइन्द्र रोध, षट् आवस भूमि सु सयन सोध ।।१०।।
तजि स्नान वसन कच लौच ठानि, लघु भोजन ठाडे करत आन।
दंतौन त्याग ये अष्ट बीस, धरि साधे शिव तिन नमत शीस ।।११।।
करि अष्ट द्रव्य को अर्घ लेय, सब साधुन की करिहों जु सेव।
मै मन वच तन तै शीश नाय, नंमि हों मो शिव मगकों बताय।। १२।।
जल थल रन बन मग विकट मांहि, ये पंच परमगुरु शरण थांहि।
डायन प्रेतादि उपद्र मांहि, इन पंच परम बिन को सहाय ।।१३।।
बहु जीव जपत नवकार येव, रिद्ध सिद्ध लही सङ्कट हरेव।
सो कथन पुरान पुरान मांहि, हम ताकी महिमा का कहांहि ।।१४।।

घत्ता--ये पंच अराधे भव दुख बाधे, शिव संपति सहजै बरई।
मै मन वच गाऊं शीश नवाऊं, मो अविचल थानहि धरई ।।

ॐ ह्री पञ्चपरमेष्ठी जयमाला पूर्णार्घ्यं।

सोरठा—विघन विनाशन हार, मङ्कलकारी लोकमे ।
सो तुमको भी सार, पंच सकल मंगल करें ।।१६।।

इत्याशीर्वादः

शांतिपाठ संस्कृत

(शांतिपाठ बोलते समय दोनो हाथों से पुष्पवृष्टि करते रहें)

दोधकवृत्त ।

शांतिजिनं शशिनिर्मलवक्त्रं, शीलगुणव्रतसंयमपात्रं ।
अष्टशतार्चितलक्षणगात्रं, नौमि जिनोत्तमममंबुज नेत्रं ।।१।।
पञ्चममीप्सित–चक्रधराणां, पूजितमिन्द्रनरेन्द्रगणैश्च ।
शांतिकरं गणशांतिमभीप्सुः षोडशतीर्थकरं प्रणमामि ।।२।।
दिव्यतरुः सुरपुष्पसुवृष्टिर्दुन्दुभिरासनयोजनघोषौं ।
आतपवारणचामरयुग्मे यस्य विभाति च मंडलतेजः ।।३।।
तं जगदर्चितशांतिजिनेन्द्रं शांतिकरं शिरसा प्रणमामि ।
सर्वगणाय तु यच्छतु शांतिं मह्यमरं पठते परमां च ।।३।।

वसंततिलका छन्द ।

येऽभ्यर्चिता मुकुटकुण्डलहाररत्नैः, शक्रादिभिः सुरगणैःस्तुतपादपद्म
ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्प्रदीपास्तीर्थङ्कराः सततशांतिकरा भवन्तु

इन्द्रवज्रा ।

सम्पूजकाना प्रतिपालकाना यतीन्द्रसामान्यतपोधनानां ।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु शांति भगवान् जिनेन्द्रः ।।६।।

स्रग्धरावृत्त ।

क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान् धार्मिको भूमिपालं ।
काले काले च सम्यग्वर्षतु मघवा व्याधयो यांतु नाशम् ।

दुर्भिक्षं चौरमारी क्षणमपि जगतां मा स्म भूज्जीवलोके !
जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं सर्वसौख्यप्रदायि ।।७।।
अनुष्टुप:--प्रध्वस्तघातिकर्माणः केवलज्ञानभास्कराः ।
कुर्वन्तु जगतः शांतिं वृषभाद्या जिनेश्वराः ।।८।।

प्रथमं करणम् चरणं द्रव्यं नमः ।
अथेष्ट प्रार्थना । शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः सङ्गतिः सर्वदार्यैः ।
सद्वृत्तानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनम् ।
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे
सम्पद्यन्तां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्ग- ।। ९ ।।

आर्यावृत्तं ।

तव पादौ मम हृदये मम हृदयं तव पदद्वये लीनम् ।
तिष्ठतु जिनेन्द्र ! तावद्यावन्निर्वाणसंप्राप्तिः ।। १० ।।
अक्खरपयत्थहीणं मत्ताहीणञ्च जं मए भणियं ।
तं खमउ णाणदेव य मज्झ वि दुक्खक्खयम् दिंतु ।।११।।
दुक्खक्खओ कम्मक्खओ, समाहिमरणञ्च बोहिलाओ य ।
मम होउ जगतबान्धव तव जिणवर चरणसरणेण ।।१२।।

संस्कृत प्रार्थना

त्रिभुवनगुरो ! जिनेश्वर ! परमान्दैककारणम् कुरुष्व ।
मयि किंकरेत्र करुणां यथा तथा जायते मुक्तिः ।।१३।।
निर्विण्णोहम् नितरामर्हन् बहुदुक्खया भवस्थित्या ।
अपुनर्भवाय भवहर ! कुरु करुणामत्र मयि दीने ।।१४।।
उद्धर मां पतितमतो विषमाद् भवकूपतः कृपां कृत्वा ।
अर्हन्नलमुद्धरणे त्वमसीतिपुनर्पुनर्वच्मि ।।१५।।
त्वं कारुणिकः स्वामी त्वमेव शरणं जिनेश ! तेनाहं ।
मोहरिपुदलितमानं फूत्करणं तव पुरः कुर्वे ।।१६।।

अमपतेरपि करुणा परेण केनाप्युपद्रुते पुंसि ।
जगतां प्रभो ! न किं तव, जिन ! मयि खलु कर्मभिः प्रहते ॥१७॥
अपहर मम जन्म दयां, कृत्वेत्येकवचसि वक्तव्ये ।
तेनातिदग्ध इति मे देव ! बभूव प्रलापित्वं ॥१८॥
तव जिनवर ! चरणाब्जयुगं करुणामृतशीतलं यावत् ।
संसारतापतप्तः करोमि हृदि तावदेव सुखी ॥१९॥
जगदेकशरण भगवन् ! नौमि श्रीपद्मनन्दितगुणौघ !
किं बहुना कुरु करुणामत्र जने शरणमापन्ने ॥२०॥

परिपुष्पाञ्जलि क्षिपेत् ।

विसर्जन संस्कृत ।

ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि शास्त्रोक्तं न कृतं मया ।
तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु त्वत्प्रसादाज्जिनेश्वर ॥१॥
आह्वानं नैव जानामि नैव जानामि पूजनं ।
विसर्जनं न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ॥२॥
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं द्रव्यहीनं तथैव च ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥३॥
आहूता ये पुरा देवाः लब्धभागा यथाक्रमं ।
ते मयाऽभ्यर्चिता भक्त्या सर्वे यांतु यथास्थिति ॥४॥
सर्वमंगलमांगल्यं सर्वकल्याणकारकम् ।
प्रधानं सर्व-धर्माणां जैन जयतु शासनम् ॥५॥

महार्घ

गीता छन्द

मैं देव श्री अर्हंत पूजूं सिद्ध पूजूं चावसों ।
आचार्य श्री उवझाय पूजूं साधु पूजूं भावसों ॥

अर्हंत-भाषित बैन पूजूं द्वादशांग रचे गनी।
पूजूं दिगम्बर गुरुचरन शिव हेत सब आशा हनी॥
सर्वज्ञ भाषित धर्म दशविधि दया-मय पूजूं सदा।
जजि भावना षोडश रतनत्रय जा बिना शिव नहि कदा॥
त्रैलोक्य के कृत्रिम अकृत्रिम चैत्य चैत्यालय जजूं।
पन मेरु नन्दोश्वर जिनालय खचर सुर पूजित भजूं॥
कैलाश श्री सम्मेद श्री गिरनार गिरि पूजूं सदा।
चम्पापुरी पावापुरी प्रति और तीरथ सर्वदा॥
चौबीस श्री जिनराज पूजूं बीस क्षेत्र विदेह के।
नामावली इक सहस वसु जस होय पति शिव गेह के॥

दोहा—जल गंधाक्षत पुष्प चरु, दीप धूप फल लाय।
सर्व-पूज-पद पूज हूं, बहु विधि भक्ति बढाय॥ महार्घ्यं॥

महाव्रतों का अर्घ

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैः चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमङ्गलगानरवाकुले, जिनगृहे जिनव्रतमहं यजे॥

ॐ ह्री महाव्रतेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महामुनियों का अर्घ

ग्यानको उजागर सहज सुख-सुखसागर, सुगुन-रत्नाकर विराग-रस भर्यौ हे। सरनकी रीति हरैं मरनको न भै करैं, करनसौ पीठि दे, चरन अनुसर्यौ है॥ धरम को मंडन भरमको विहंडन है, परम नरम ह्वै के करमसो लर्यौ है ऐसो मुनिराज भुवलोक मे विराजमान, निरखि बनारसी नमस्कार कर्यो है॥ ५॥

ॐ ह्री त्रयोदशविधचारित्रधारक मुनिवरेभ्योऽर्घ्यं नि०।

शांति पाठ

शास्त्रोक्त विधि पूजा महोत्सव सुरपति-चक्री करै ।
हम सारिखे लघु पुरुष-कैसे यथा 'विधि पूजा करै ।।
धन क्रिया ज्ञान-रहित न जाने, रीत पूजन नाथजो ।
हम भक्तिवश तुम चरण आगे, जोड़ लीने हाथ जो ।। १ ।।
दुख हरण मङ्गल करण आशा, भरण जिन पूजा सही ।
यह चित्त मे सरधान मेरे शक्ति द्यो स्वयमेव ही ।
तुम सारिखे दातार पाये, काज लघु ज़ाचूं कहा ।
मुझ आप सम करलेहु स्वामी, एक यह वांछा महा ।।२।।
संसार भीषण विपिन मे वसु कर्म मिलि आतापियो ।
तिस दाहतैं आकुलित चिततै, शातिथल कहूँ ना लियो ।।
तुम मिले शांतिस्वरूप शान्तिकरण समरथ जगपती ।
वसु कर्म मेरे शाति करदो शान्ति मे पंचम गती ।।३।।
जबलौ नही शिव लहूँ तबलौ देव ये धन पावना ।
सतसंग शुद्धाचरण श्रुत अभ्यास आतम भावना ।।
तुम बिन अनन्तानन्त काल गयो रुलत जगजाल मे ।
अब शरण आयो नाश दुख करजोड नावत भाल मै ।।४।।
दोहा—कर प्रमाण के मानते, गगन नपैं किहि भन्त ।
त्यों तुम गुण वर्णन करूं, कवि नहि पावे अन्त ।।
पुष्पाञ्जलि क्षिपेत् ।

विसर्जन पाठ

सम्पूर्ण विधि कर बीनऊँ इस परम पूजन ठाठ मे ।
अज्ञान वश शास्त्रोक्त विधितै चूक कीन्हों पाठ मे ।।
सो होहु पूरण समस्त विधिवत् तुम चरण की शरणतैं ।
बन्दों तुम्हें कर जोड़ कर उद्धार जामन मरणतैं ।।१।।

आह्वानन स्थापन तथा सन्निधिकरण विधान जो।
पूजन विसर्जन यथाविधि जानूं नही गुण खान जो॥
जो दोष लागो सो नसो सब तुम चरण की शरणतैं।
वन्दों तुम्हे कर जोड कर उद्धार जामन मरणतैं॥२॥
तुम रहित आवागमन आह्वानन कियो निज भाव में।
विधि यथाक्रम निजशक्ति सम पूजन कियो अतिचाव मे॥
करहूं विसर्जन भाव ही में तुम चरण की शरण तैं।
बन्दो तुम्हे कर जोड कर उद्धार जामन मरणतैं॥३॥

दोहा—तीन भवन तिहुं काल में, तुमसा देवन और।
सुख कारन सङ्कट हरन, नमो युगल कर जोर॥

इति विसर्जनम्॥

दीपमालिका विधान।

निर्वाणोत्सव

श्री शुभ मिती कार्तिक कृष्णा अमावस्या के प्रातःकाल करीब ४ बजे शौचादि से निवृत्त होकर स्नानादि प्रातःकालीन क्रियायें करके श्री महावीर स्वामी का निर्वाण कल्याणक उत्सव मनाने के लिए श्री मन्दिरजी मे जाना चाहिए। वहां पर खूब ठाठ बाट से नृत्य महोत्सव, गायनवादित्रादि के साथ नित्य नियम पूजा करके श्री महावीर स्वामी की पूजा करनी चाहिए। महावीर स्वामी की पूजा में गर्भ, जन्म, तप और ज्ञान कल्याणक का अर्घ चढाने के बाद मिष्ट मधुर ध्वनि से निर्वाणकाण्ड बोले, फिर मोक्ष कल्याणक का पद्य बोलकर उपस्थित सभी स्त्री-पुरुषों को अर्घ सहित निर्वाण का लाडू चढाना चाहिए। उस वक्त वादित्रादि की ध्वनि से मन्दिर को गुञ्जायमान कर देना चाहिए।

दीपावली-पूजा

जिस दिन दिवाली हो उस दिन सायङ्काल मे शुभ वेला नक्षत्र मे निम्न प्रकार पूजा करके नई बहीका मुहूर्त करे तथा दीपमालिका की रोशनी करे।

एक ऊंची चौकी पर थाल या रकेबी रखकर उसमे केशर से ॐ लिखना चाहिए। उसी चौकी के आगे दूसरी चौकी पर शास्त्रजी या जिनवाणी की पुस्तक विराजमान करना चाहिए। इन दोनो चौकियों के आगें एक छोटी चौकी पर पूजा की सामग्री तैयार रखना चाहिए और इसी के पास एक दूसरी छोटी चौकी पर थाल रखकर उसमे पूजा की सामग्री चढाना चाहिए। पूजा करने वाले को पूर्व या उत्तर मुख करके पूजा करनी चाहिए। पूजा करने वाले बडा हो या दूकान का मालिक हो वह चित्त में एकाग्रता करके पूजा करे और उपस्थित सब लोग पूजा बोले तथा शान्ति से सुनें। इसके बाद व्यापारी की बही मे केशर से स्वस्तिक लिखकर तथा दवात कलम के मौली बांधकर सामने रख लेना चाहिए। पूजा प्रारम्भ करने के पहले उपस्थित सब सज्जनों को नीचे लिखा श्लोक बोलकर केशर का तिलक कर लेना चाहिए।

तिलक मन्त्र

मंगल भगवान् वीरो, मंगलं गौतमो गणी।
मंगलं कुन्दकुन्दाद्यो, जैनधर्मोऽस्तु मंगलं ॥१॥

तिलक करने के बाद साधारण नित्य नियम पूजा करके महावीर स्वामी की और सरस्वती की पूजा करना चाहिए। सरस्वती पूजा में फल चढाने के बाद वस्त्र का पद्य बोलकर शास्त्रजी के लिए एक शुद्ध वस्त्र या वेष्टन चढाना चाहिए। पूजा कर चुकने के पश्चात् रकेबी मे कपूर प्रज्ज्वलित करके सबको खड़े होकर खूब ललित ध्वनि से नीचे लिखी आरती बोलनी चाहिए।

❋ जिनवाणी माता आरती ❋

जय अम्बे वाणी, माता जय अम्बे वाणी ।

तुमको निश दिन ध्यावत सुरनर मुनि ज्ञानी ।। टेर ।। श्रीजिन गिरते निकसी, गुरु गौतम वाणी । जीवन भ्रम तम नाशन दीपक दरशाणी ।। जय०।।१।। कुमति कुलाचल चरण, वज्र सु सरधानो । नव नियोग निक्षेपण, दरपाणी ।।जय० ।। २ ।। पातक पङ्क पखा-लन, पुण्य पाणी । मोहमहार्णव डूबत, तारण नौकाणी ।।जय०।। ।। ३ ।। लोकालोक निहारण, दिव्य नेत्र स्थानी । निज पर भेद दिखावन, सूरज किरणानी ।। जय० ।।४।। श्रावक मुनिगण जननी तुमही गुणखानी । सेवक लख शुभदायक, पावन परमाणी ।।जय०।।

पश्चात् नीचे लिखे अनुसार बहियों मे स्वस्तिकादि लिखकर वीर सम्बत्, विक्रम सम्बत्, ईस्वी सन्, मिती, वार, तारीख आदि लिखना चाहिए !

श्री महावीरस्वामिने नमः ।

श्री

श्री श्री

श्री लाभ श्री श्री श्री श्री शुभ

श्री श्री श्री श्री

श्री श्री श्री श्री श्री श्री

श्रीऋषभाय नमः श्रीमहावीरस्वामिने नमः

श्रीगौतमगणधराय नमः श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै नमः

श्री केवलज्ञानलक्ष्मीदेव्यै नमः

संक्षिप्त सूतकविधि

सूतक मे देवशास्त्र गुरु की प्रक्षालादिक करना तथा मन्दिरजी की जाजम वस्त्रादिको स्पर्श नही करना चाहिए। सूतक का समय पूर्ण हुये बाद पूजनादि करके पात्रदानादि करना चाहिए।

१. जन्म का सूतक दश दिन तक माना जाता है।

२. यदि स्त्री का गर्भपात (पांचवें छठे महिने मे) हो तो जितने महिने का गर्भपात हो उतने दिन का सूतक माना जाता है।

३. प्रसूता स्त्री को ४५ दिनका सूतक होता है, कही कही चालीस दिन का भी माना जाता है। प्रसूतिस्थान एक मास तक अशुद्ध है।

४. रजस्वला स्त्री चौथे दिन पति के भोजनादिक के लिए शुद्ध होती है परन्तु देव पूजन, पात्रदान के लिए पाचवें दिन शुद्ध होती है। व्यभिचारिणी स्त्री के सदा ही सूतक रहता है।

५. मृत्यु का सूतक तीन पीढी तक १२ दिनका माना जाता है। चौथी पीढी मे छह दिनका, पांचवी छठी पीढी तक चार दिन का, सातवी पीढी मे तीन, आठवी पीढी मे एक दिन रात, नवमी पीढी मे स्नानमात्र मे शुद्धता होती है।

६. जन्म तथा मृत्यु का सूतक गोत्र के मनुष्य को पांच दिन का होता है। तीन दिनके बालक की मृत्यु का एक दिन का, आठ वर्ष के बालक की मृत्यु का तीन दिन तक का माना जाता है। इसके आगे बारह दिन का।

७. अपने कुल के किसी गृहत्यागी का सन्यास-मरण, वा किसी कुटुम्बी का संग्राम मे मरण होजाय तो एक दिनका सूतक माना जाता है।

८. यदि अपने कुल का कोई देशांतर मे मरण करे और १२

दिन से पहले खबर सुने तो शेष-दिनों का ही सूतक मानना चाहिये ! यदि १२ दिन पूर्ण होगये हों तो स्नान मात्र सूतक जानो।

९. गौ, भैस, घोड़ी आदि पशु अपने घर मे जने तो एक दिन का सूतक और घरके बाहर जने तो सूतक नहीं होता। दासी, दास तथा पुत्री के घर में प्रसूति होय तो एक दिन, मरण होय तो तीन दिनका सूतक होता है। यदि घर से बाहर हो तो सूतक नही। जो कोई अपने को अग्नि आदिक मे जलाकर वा विष, शस्त्रादि से आत्महत्या करे तो छह महीने तक सूतक होता है। इसी प्रकार और भी विचार है सो आदिपुराण से जानना।

१०. बच्चा हुये बाद भैस का दूध १५ दिन तक, गाय का दूध १० दिन तक, बकरी का ८ दिन तक अभक्ष्य (अशुद्ध) होता है। देश भेद से सूतक विधान मे कुछ न्यूनाधिक भी होता है परंतु शास्त्र की पद्धति मिलाकर ही सूतक मानना चाहिए।

शांतिधारा पाठ।

ॐ ह्रीं श्री क्लीं ऐं अर्हं वं मं हं सं तं पं वं वं मं मं हं हं सं सं तं तं पं पं भं भं भवी भवीं क्ष्वी क्ष्वी द्रां द्रां द्रीं द्रीं द्रावय २ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते। ॐ ह्रीं क्रों मम पापं खंड २ हन २ दह दह पच पच पाचय २ अर्हन् भं भवी क्ष्वी हं सः भं वं ह्वः पः हः क्षां क्षीं क्षूं क्षे क्षै क्षो क्षौ क्षं क्षः क्ष्वी ह्रां ह्रीं ह्रुं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रों ह्रौ ह्रं ह्रः द्रां द्रीं द्रावय २ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते ठः ठः अस्माकं श्रीरस्तु वृद्धिरस्तु तुष्टिरस्तु पुष्टिरस्तु शांतिरस्तु कांतिरस्तु कल्याणमस्तु स्वाहा। एवं अस्माकं कार्यसिद्धयर्थं सर्वविघ्ननिवारणार्थं श्रीमद्भगवदर्हत्सर्वज्ञपरमेष्ठिपरमपवित्राय नमोनमः। अस्माकं

श्री शांतिभट्टारकपादपद्मप्रसादात् सद्धर्म-श्रीबलायुरारोग्यैश्वर्याभि-वृद्धिरस्तु स्वशिष्यपरशिष्यवर्गं प्रसीदंतु नः।

ॐवृषभादयाः श्रीवर्द्धमानपर्यंताश्चतुर्विंशत्यर्हंतो भगवंतः सर्वज्ञाः परममंगलनामधेयाः मे इहामुत्र च सिद्धिं तनोतु च सद्धर्मकार्येषु इहामुत्र च सिद्धिं प्रयच्छतु नः।

ॐ नमोऽर्हते भगवते श्रीमते श्रीमत्पार्श्वतीर्थङ्कराय श्रीमद्रत्नत्रयरूपाय दिव्यतेजोमूर्तये प्रभामंडलमंडिताय द्वादशगणसहिताय अनन्तचतुष्टयसहिताय समवसरणकेवलज्ञानलक्ष्मीशोभिताय अष्टादशदोषरहिताय षट्चत्वारिंशद्गुणसंयुक्ताय परमेष्ठीपवित्राय सम्यग्ज्ञानाय स्वयंभुवे सिद्धाय बुद्धाय परमात्मने परमसुखाय त्रैलोक्यमहिताय अनन्तसंसारचक्रप्रमर्दनाय अनन्तज्ञानदर्शनवीर्य सुखास्पदाय त्रैलोक्यवशङ्कराय सत्यज्ञानाय सत्यब्रह्मणे उपसर्ग-विनाशनाय घातिकर्मक्षयंकराय अजराय अभवाय अस्माकं ※ "अमुकराशिनामधेयाना" व्याधिं हन्तु। श्रीजिनपूजनप्रसादात् मम सेवकस्य सर्वदोषरोगशोकभयपीडाविनाशनं भवतु।

ॐ नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणाशेषदोषकल्मषाय दिव्यतेजोमूर्तये श्री शांतिनाथाय शांतिकराय सर्वविघ्नप्रणाशनाय सर्वरोगापमृत्यु-विनाशनाय सर्वपरकृतक्षुद्रोपद्रवविनाशनाय सर्वश्यामडामरविनाश-नाय सर्वारिष्टशान्तिकराय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा-नमः मम सर्वविघ्नशांतिं कुरु कुरु तुष्टिं पुष्टिं कुरु कुरु स्वाहा। मम कामं छिंद छिंद भिंद भिंद। रतिकामं छिंद छिंद भिंद भिंद बलिकामं छिंद छिंद भिंद भिंद। क्रोधं पापं वैरं च छिंद छिंद भिंद भिंद। अग्निवायुभयं छिंद२ भिंद२। सर्वशत्रुविघ्नं छिंद२ भिंद २। सर्वोपसर्गं छिंद २ भिंद २। सर्वविघ्नं छिंद२ भिंद२। सर्वराज्यभयं छिंद २ भिंद २। सर्वचौरदुष्टभयं छिंद २ भिंद २। सर्वसर्पवृश्चिक-सिंहादिभयं छिंद २ भिंद २। सर्व ग्रहभयं छिंद २ भिंद २।

※ अपनी राशि तथा नाम बोलना चाहिये।

सर्वदोषं व्याधि डामरं च छिद २ भिद । सर्व परमंत्रं छिद२ भिद २ सर्वात्मघातं पराघातं च छिद २ भिद २। सर्व शूलरोगं कुक्षि-रोगं अक्षि-रोगं शिरो-रोगं ज्वर-रोगं च छिद २ भिद २। सर्व नर-मारि छिद २ भिद २। सर्व गजाश्वगोमहिषअजमारि छिद २ भिद भिद। सर्वशस्यधान्यवृक्षलतागुल्मपत्र-पुष्पफलमारिं छिद २ भिद भिद। सर्वराष्ट्रमारिं छिद २ भिद २। सर्व विषयं छिद २ भिद। सर्वक्रूरवेतालशाकिनीडाकिनी-भयं छिद २ भिद २। सर्ववेदनीयं छिद २ भिद २। सर्वमोहनीयं छिद २ भिद २। सर्वापस्मारिं छिद छिद भिद २। सर्वभगवती दुर्भगवतीभयं छिद २ भिद २। ममा-शुभकर्मजनितदुःखान् छिद २ भिद २। दुष्टजनकृतान् मंत्रतंत्र-दृष्टि-मुष्टिछलछिद्रदोषान् छिद २ भिद २। सर्वदुष्टदेवदानववीरनरनाहर-सिंह योगनीकृतदोषान् छिद २ भिद २। सर्वअष्टकुलीनागजनित-विषयान् सर्व थावरजंगमवृश्चिक सर्पादिकृतदोषान् छिद २ भिद २। सर्वसिंहाष्टपदादिकृतदोषान् छिद २ भिद २। परशत्रुकृतमारणोच्चा-टनविद्वेषनमोहनवशीकरणादिदोषान् छिद २ भिद २ ॐ ह्रीं × अमुकाय चक्रविक्रमसत्वतेजोबलशौर्यशांतिं पूरय २ सर्व जीवानन्दनं जनानन्दनं भव्यानंदनं गोकुलानंदनं च कुरु २। सर्व राजानंदनं कुरु २। सर्वग्रामनगरखेड़ा कर्वहमंडवं द्रोणमुख संवाहनानंदनं कुरु २। सर्वानंदनं कुरु २ स्वाहा।

यत्सुखं त्रिषु लोकेषु व्याधिव्यसनविवर्जितम्।
अभयक्षेममारोग्यं स्वस्तिरस्तु विधीयते॥

श्रीशान्तिरस्तु ! शिवमस्तु ! जयोऽस्तु ! नित्यमारोग्यमस्तु ! सर्वपुष्टिसमृद्धिरस्तु ! कल्याणमस्तु ! सुखमस्तु ! अभिवृद्धिरस्तु ! दीर्घायुरस्तु ! कुलगोत्रधनं सदास्तु ! सद्धर्मश्रीबलायुरारोग्यैश्वर्या-भिवृद्धिरस्तु।

× अपना नाम बोलना चाहिए।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं असिआउसा अनाहतविद्यायै णमो अरिहंताणं ह्रौं सर्वशांतिं कुरु स्वाहा।

आयुर्वल्ली विलासं सकलसुखफलैर्द्राघयित्वाश्वनल्पं ।
धीरं वीरं शरीरं निरममुपनयत्त्वा तनोत्त्वच्छकीर्तिं ॥
सिद्धिं वृद्धिं समृद्धिं प्रथयतु तरणि स्फूर्यद्रुच्चै. प्रतापं ।
कीर्तिं शांतिं समाधिं वितरतु भवतानुत्तमा शांतिधारा ॥

इति शांतिधारा।

तीसरा अध्याय

वृहद् महावीर स्तवन

(श्री विद्यावती रचित)

सकल जगत की वस्तु छोड़कर, जो है निज आतम में लीन।
क्रोध मान मद मोह त्यागकर, हुये सर्वथा जो स्वाधीन ॥
इन्द्र नरेन्द्र महेन्द्र सभी मिल, करते निश दिन जिनका ध्यान।
उसी श्रेष्ठ महावीर प्रभु की, स्वर्ण छवि का करती ध्यान ॥
जिनके दर्शन से कटते है, जीवों के भव भव के पाप।
जिनके सुमिरण से मिटते है, दुख दरिद्रता के सन्ताप ॥
जो है उच्च उदार दयानिधि, जग नायक सुख के दातार।
उसी वीर महावीर प्रभु का, मैं सविनय करती सत्कार ॥
जो है निर्विकार अति सुन्दर, महा मनोहर उज्ज्वल कान्त।
जो है अविचल अटल तपस्वी, आत्मलीन हर्षित अति शान्त ॥
जिनकी अपरम्पार शक्ति की, कर न सके पण्डित अनुमान।
उस ही महा-प्रभु का हरदम, मन वच तन से धरती ध्यान ॥
जो है परम ज्योति परमातम, परम ईश सुख के दातार।
जो है दीन दयाल हितंकर, निराकार होकर साकार ॥

जिनकी महिमा फैल रही है, त्रिभुवन मे गुण है विख्यात ।
उस ही धर्म धुरंधर का मै, दर्श करू मनमे साक्षात ।।
जिसने लाखों पतित जनो का, किया एक क्षण मे उत्थान ।
सदा सर्वथा जो करते है, जिन भक्तो का पूर्ण कल्याण ।।
वही वीर उद्धार करेगे, मेरा है मुझको विश्वास ।
जिस प्रकार रवि-ज्योति मात्र से, कमल-पुष्प का होत विकास ।।
हे करुणानिधि ! इस जीवन मे, जन्म सफल हो पाया आज ।
धन्य धन्य यह घड़ी आज की, तुम दर्शन पाये जिनराज ।।
दीनानाथ पधारो मेरे, हृदय-कुञ्ज मे करो निवास ।
जबलों इस अशांत जीवन की, बाकी है इस तन मे श्वास ।।
बहती रहे निरंतर मन मे, मेरे प्रभु की भक्ति समीर ।
करता रहे चरण प्रक्षालन, प्रेम युक्त आंखों का नीर ।।
मस्तक मे प्रतिबिम्ब विराजे, जिह्वा पर प्रभु का शुभ नाम ।
उसी भांति हो जाये पूरा, मेरे जीवन का संग्राम ।।
जिसने कभी भक्ति श्रद्धा से, किये तुम्हारे चरण स्पर्श ।
संकट के अवसर मे प्रभु का, ध्यान किया जिसने उत्कर्ष ।।
भीर समय पर ढील न कीनी, किया तत्क्षण है कल्याण ।
जिस प्रकार कंचन कर देता, लोह-टूक पारस पाषाण ।।
रक्त-पात से पृथ्वी तल पर, जीवो पर छाया आतंक ।
धर्म-नाम पर बलि देते थे, पशुओं का राजा औ रंक ।।
ऐसे कठिन समय पर तुमने, दिया अहिंसा का सद् ज्ञान ।
प्रेम सिखाया किया आपने, दुखित जनो का सुना रूलान ।।
क्रोध मान मद लोभ मोह वश, होते यहां निरन्तर पाप ।
एक दूसरे का घातक बन, भोग रहे सब ही सन्ताप ।।
तुमने उत्तम क्षमा भाव का, फैलाया सिखलाया ज्ञान ।
जग को प्रेम पन्थ दिखलाया, किया आपने कार्य महान ।।

भू का भार हटाने हित, तुमने था अवतार लिया।
पाप तिमिर का नाश किया, सब जीवो का उद्धार किया॥
सत्य धर्म संचालक होकर, तुम थे भूतल पर आये।
त्याग अहिसा संयम के गुण, तुमने सबको सिखलाये॥
आज तुम्हारी अनुपस्थिति मे, हास्य पात्र है लोगों के।
हीन-क्षीण सब बातो मे है, बने हुये घर रोगों के॥
धर्म-कर्म-मर्यादा छूटी, जीवन का आधार गया।
द्रव्य-हीन निर्बुद्धि पाकर, नाम करण यह भया नया॥
तेरी उत्तम सन्तति का सब, करे निरादर चारो ओर।
कोई कहे लावारिस है ये, कोई हमे बताते चोर॥
आओ हे करुनानिधि आओ, क्षण भर करो विराम नहीं।
भक्तो का उत्साह बढाओ, रहेगा वरना नाम नही॥
हे तेजोमय! पतित-उधारक, चमत्कार दिखलाओ आज।
जिस प्रकार रखली सीता की, अग्नि-कुण्ड मे भगवन लाज॥
अब तक निज भक्तो की तुमने, रखो सर्वदा से है टेक।
समय पड़े पर रक्षा करके, नाथ बचाये दास अनेक॥
अब भी हे करुणानिधि रखिये, जारी वही पुरानी नीति।
भक्त और भगवान बीच है, जो अनादि से कायम रीति॥
धर्म-कर्म-कर्तव्य हीन है, और अवगुणो की है खान।
तो भी हे प्रभु! लक्ष्य कीजिये, कहलाते तेरी सन्तान॥
मेरे पाप रहेगे कैसे, आकर तुम चरणो के पास।
मुझे विश्व के संकट कैसे, बना सकेंगे अपना दास॥
काटोगे तुम ही तेजोमय, मेरे इस जीवन की पास।
जिस प्रकार रवि कर देता है, जग के अन्धकार का नाश॥
राज रोग से महा भयकर, भरे देह मे रोग अनेक।
करे चिकित्सा वैद्य निरंतर, पार तनिक नहि पाते एक॥
तेरे नाम मई अमृत का, किया भक्ति से जिसने पान।

कौन अभागा है नर जिसको, मिला नही हो जीवन दान ॥
निर्धनता के महा रोग से, व्याकुल हो सहकर अपमान ।
जो नर तेरा भक्ति-भाव से, करते है निश-दिन गुण गान ॥
पाते है धन-मान जगत मे, मिलती है सम्पत्ति तुरन्त ।
जैसे रवि के उदय होत ही, अन्धकार का होता अन्त ॥
तुम हो परम ज्योति परमातम, परम-ज्ञान के हो भण्डार ।
तुम ही सकल-ज्ञेय-ज्ञायक हो, निजानन्द में लीन अपार ॥
तेरी भक्ति मई गंगा हो, मेटेगी यह भव आताप ।
जैसे चन्द्र-उदय हरता है, ग्रीषम ऋतु का सब सन्ताप ॥
त्रिभुवन के दुख हरने वाले, तुमको बारम्बार प्रणाम ।
मन से और वचन काया से, शुद्ध-बुद्ध दातार प्रणाम ॥
जग भूषण सुख करने वाले, तीन जगत के ईश प्रणाम ।
जीवन-बाधा हरने वाले, तुमको है जगदीश प्रणाम ॥
जीवन के सर्वस्व नमस्ते, प्राणों के आधार प्रणाम ।
विद्या के प्रतिपाल नमस्ते, तुमको बारम्बार प्रणाम ॥

दासी को प्रभु जगत मे, तुम चरणों की आस ।
दासी अपनी जानकर, रखिये अपने पास ॥

इति ।

नमस्कार

जिनके दर्शन से कटे, जन्म जन्म के पाप ।
जिनके सुमिरण से मिटे, भव भव के सन्ताप ॥
जिनका उज्ज्वल ध्यान है, तीन भुवन मे सार ।
ऐसे वीर जिनेश पद, बन्दों बारम्बार ॥१॥

जय जय जय महावीर नमस्ते, जय जय जय गुण धीर नमस्ते ।
जय जय जगदाधार नमस्ते, जय जय सुख दातार नमस्ते ॥

जय जय दीन दयाल नमस्ते, जय जय जग प्रतिपाल नमस्ते।
जय जय करुणाधाम नमस्ते, महावीर शुभ नाम नमस्ते॥
जय जय जय अरिहन्त नमस्ते, जय जय जय सत सन्त नमस्ते।
पतितों के पतवार नमस्ते, जीवन के आधार नमस्ते॥
जय जय जय योगीश नमस्ते, जय जय जय जगदीश नमस्ते।
कुण्डलपुर मे जन्म नमस्ते, इन्द्र महोत्सव कीन नमस्ते॥
जय जय जय शृंगार नमस्ते, शिव-पथ के करतार नमस्ते।
जय जय जय जग भानु नमस्ते, जय जय जग के मान नमस्ते॥
प्राणों के सन्तोष नमस्ते, विद्या जीवन ज्योति नमस्ते।
पावापुर से मुक्त नमस्ते, अधम अनेकन तार नमस्ते॥
हृदय-कंज मे आन विराजो, नयनन मे भगवान विराजो॥
जिह्वा मे हो सुमिरण तेरा, कान सुने शुभ वर्णन तेरा।
रोम-रोम मे अर्हत्‌ध्वनित हो, आशा तेरी सहचरनी हो॥
धाम नमस्ते ग्राम नमस्ते, चरणाम्बुज धर माथ नमस्ते।

दोहा—वीर प्रभु तुम चरण मे, आश यही दिन रात।
भक्ति सदा दिल मे रहे, भ्रमत जगत मे नाथ॥

श्री पार्श्वनाथ स्तोत्र

नरेंद्रं फणीन्द्रं सुरेन्द्रं अधीशं, शतेन्द्रं सु पूजैं भजैं नाथ शीशं।
मुनीन्द्रं गणेन्द्रं नमो जोड़ि हाथं, नमो देवदेवं सदा पार्श्वनाथं॥१॥
गजेन्द्रं मृगेन्द्रं गह्यो तू छुडावे, महाआगतें नागतें तू बचावे।
महावीरतें युद्ध में तू जितावें, महा रोगतें बंधतें तू छुडावे॥२॥
दुखी दुःख हर्ता सुखी सुक्खकर्त्ता, सदा सेवकों को महानंद भर्त्ता।
हरे यक्ष राक्षस भूतं पिशाचं, विषं डाकिनी विघ्न के भय अवाचं॥
दरिद्रीनको द्रव्य के दान दीने, अपुत्रीनको तैं भले पुत्र कीने।
महासङ्कटों से निकारें विधाता, सबै संपदा सर्वको देहि दाता॥४॥

महाचोर को वज्रको भय निवारै, महापौन के पुञ्जतैं तू उबारै।
महाक्रोध की अग्नि को मेघ-धारा, महालोभ-शैलेश को वज्रधारा ॥५
महामोह अंधेर को ज्ञान भानुं, महाकर्मकातारको दौ प्रधानुं।
किये नागनागिनअधोलोकस्वामी, हरयो मान तू दैत्यको हो अकामी
तुही कल्पवृक्ष तुही कामधेनुं, तुही दिव्य चिंतामणी काम एन।
पशू नर्क के दुःखतै तू छुडावै, महास्वर्ग मे मुक्ति मे तू बसावै ॥७॥
कर लोह को हेमपाषाण नामो, रटै नाम सो क्यो न हो मोक्षगामी
करै सेव ताकी करे देव सेवा, सुनै वैन सोही लहै ज्ञान मेवा ॥८॥
जपै जाप ताको नही पाप लागै, धरै ध्यान ताके सबै दोष भागै।
विना तोहि जाने धरे भव घनेरे, तुम्हारी कृपातैं सरे काज मेरे ॥९॥
दोहा—गणधर इन्द्र न कर सकैं, तुम बिनती भगवान।
'द्यानत' प्रीति निहारकै, कीजे आप समान ॥१०॥

आलोचना पाठ

दोहा—बंदौं पांचों परमगुरु, चौबीसो जिनराज।
करूं शुद्ध आलोचना, शुद्धिकरण के काज ॥१॥

सखी छन्द चौदह मात्रा।

सुनिये जिन अरज हमारी, हम दोष किये अति भारी।
तिनकी अब निर्वृत्ति काजा, तुम शरण लही जिनराजा ॥२॥
इक वे ते चउ इन्द्री वा, मनरहित सहित जे जीवा।
तिनकी नहि करुणा धारी, निरदई ह्वै घात विचारी ॥३॥
समरंभ समारंभ आरंभ, मनवचतन कीने प्रारंभ।
कृत कारित मोदन करिके, क्रोधादि चतुष्टय धरिकै ॥४॥
शत आठ जु इमि भेदनते, अघ कीने पर छेदनते।
तिनकी कहुँ कोलौं कहानी, तुम जानत केवलज्ञानी ॥५॥
विपरीत एकांत विनयके, संशय अज्ञान कुनय के।

वश होय घोर अघ कीने, वचतैं नहिं जात कहीने ॥६॥
कुगुरुनकी सेवा कीनी, केवल अदयाकरि भीनी।
याविधि मिथ्यात भ्रमायो, चहुंगति मधि दोष उपायो ॥७॥
हिंसा पुनि झूठ जु चोरी, परवनितासौं दृग जोरी।
आरम्भपरिग्रह भीनो, पनपाप जु या विधि कीनो ॥८॥
सरपस रसना घ्राननको, दृग कान विषय सेवनको।
वसु कर्म किये मनमानी, कछु न्याय अन्याय न जानी ॥९॥
फल पञ्च उदंबर खाये, मधु मांस मद्य चितचाहे।
नहिं अष्टमूलगुणधारी, विषयन सेये दुखकारी ॥१०॥
दुइबीस अभख जिनगाये, सो भी निशदिन भुञ्जाये।
कछु भेदाभेद न पायो, ज्यौं त्यौं करि उदर भरायो ॥११॥
अनन्तानुजुबंधी जानो, प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानो।
संज्वलन चौकरी गुनिये, सब भेद जु षोडश मुनिये ॥१२॥
परिहास अरित रति शोग, भय ग्लानि तिवेद संजोग।
पन-वीस जु भेद भये इम, इनके वश पाप किये हम ॥१३॥
निद्रावश शयन कराई, सुपने मधि दोष लगाई।
फिर जाग विषयवन धायो, नानाविधि विषफल खायो ॥१४॥
आहार निहार विहारा, इनमे नहिं जतन विचारा।
विन देखी धरी उठाई, बिन शोधी वस्तु जु खाई ॥१५॥
तब ही परमाद सतायो, बहुविधि विकलप उपजायो।
कुछ सुधिबुधि नाहिं रही है, मिथ्यामति छाय गयी है ॥१६॥
मरयादा तुमढिग लोनी, ताहू मे दोष जु कीनी।
भिन भिन अब कैसे कहिये, तुम ज्ञानविषैं सब पइये ॥१७॥
हा हा! मै दुठ अपराधी, त्रसजीवनराशि विराधी।
थावरकी जतन न कीनो, उर मे करुना नहिं लीनी ॥१८॥
पृथिवी बहु खोद कराई, महलादिक जागा चिनाई!
पुनि विन गाल्यो जल ढोल्यो, पंखातैं पवन बिलोल्यो ॥१९॥

हा हा मैं अदयाचारी, बहु हरितकाय जु विदारी।
तामधि जीवन के खंदा, हम खाये धरि आनन्दा ॥२०॥
हा हा ! परमाद बसाई, बिन देखे अगनि जलाई।
तामधि जे जीव जु आये, ते हू परलोक सिधाये ॥२१॥
बीध्यो अन राति पिसायो, ईंधन बिन सोधि जलायो।
झाडू ले जागां बुहारी, चिउटी आदिक जीव विदारी ॥२२॥
जल छानि जिवानी कीनी, सो हू पुनि डारि जु दीनी।
नहिं जलथानक पहुंचाई, किरिया बिन पाप उपाई ॥२३॥
जल मल मोरिन गिरवायो, कृमिकुल बहु घात करायो।
नदियन बिच चीर धुवाये, कोसन के जीव मराये ॥२४॥
अन्नादिक शोध कराई, ता मे जु जीव निसराई।
तिनका नहिं जतन कराया, गलियारे धूप डराया ॥२५॥
पुनि द्रव्य कमावन काजे, बहु आरम्भ हिंसा साजे।
किये तिसनावश अघ भारी, करुना नहिं रञ्च विचारी ॥२६॥
इत्यादिक पाप अनन्ता, हम कीने श्री भगवन्ता।
संतति चिरकाल उपाई, वानी ते कहिय न जाई ॥२७॥
ताको जु उदय अब आयो, नानाविधि मोहि सतायो।
फल भुञ्जत जिय दुख पावैं, वचतै कैसे करि गावैं ॥२८॥
तुम जानत केवलज्ञानी, दुख दूर करो शिवथानी।
हम तो तुम शरण लही है, जिन तारन विरद सही है ॥२९॥
जो गांवपति इक होवे, सो भी दुखिया दुख खोवे।
तुम तीन भवन के स्वामी, दुख मेटहु अन्तरजामी ॥३०॥
मेरे अवगुण न चितारो, प्रभु अपनो विरद निहारो।
सब दोषरहित कर स्वामी, दुख मेटहु अन्तरजामी ॥३१॥
इन्द्रादिक पदवी न चाहूँ, विषयनि मे नाहिं लुभाऊं।
रागादिक दोष हरीजे, परमातम निजपद दीजे ॥ ३२॥

दोहा—दोषरहित जिनदेवजी, निजपद दोज्यो मोय।
सब जीवन के सुख बढे, आनन्द मङ्गल होय ॥
अनुभव माणिक पारखी, जौहरी आप जिनंद।
ये हो वर मोहि दीजिये, चरण शरण आनंद ॥ इति ॥

भाषा सामायिक पाठ

अथ प्रथम प्रतिक्रमण कर्म

काल अनंत भ्रम्यों जगमे सहिया दुख भारी। जन्ममरण नित किये पाप को ह्वै अधिकारी ॥ कोटि भवातरमाहि मिलन दुर्लभ सामायिक। धन्य आज मै भयो योग मिलियो सुखदायक ॥ १ ॥ हे सर्वज्ञ जिनेश किये जे पाप जु मै अब। ते सब मनवच-काय योग की गुप्ति बिना लभ ॥ आप समीप हजूरमाहि मै खड़ो २ सब। दोष कहूँ सो सुनो करो नठ दु:ख देंहि जब ॥ २ ॥ क्रोध मान मद लोभ मोह मायावशि प्रानो। दु ख सहित जे किये दया तिनको नहि आनो ॥ बिना प्रयोजन एकेंद्रिय बि ति चउ पचेंद्रिय। आप प्रसादहि मिटै दोष जो लाग्यो मोहि जिय ॥ ३ ॥ आपस मे इक ठोर थापि करि जे दुख दोने। पेलि दिये पगतले दाबकरि प्राण हरोने ॥ आप जगत के जोव जिते तिन सबके नायक। अरज करौ मै सुनो दोष मेटो सुखदायक ॥ ४ ॥ अंजन आदिक चोर महा घनघोर पापमय। तिनके जे अपराध भये ते क्षमा क्षमा किय ॥ मेरे जे अब दोष भये ते क्षमों दयानिधि। यह पडिकोणो कियो आदि षटकर्म माहि विधि ॥ ५ ॥

अथ द्वितीय प्रत्याख्यान कर्म

जो प्रमादवशि होय विराधे जोव घनेरे। तिनको जो अपराध भयो मेरे अघढेरे ॥ सो सब झूठो होउ जगतपति के परसादे। जा प्रसादतैं मिले सर्व सुख दु:ख न लाधै ॥ ६ ॥ मै पापी निर्लज्ज

दयाकरि हीन महाशठ। किये पाप अति घोर पापमति होय चित्त दुठ॥ निंदूं हूँ मैं बारबार निज जियको गरहूँ। सब विध धर्म उपाय पाय फिर पापहि करहूँ॥७॥ दुर्लभ है नरजन्म तथा श्रावककुल भारी। सतसंगति संयोग धर्म जिन श्रद्धाधारी॥ जिनवचनामृतधार समावर्ते जिनवानी। तौहू जीव संहारे धिक धिक हम जानी॥८॥ इन्द्रियलम्पट होय खोय जिन ज्ञानजमा सब। अज्ञानी जिम करै तिस विधि हिंसक ह्वै अब॥ गमनागमन करंतो जीव विराधे भोले। ते सब दोष किये निंदूं मन वच तन तोले॥९॥ आलोचनविधि थकी दोष लागे जु घनेरे। ते सब दोष विनाश होउ तुमतैं जिन मेरे॥ बार बार इस भांति मोह मद दोष कुटिलता। ईर्षादिकतैं भये निंदिये जे भयभीता॥१०॥

अथ तृतीय सामायिक कर्म

सब जीवनमे मेरे समता भाव जग्यो है। सव जिय मो सम समता राखो भाव लग्यो है॥ आर्त्त रौद्र द्वय ध्यान छाडि करिहूँ सामायिक। संयम मो कब शुद्ध होय यह भाव बधायक॥ ११॥ पृथवी जल अरु अग्नि वायु चउ काय वनस्पति। पञ्चहि थावर-माहि तथा त्रस जीव बसैं जित॥ वे इन्द्रिय तिय चउ पंचेन्द्रियमांहि जीव सब। तिनतैं क्षमा कराऊं मुझ पर क्षमा करो अब॥ १२॥ इस अवसर मे मेरे सब सम कञ्चन अरु तृण। महल मशान समान शत्रु अरु मित्र ही सम गण॥ जामन मरन समान जानि हम समता कीनी। सामायिकका काल जितैं यह भाव नवीनी॥ १३॥ मेरो है इक आतम तामैं ममत जु कीनो। और सबै मम भिन्न जानि समता रस भीनौं॥ मात पिता सुत बंधु मित्र तिय आदि सबै यह। मोतैं न्यारे जानि जथारथरूप करचो गह॥ १४॥ मै अनादि जगजाल-मांहि फंसि रूप न जाण्यो। एकेन्द्रिय दे आदि जंतुको प्राण हराण्यो।

ते अब जीवसमूह सुनो मेरी यह अरजी। भवभव को अपराध क्षमा कीज्यो करि मरजी ॥ १५ ॥

अथ चतुर्थ स्तवन कर्म ।

नमूं ऋषभ जिनदेव अजित जिन जीत कर्मको। संभव भव-दुखहरण करण अभिनंद शर्मको ॥ सुमति सुमतिदातार तार भव-सिन्धु पारकर। पद्मप्रभ पद्माभ भानि भवभीति प्रीतिधर ॥ १६ ॥ श्रीसुपार्श्वकृत पास नाश भव जास शुद्ध कर। श्रीचंद्रप्रभ चंद्रकांति सम देहकांति घर ॥ पुष्पदंत दमि दोषकोष भवि पोष रोषहर। शीतल शीतल करन हरन भवताप दोषहर ॥ १७ ॥ श्रेयरूप जिन श्रेय ध्येय नित सेय भव्यजन। वासुपूज्य शतपूज्य वासवादिक भव-भय हन। विमल विमलमतिदेन अंतगत है अनंत जिन। धर्म शर्म शिवकरन शांतिजिन शांतिविधायिन ॥१८॥ कुन्थ कुन्थ मुख-जीवपाल अरनाथ जालहर। मल्लि मल्लसम मोहमल्ल मारन प्रचार धर। मुनिसुव्रत व्रतकरण नमत सुरसंघहि नमि जिन। नेमिनाथ जिन नेमि धर्मरथ माहि ज्ञान धन ॥१९॥ पार्श्वनाथ जिन पार्श्व उपल-सम मोक्षरमापति। वर्द्धमान जिन नमूं नमूं भवदुःख कर्मकृत ॥ याविध मै जिनसङ्घरूप चउबीस संख्यधर। स्तवूं नमूं हूं बार बार वन्दौ शिवसुखकर ॥२०॥

अथ पञ्चम वंदना कर्म ।

बंदूं मैं जिनवर धीर महावीर सुसन्मति। वर्द्धमान अतिवीर बंदि हौ मनवचतनकृत ॥ त्रिशलातनुज महेश धीश विद्यापति बंदूं। बंदूं नितप्रति कनकरूपतनु पाप निकंदूं ॥२१॥ सिद्धारथ नृपनंद द्वन्द्व दुखदोष मिटावन। दुरित दवानल ज्वलित ज्वाल जगजीव उधारन ॥ कुण्डलपुर करि जन्म जगतजिय आनन्दकारन। वर्ष बहत्तरि आयु पाय सबही दुख टारन ॥ २२ ॥ सप्त हस्त तनु तुंग

भंग कृत जन्म मरण भय। बालब्रह्ममय ज्ञेय हेय आदेय ज्ञान-मय ।। दे उपदेश उधारि तारि भवसिंधु जीवघन। आप बसे शिव-माँहि ताहि बंदौ मनवचतन ।। २३ ।। जाके बंदनथकी दोष दुख दूरहि जावै। जाके बंदनथकी मुक्ति तिय सन्मुख आवै।। जाके बंदनथकी बंध होवे सुरगनके । ऐसे वीर जिनेश बन्दिहूं पदयुग तिनके ।। २४ ।। सामायिक षट्कर्ममाहि बंदन यह पञ्चम। बदे वीरजिनेन्द्र इन्द्रशतवंद्य वंद्य मम ।। जन्म मरण भय हरो करो अघ शांत शातिमय। मै अघकोश सुपोष दोषको दोष विनाशय ।।२५।।

अथ षष्ठम कायोत्सर्ग कर्म ।

कायोत्सर्ग विधान करूं अन्तिम सुखदाई। काय त्यजनमय होय काय सबका दुखदाई ।। पूरव दक्षिण नमूं दिशा पश्चिम उत्तर मे। जिनगृह बंदन करूं हरूं भव पापतिमिर मैं ।।२६।। शिरोनती मे करूं नमूं मस्तक करि धरिकै। आवर्त्तादिक क्रिया करूं मनवच-मदहरिकैं ।। तीन लोक जिनभवनमांहि जिन है जु अकृत्रिम। कृत्रिम हैं द्वयअर्द्ध द्वीपमाही बंदो जिम ।।२७।। आठकोडिपर छप्पन लाख जु सहस सत्याणूं। चारि शतकपरि असी एक जिनमंदिर जाणूं ।। व्यंतर ज्योतिषमांहि संख्य रहिते जिनमंदिर। जिनगृह बंदन करूं हरहु मम पाप सङ्घकर ।।२८।। सामायिक सम नाहि और कोउ वैर मिटायक। सामायिक सम नाहि और कोउ मैत्रीदायक ।। श्रावक अणुव्रत आदि अंत सप्तम गुणथानक। यह आवश्यक किये होय निश्चय दुखहानक ।। १९ ।। जे भवि आतम काज करण उद्यमके धारी। ते सब काज विहाय करो सामायिक सारी ।। राग दोष मद मोह क्रोध लोभादिक जे सब। बुध 'महाचन्द्र' विलाय जाय तातैं कीज्यो अब ।।

इति सामायिक भाषापाठ समाप्त।

सामायिक पाठ (भाषा)

[श्री पं० रामचन्द्र उपाध्याय कृत]

नित देव ! मेरी आत्मा धारण करे इस नेम को,
मैत्री करे सब प्राणियों से, गुणिजनो से प्रेमको !
उनपर दया करती रहे, जो दुःख-ग्राह-ग्रहीत है,
उनसे उदासीसी रहे जो धर्म के विपरीत है ।।१।।

करके कृपा कुछ शक्ति ऐसी दीजिये मुझमें प्रभो,
तलवारको ज्यों म्यान से करते विलग है हे प्रभो ।
गतदोष आत्मा शक्तिशाली है मिली मम अंगसे,
उसको विलग उस भांति करने के लिए ऋजु ढङ्गसे ।।२

हे नाथ ! मेरे चित्तमे समता सदा भरपूर हो,
सम्पूर्ण ममताकी कुमति मेरे हृदय से दूर हो ।
बनमे, भवनमे, दुःखमे सुखमे नही कुछ भेद हो,
अरि-मित्रमे, मिलने–बिछुडनेमे न हर्ष न खेद हो ।।३।।

अतिशय घनी तम-राशिको दीपक हटाते हैं यथा,
दोनो कमल-पद आपके अज्ञान-तम हरते तथा ।
प्रतिबिम्बसम स्थिररूप वे मेरे हृदय मे लीन हो,
मुनिनाथ ! कीलित तुल्य वे उर पर सदा आसीन हों ।।

यदि एक-इन्द्रिय आदि देही घूमते फिरते महो,
जिनदेव ! मेरी भूलसे पीडित हुए होवें कभी ।
टुकड़े हुए हो, मल गये हो, चोट खाये हों कभी,
तो नाथ ! वे दुष्टाचरण मेरे बनें झूठे सभी ।।५।।

सन्मुक्तिके सन्मार्गसे प्रतिकूल पथ मैने लिया,
पंचेन्द्रियो चारो कषायो मे स्वमन मैने दिया ।
इस हेतु शुद्ध चरित्रका जो लोप मुझसे होगया,
दुष्कर्म वह मिथ्यात्त्वको हो प्राप्त प्रभु ! करिये दया ।।६।।

चारो कषायोसे, वचन, मन, कायसे जो पाप है—
मुझसे हुआ हे नाथ ! वह कारण हुआ भव-ताप है।
अब मारता हूं मैं उसे आलोचना-निन्दादिसे,
ज्यों सकल विषको वैद्यवर है मारता मन्त्रादिसे ॥७॥
जिनदेव ! शुद्ध चरित्रका मुझमे अतिक्रम जो हुआ,
अज्ञान और प्रमादसे व्रतका व्यतिक्रम जो हुआ।
अतिचार और अनाचरण जो जो हुए मुझसे प्रभो,
सबको मलिनता मेटने को प्रतिक्रम करता विभो ॥८॥
मनकी विमलता नष्ट होने को, अतिक्रम है कहा,
औ शीलचर्याके विलङ्घन को व्यतिक्रम है कहा।
हे नाथ ! विषयोमे लिपटनेको कहा अतिचार है,
आसक्त अतिशय विषयमे रहना महाऽनाचार है ॥९॥
यदि अर्थ, मात्रा, वाक्यमे पदमे पड़ी त्रुटि हो कही,
तो भूलसे ही वह हुई, मैंने उसे जाना नही।
जिनदेववाणी ! तो क्षमा उसको तुरत कर दीजिये,
मेरे हृदयमे देवि ! केवलज्ञानको भर दीजिये ॥१०॥
हे देवि ! तेरी वन्दना मै कर रहा हूं इसलिए,
चिन्तामणिप्रभ है सभी वरदान देने के लिये ।
परिणाम शुद्धि, समाधि मुझमे बोधिका सञ्चार हो,
हो प्राप्ति स्वात्माकी तथा शिवसौख्यकी, भवपार हो ॥११॥
मुनिनायकोके वृन्द जिसको स्मरण करते है सदा,
जिसका सभी नर अमरपति भी स्तवन करते है सदा।
सच्छास्त्र वेद-पुराण जिसको सर्वदा है गा रहे,
वह देवका भी देव बस मेरे हृदय मे आरहे ॥१२॥
जो अन्तरहित सुबोध-दर्शन और सौख्यस्वरूप है,
जो सब विकारो से रहित, जिससे अलग भवकूप है।

मिलता बिना न समाधि जो, परमात्म जिसका नाम है,
देवेश वह उर आ बसे मेरा खुला हृद्धाम है ॥१३॥
जो काट देता है जगतके दुःखनिर्मित जालको,
जो देख लेता है जगतकी भीतरी भी चालको,
योगी जिसे है देख सकते, अन्तरात्मा जो स्वयम्,
देवेश वह मेरे हृदय-पुरका निवासी हो स्वयम् ॥१४॥
कैवल्यके सन्मार्गको दिखला रहा है जो हमे,
जो जनमके या मरणके पड़ता न दुःख-सन्दोहमे ।
अशरीर हो त्रैलोक्यदर्शी दूर है कुकलङ्क से,
देवेश वह आकर लगे मेरे हृदयके अङ्कसे ॥१५॥
अपना लिया है निखिल तनुधारी-निबहने ही जिसे,
रागादि दोष-व्यूह भी छू तक नही सकता जिसे,
जो ज्ञानमय है, नित्य है,, सर्वेन्द्रियोंसे हीन है,
जिनदेव देवेश्वर वही मेरे हृदय मे लीन है ॥१६॥
ससारकी सब वस्तुओंमे ज्ञान जिसका व्याप्त है,
जो कर्म-बन्धन-हीन, बुद्ध, विशुद्ध, सिद्धिप्राप्त है ।
जो ध्यान करनेसे मिटा देता सकल कुविकारको,
देवेश वह शोभित करे मेरे हृदय-आगार को ॥ १७॥
तम-सङ्घ जैसे सूर्य-किरणो को न छू सकता कही,
उस भाति कर्म-कलङ्क दोषाकर जिसे छूता नहीं ।
जो है निरञ्जन वस्त्वपेक्षा, नित्य भी है, एक है,
उस आप्त प्रभुकी शरणमे हूँ प्राप्त, जो कि अनेक है ॥१८॥
यह दिवसनायक लोकका जिसमे कभी रहता नही,
त्रैलोक्य-भासक ज्ञान-रवि पर है वहां रहता सही ।
जो देव स्वात्मामे सदा स्थिर-रूपताको प्राप्त है,
मै हूँ उसी की शरणमे, जो देववर है, आप्त है ॥१९॥

अवलोकने पर ज्ञानमे जिसके सकल ससार ही—
है स्पष्ट दिखता, एकसे है दूसरा मिलकर नही।
जो शुद्ध, शिव है, शान्त भी है, नित्यताको प्राप्त है,
उसकी शरणको प्राप्त हूँ, जो देववर है, आप्त है।।२०।।
वृक्षावली जैसे अनलकी लपटसे रहती नही,
त्यों शोक, मन्मथ, मानको रहने दिया जिसने नही।
भय, मोह, नीद, विषाद, चिन्ता भी न जिसको व्याप्त है,
उसकी शरणमे हूँ गिरा, जो देववर है, आप्त है।।२१।।
विधिवत शुभासन घासका या भूमिका बनता नही,
चौकी, शिलाको ही शुभासन मानती बुधता नही।
जिसमे कषायारीन्द्रिया खटपट मचाती है नही,
आसन सुधी जनके लिए है आतमा निर्मल वही।।२२।।
हे भद्र! आसन, लोक-पूजा, सङ्घकी सङ्गति तथा,
ये सब समाधीके न साधन वास्तविक मे है प्रथा।
सम्पूर्ण बाहर वासनाको इसलिए तू छोड़दे,
अध्यात्ममे तू हर घड़ी होकर निरत रति जोड़दे।।२३।।
जो बाहरी है वस्तुये, वे है नही मेरी कही,
उस भांति हो सकता कही उनका कभी मै भी नही।
यो समझ बाह्याडम्बरो को छोड निश्चित-रूपसे,
हे भद्र! हो जो स्वस्थ तू बच जायगा भवकूपसे।।२४।।
निजको निजात्मा-मध्यमे ही सम्यगवलोकन करे,
तू दर्शन-प्रज्ञानमय है, शुद्धसे भी है परे।
एकाग्र जिसका चित्त है, तू सत्य इसको मानना,
चाहे कही भी हो, समाधिप्राप्त उसको जानना।।२५।।
मेरी अकेली आतमा परिवर्तनोंसे हीन है,
अतिशय विनिर्मल है सदा सद्ज्ञानमे ही लीन है।

जो अन्य सब है वस्तुये वे ऊपरी ही है सभी,
निज कर्मसे उत्पन्न है अविनाशिता क्यों हो कभी ।।२६।।
है एकता जब देह के भी साथमे जिसकी नही,
पुत्रादिकोके साथ उसका ऐक्य फिर क्यो हो कही,
जब अङ्ग-भरसे मनुजके चमडा अलग हो जायगा,
तो रोंगटोका छिद्रगण कैसे नही खो जायगा ।।२७।।
संसाररूपी गहनमे है जीव बहु दुख भोगता,
वह बाहरी सब वस्तुओ के साथ कर संयोगता ।
यदि मुक्ति की है चाह तो फिर जीवगण ! सुन लीजिये,
मनसे, वचनसे, कायसे उसको अलग कर दीजिये ।।२८।।
देही ! विकल्पित जालको तू दूर कर दे शीघ्रही,
ससार-वनमे डोलनेका मुख्य कारण है यही ।
तू सर्वदा सबसे अलग निज आतमा को देखना,
परमातमाके तत्त्वमे तू लीन निजको लेखना ।।२९।।
पहले समयमे आतमा ने कर्म है जैसे किये,
वैसे शुभाशुभ फल यहां पर सांप्रतिक उसने लिये ।
यदि दूसरे के कर्मका फल जीवको होजाय तो,
हे जीवगण ! फिर सफलता निज कर्मकी खो जाय तो ।।३०।।
'अपने' उपार्जित कर्म-फलको जीव पाते है सभी,
उसके सिवा कोई किसीको कुछ नहीं देता कभी' !
ऐसा समझना चाहिए एकाग्र मन होकर सदा ।
'दाता अपर है भोगका' इस बुद्धिको खोकर सदा ।।३१।।
सबमे अलग परमात्मा है, अमितगति से वन्द्य है,
हे जीवगण ! वह सर्वदा सब भाति ही अनवद्य है ।
मनसे उसी परमात्माको ध्यानमे जो लायगा,
वह श्रेष्ठ लक्ष्मीके निकेतन मुक्ति-पदको पायगा ।।३२।।
पढकर इन द्वात्रिंश पद्यको, लखता जो परमात्मवन्द्यको ।
वह अनन्यमय होजाता है, मोक्ष-निकेतनको पाता है ।।३३।।इति

निर्वाण काण्ड (गाथा)

अट्ठावयम्मि उसहो चम्पाए वासुपुज्जजिणणाहो । उज्जंते णेमि जिणो पावाए णिव्वुदो महावीरो ॥१॥ वीसं तु जिणवरिंदा अमरासुरवंदिदा धुदकिलेसा । सम्मेदे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥२॥ वरदत्तो य वरंगो सायरदत्तो य तारवरणयरे । आहुट्ठयकोडीओ णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥३॥ णेमिसामि पज्जण्णो संबुकुमारो तहेव अणिरुद्धो । बाहत्तरिकोडीओ उज्जन्ते सत्तसया सिद्धा ॥ ४ ॥ रामसुवा वेण्णि जणा लाडणरिंदाण पञ्चकोडीओ । पावागिरवर सिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥५॥ पंडुसुआ तिण्णि जणा दविडणरिंदाण अट्ठकोडीओ । सत्तुञ्जयगिरि सिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ६ ॥ संते जे बलभद्दा जदुवणरिंदाण अट्ठकोडिओ । गजपंथे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ७ ॥ रामहणू सुग्गीओ गवयगवाक्खो य णीलमहणीलो । णवणवदीकोडीओ तुङ्गीगिरिणिव्वुदे वंदे ॥८॥ णंगाणंगकुमारा कोडीपञ्चद्धमुणिवरा सहिया । सुवण्णगिरिवर सिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥९॥ दहमुहरायस्स सुवा कोडीपञ्चद्धमुणिवरा सहिया । रेवाउहयतडग्गे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १० ॥ रेवाणइए तीरे पच्छिमभायम्मि सिद्धवरकूडे । दो चक्की दह कप्पे आहुट्ठयकोडिणिव्वुदे वंदे ॥११॥ वडवाणीवरणयरे दक्खिणभायम्मि चूलगिरिसिहरे । इंदजीदकुम्भयणो णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१२॥ पावागिरिवरसिहरे सुवण्णभद्दाइमुणिवरा चउरो । चलणाणईतडग्गे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१३॥ फलहोडीवरगामे पच्छिमभायम्मि दोणगिरिसिहरे । गुरुदत्ताइमुणिंदा णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१४॥ णायकुमारमुणिंदो वालमहावालि चेव अज्झेया । अट्ठावयगिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१५॥ अचलपुरवरणयरे ईसाणे भाए मेढगिरिसिहरे । आहुट्ठयकोडिओ णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १६ ॥ वंसत्थलवरणियरे

पच्छिमभायम्मि कुंथुगिरिसिहरे। कुलदेसभूसणमुणी णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१७। जसरहरायस्स सुत्रा पञ्चसयाइं कलिंगदेसम्मि। कोडिसिलाकोडिमुणि णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १८ ॥ पासस्स समवसरणे सहिया वरदत्तमुणिवरा पञ्च । रिसिंदे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१६॥

[अतिशयक्षेत्रकाण्डम्]

पासं तह अहिणंदण णायद्दहि मंगलाउरे वंदे। अस्सारम्भे पट्टणि मुणिसुव्वत्रो तहेव वंदामि ॥ १ ॥ बाहुबलि तह वंदमि पोयणपुरहत्थिनापुरे वंदे। शांति कुंथुव अरिहो वाणारसिए सुपासपास च ॥ २ ॥ महुराए अहिछित्ते वीरं पासं तहेव वंदामि। जंबुमुणिंदो वंदे णिव्वुइपत्तोवि जंबुवणगहणे ॥ ३ ॥ पञ्चकल्याण-ठाणइ जाणवि सञ्जायमज्झलोयम्मि । मणवयकायसुद्धी सव्वं सिरसा णमस्सामि ॥४ ॥ अग्गलदेवं वंदमि वरणयरे णिवडकुंडली वंदे। पासं सिवपुरि वंदमि होलागिरिसंखदेवम्मि ॥५॥ गोमटदेवं वंदमि पचसयं धणुहदेहउच्चत्तं। देवा कुणंति वुट्टी केसरिकुसुमाण तस्स उवरिम्मि॥ ६ ॥ णिव्वाणठाण जाणिवि अइसयठाणाणि अइसए सहिया। सजादमिच्चलोए सव्वे सिरसा णमस्सामि ॥ ७ ॥ जो जण पढई तियालं णिव्वुइकंडंपि भावसुद्धीए। भुञ्जदि णरसुर सुक्खं पच्छा सो लहइ णिव्वाण ॥ ६ ॥

इति अइसइखित्तकंड ।

निर्वाणकाण्ड (भाषा)

दोहा—वीतराग बंदौ सदा, भावसहित सिर नाय।
कहूँ कांड निर्वाणकी, भाषा सुगम बनाय ॥१॥

चौपाई १५ मात्रा

अष्टापद आदीसुरस्वामि, वासुपूज्य चंपापुरि नामि। नेमिनाथ-स्वामी गिरनार। बंदौ भावभगति उरधार ॥ २ ॥ चरम तीर्थङ्कर चरम शरीर, पावापुरि स्वामी महावीर॥ शिखरसमेद जिनेसुर बीस, भावसहित बंदौ निशदीस ॥ ३ ॥ वरदतराय रु इन्द्र मुनिंद, सायरदत्त आदि गुणवृन्द॥ नगरतारवर मुनि अठकोडि, बंदौं भावसहित करजोडि ॥ ४ ॥ श्री गिरनार शिखर विख्यात, कोडि बहत्तर अरु सौ सात। शंबुप्रद्युम्नकुमार द्वै भाय, अनिरुध आदि नमूं तसु पाय ॥ ५ ॥ रामचन्द्र के सुत द्वै वीर, लाडनरिंद आदि गुणधीर। पांच कोडि मुनि मुक्ति-मंझार, पावागिरि बंदौ निरधार ॥६॥ पांडव तीन द्रविडराजान, आठकोडि मुनि मुकति पयान-श्रीशत्रुञ्जयगिरि के शीस, भावसहित बंदौ निशदीस ॥७॥ जे बल-भद्र मुकति मे गये, आठकोडि मुनि औरहु भये। श्री गज पंथशिखर सुविशाल, तिनके चरण नमूं तिहुंकाल ॥ ८ ॥ राम हणसुग्रीव सुडोल, गवयगवाख्य नील महानील। कोडि निन्याणवे मुक्ति पयान, तुङ्गीगिर बंदौ धरि ध्यान ॥ ९ ॥ नङ्ग अनङ्ग कुमार सुजान, पांचकोडि अरु अर्ध प्रमान। मुक्ति गये सोनागिर शीश, ते बंदौ त्रिभुवनपति ईश ॥ १० ॥ रावणके सुत आदिकुमार, मुक्ति गये रेवातट सार। कोटि पञ्च अरु लाख पचास, ते बंदौं धरि परम हुलास ॥११॥ रेवा नदी सिद्धवर कूट, पश्चिम दिशा देह जहं छूट। द्वै चक्री दश कामकुमार, ऊठकोडि बंदौ भव पार ॥१२॥ बडवानी बडनगर सुचङ्ग, दक्षिण दिशि गिरिचूल उतङ्ग। इन्दजीत अरु कुम्भ जु कर्ण, ते बंदौ भवसागर तर्ण ॥ १३ ॥ सुवरण भद्र आदि मुनिचार, पावागिरि वर शिखर मंझार। चेलना नदीतीर के पास, मुक्ति गये बंदौ नित तास ॥१४॥ फलहोडी बडगाम अनूप, पश्चिम दिशा द्रोणगिरि रूप। गुरुदत्तादि मुनीसुर जहां, मुक्ति गये बन्दौं

नित तहां ॥१५॥ बाल महाबाल मुनि दोय, नागकुमार मिले त्रय होय। श्री अष्टापद मुक्ति मंझार, ते वन्दौ नित सुरत संभार ॥१६॥ अचलापुर को दिश ईशान, तहां मेढगिरि नाग प्रधान। साढे तीन कोडि मुनिराय, तिनके चरण नमूं चितलाय ॥ १७ ॥ वंसस्थल वनके ढिग होय, पश्चिमदिशा कुंथुगिरि सोय। कुल-भूषण दिशि-भूषण नाम, तिनके चरणनि करूं प्रणाम ॥ १८ ॥ जसघर राजा के सुत कहे, देश कलिंग पांचसौ लहे। कोटिशिला मुनि कोटि प्रमान, वन्दन करूं जोरजुगपान ॥ १९ ॥ समवसरण श्रीपार्श्व जिनंद, रेसिंदीगिरि नयनानन्द। वरदत्तादि पञ्च ऋषिराज, ते वन्दौं नित धरम जिहाज ॥ २० ॥ मथुरापुर पवित्र उद्यान, जम्बूस्वामीजी निर्वाण। चरम केवली पञ्चमकाल, ते वन्दौ नित दीनदयाल ॥ २१ ॥ तीनलोक के तीरथ जहां, नित प्रति वन्दन कीजे तहां। मनवचकाय सहित सिर नाय, वन्दन करहिं भविक गुणगाय ॥ २२ ॥ सम्वत् सतरहसौ इकताल, आश्विन सुदी दशमी सुविशाल। "भैया" वन्दन करहिं त्रिकाल, जय निर्वाणकाण्ड गुणमाल ॥ २३ ॥

॥ इति ॥

मेरी भावना

जिसने रागद्वेषकामादिक जीतें, सब जग जान लिया।
सब जीवों को मोक्ष मार्गका, निस्पृह हो उपदेश दिया ॥
बुद्ध, वीर, जिन, हरि, हर, ब्रह्मा, या उसको स्वाधीन कहो।
भक्ति-भाव से प्रेरित हो, यह चित्त उसी में लीन रहो ॥१॥
विषयों की आशा नहिं जिनके, साम्य-भाव धन रखते हैं।
निज-परके हित साधना में जो, निशिदिन तत्पर रहते हैं ॥
स्वार्थ त्याग की कठिन तपस्या, बिना खेद जो करते है।

ऐसे ज्ञानी साधु जगत के, दुःख समूह को हरते है ।। २ ।।
रहे सदा सत्संग उन्हीं का, ध्यान उन्ही का नित्य रहे ।
उनही जैसी चर्या मे यह, चित्त सदा अनुरक्त रहे ।।
नही सताऊं किसी जीवको, झूंठ कभी नही कहा करूं ।
पर धन *वनिता पर न लुभाऊं, संतोषामृत पिया करूं ।।३।।
अहङ्कार का भाव न रक्खूं, नही किसी पर क्रोध करूं ।
देख दूसरों की बढती को, कभी न ईर्ष्या-भाव धरूं ।
रहे भावना ऐसी मेरी, सरल-सत्य-व्यवहार करूं ।
बने जहां तक इस जीवन मे, औरो का उपकार करूं ।।
मैत्रीभाव जगत मे मेरा, सब जीवोसे नित्य रहे ।
दीन-दुखी जीवों पर मेरे, उरमे करुणा स्रोत बहे ।।
दुर्जन क्रूर-कुमार्ग रतों पर, क्षोभ नही मुझको आवे ।
साम्यभाव रखूं मैं उन पर, ऐसी परणति हो जावे ।।५।।
गुणीजनों को देख हृदय मे, मेरे प्रेम उमड़ आवे ।
बने जहां तक उनकी सेवा करके यह मन सुख पावे !
होऊं नहीं कृतघ्न कभी मै, द्रोह न मेरे उर आवे ।
गुण ग्रहण का भाव रहे नित, दृष्टि न दोषों पर जावे ।।६।।
कोई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे ।
लाखों वर्षों तक जीऊं या, मृत्यु आज ही आ जावे ।।
अथवा कोई कैसा ही भय, या लालच देने आवे ।
तो भी न्याय-मार्ग से मेरा, कभी न पद डिगने पावे ।। ७ ।।
होकर सुख मे मग्न न फूले, दुःख में कभी न घबरावे !
पर्वत नदी-श्मसान-भयानक, अटवी से नहि भय खावे ।।
रहे अडोल-अकम्प निरन्तर, यह मन दृढतर बन जावे
इष्ट-वियोग अनिष्ट-योग में, सहनशीलता दिखलावे ।।८।।

---

* महिलायें वनिता के स्थान पर 'भर्ता' पढ़ें ।

सुखी रहे सब जीव जगत के, कोई कभी न घबरावे।
वैर-पाप अभिमान छोड़ जग, नित्य नये मङ्गल गावे॥
घर घर चर्चा रहे धर्म की, दुष्कृत दुष्कर होजावे।
ज्ञान-चरित उन्नत कर अपना, मनुज जन्मफल सब पावे॥६॥
ईति-भीति व्यापे नहिं जगमे, वृष्टि समय पर हुआ करे।
धर्म-निष्ठ होकर राजा भी, न्याय प्रजा का किया करे॥
रोग-मरी-दुर्भिक्ष न फैले, प्रजा शांति से जिया करे।
परम अहिंसा धर्म जगत मे फैल, सर्वहित किया करे॥१०॥
फैले प्रेम परस्पर जग में, मोह दूर पर रहा करे।
अप्रिय-कटुक-कठोर शब्द नहिं, कोई मुख से कहा करें॥
बनकर सब 'युग-वीर' हृदय से, देशोन्नति रत रहा करें।
वस्तु स्वरूप विचार खुशी से, सब दुःख सङ्कट सहा करे॥११॥

दुःख-हरण स्तुति।

श्रीपति जिनवर करुणायतनं, दुःखहरण तुम्हारा बाना है।
मत मेरी बार अबार करो, मोहि देहु विमल कल्याना है॥टेक॥
त्रैकालिक वस्तु प्रत्यक्ष लखो, तुमसों कछु बात न छाना है।
मेरे उर आरत जो बरतैं, निहचै सब सो तुम जाना है॥
अवलोक विथा मत मौन गहो, नहिं मेरा कहीं ठिकाना है।
हे राजविलोचन सोचविमोचन, मैं तुमसो हित ठाना है॥श्री०१॥
सब ग्रन्थनि मे निरग्रन्थनि ने, निरधार यही गणधार कही।
जिननायक ही सब लायक हैं, सुखदायक छायक ज्ञानमही।
यह बात हमारे कान परी, तब आन तुम्हारो शरण गही।
क्यो मेरी बार बिलम्ब करो, जिननाथ सुनो यह बात सही॥श्री०॥
काहू को भोग मनोग करो, काहू को स्वर्ग विमाना है।
काहू को नागनरेशपती, काहू को ऋद्धि निधाना है।

अब मोपर क्यो न कृपा करते, यह क्या अंधेर जमाना है।
इनसाफ करो मत देर करो, सुखवृन्द भजो भगवाना है ।।श्री०।।३।।
खल कर्म मुझे हैरान किया, तब तुमसो आन पुकारा है।
तुम ही समरथ न न्याय करो, तब बन्दे का क्या चारा है।
खल घालक पालक बालक का, नृपनीति यही जगसारा है।
तुम नीतिनिपुन त्रिलोकपति, तुमही लगि दौर हमारा है ।।श्री०।।४

जबसे तुमसे पहचान भई, तबसे तुमही को माना है।
तुमरे ही शासन का स्वामी, हमको शरना सरधाना है।
जिनको तुमरी शरनागत है, तिनसौं यमराज डराना है।
यह सुजस तुम्हारे सांचे का सब गावत वेद पुराना है।।श्री०।।५।।

जिसने तुमसे दिलदर्द कहा, तिसका तुमने दुख हाना है।
अघ छोटा मोटा नाशि तुरत, सुख दिया तिन्हे मनमाना है।
पावकसौ शीतल नीर किया, औ चीर बढा असमाना है।
भोजन था जिसके पास नही, सो किया कुवेर समाना है।। श्री० ।।६।।

चिन्तामणि पारस कल्पतरु, सुखदायक ये परधाना है।
तव दासनके सब दास यही,-हमरे मनमे ठहरना है।
तुम भक्तन को सुरइन्द्रपदी, फिर चक्रवर्त्ति पद पाना है।
क्या बात कहो बिस्तार बढे, वे पावें मुक्ति ठिकाना है।। श्री०।।७।
गति चार चौरासी लाख विषैं, चिन्मूरत मेरा भटका है।
हो दीनबन्धु करुणानिधान, अबलो न मिटा वह खटका है।
अब जोग मिला शिवसाधनका, सब विघन कर्मने हटका है।
अब विघन हमारे दूर करो, सुख देहु निराकुल घटका है।।श्री०।।८।।
गजग्राहग्रसित उद्धार लिया, ज्यो अञ्जन तस्कर तारा है।
ज्यों सागर गोपदरूप किया, मैना का सङ्कट टारा है।
ज्यो शूलोते सिहासन औ बेडी को काट विडारा है।
त्यो मेरा सङ्कट दूर करो प्रभु, मोकूं आश तुम्हारा है।।श्री०।।९।।

ज्यो फाटक टेकत पाय खुला, औ सांप सुमन कर डारा है।
ज्यों खड्गकुसुमका माल किया, बालक का जहर उतारा है।
ज्यों सेठ विपत चकचूर पूर, घर लक्ष्मीसुख विस्तारा है।
त्यों मेरा सङ्कट दूर करो, प्रभु मोकूं आश तुम्हारा है ।।श्री०।।१०।।
यद्यपि तुमको रागादि नही यह सत्य सर्वथा जाना है।
चिन्मूरति आप अनन्तगुनी, नित शुद्धदशा शिवथाना है।
तद्यपि भक्तन की भीड हरो, सुखदेत तिन्हे जु सुहाना है।
यह शक्ति अचिन्त्य तुम्हारी का, क्या पावे पार सयाना है ।श्री०।।११
दुख खंडन श्री सुखमण्डनका, तुमरा प्रण परम प्रमाना है।
वरदान दया जस कीरत का, तिहुं लोकधुजा फहराना है।
कमलाधरजी ! कमलाकरजी, करिये कमला अमलाना है।
अब मेरी विथा अवलोकि रमापति, रञ्च न बार लगाना है ।।श्री०
हो दीनानाथ अनाथ हितू, जन दीन अनाथ पुकारी है।
उदयागत कर्म विपाक हलाहल, मोह विथा विस्तारी है।।
ज्यो आप और भवि जीवन की, ततकाल विथा निरवारी है।
त्यो 'वृन्दावन' यह अरज करै, प्रभु आज हमारी बारी है।।
श्रीपति० ।। १३ ।।........

महावीर-सन्देश

यही है महावीर सन्देश।
विपुलाचल पर दिया गया जो प्रमुख धर्म उपदेश ।। यही० ।।
सब जीवों को तुम अपनाओ हर उनके दुख क्लेश।
असद्भाव रक्खो न किसी से हो अरि क्यो न विशेष ।। यही० ।।
वैरी का उद्धार श्रेष्ठ है कीजे सुविधा विशेष।
वैर छुटे उपजे मति जिससे वही यत्न यत्नेश ।। २ ।। यही० ।।
घृणा पाप से हो, पापी से नही कभी लवलेश।
भूल सुझाकर प्रेम मार्ग से, करो उसे पुण्येश ।। ३ ।। यही० ।।

तज एकान्त कदाग्रह दुर्गुण बनो उदार विशेष।
रह प्रसन्न चित करो मनन तुम यही तत्त्व उपदेश ।।४।। यही० ।।
तजो राग-द्वेष भय इन्द्रिय मोह कषाय अशेष।
धरो धैर्य सम चित्त रहो औं, सुख दुख मे सविशेष ।।५।। यही० ।।
अहङ्कार ममकार तजो जो अवनतिकार विशेष।
तप-संयम मे रत हो त्यागो तृष्णाभाव अशेष ।। ६ ।। यही० ।।
'वीर' उपासक बनो सत्य के तज मिथ्याऽभिनिवेश।
विपदाओं से मत घबराओ धरो न कोपाऽऽवेश ।। ७ ।। यही० ।।
संज्ञानी संदृष्टि बनो और तजो भाव संक्लेश।
सदाचार पालो दृढ होकर रहे प्रमाद न लेश ।। ८ ।। यही० ।।
सादा रहन सहन भोजन हो सादा भूषा वेश।
विश्व प्रेम जागृत कर उर मे करो कर्म निःशेष ।। ९ ।। यही० ।।
हो सब का कल्याण भावना ऐसी रहे हमेश।
दया लोक सेवा रत चित्त हो और न कुछ आदेश ।। १० ।। यही० ।।
इस पर चलने से ही होगा विकसित स्वात्म प्रदेश।
आतम 'ज्योति' जगेगी ऐसे, जैसे उदित दिनेश ।। ११ ।।
यही है महावीर सन्देश।

★ भक्तामर स्तोत्र ★

भक्तामर-प्रणत-मौलि-मणि-प्रभाणा—
मुद्योतकं दलित-पाप-तमो-वितानम् ।
सम्यक्प्रणम्य जिन-पादयुगं युगादा—
वालंबनं भव-जले पततां जनानाम् ॥१॥

यः संस्तुतः सकल-वाङ्मय-तत्त्व-बोधा—
दुद्भूत-बुद्धि-पटुभिः सुर-लोक-नाथैः ।
स्तोत्रैर्जगत्त्रितय-चित्त-हरैरुदारैः,
स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम् ॥२॥

बुद्धया विनापि विबुधार्चित-पाद-पीठ—
स्तोतुं समुद्यत—मतिर्विगत-त्रपोऽहं ।
बालं विहाय जल-संस्थितमिंदु-बिंब—
मन्यः क इच्छति जनः सहसा गृहीतुम् ॥३॥

वक्तुं गुणान् गुण-समुद्र शशांक-कान्तान्,
कस्ते क्षमः सुर-गुरु-प्रतिमोऽपि बुद्धया ।
कल्पांत-काल-पवनोद्धत-नक्र-चक्र,
को वा तरीतुमलमम्बुनिधिं भुजाभ्याम् ॥४॥

सोऽहं तथापि तव भक्ति-वशान्मुनीश !
कर्त्तुं स्तवं विगत-शक्तिरपि प्रवृत्तः ।

प्रीत्यात्म-वीर्यमविचार्य मृगी मृगेन्द्रम् ,
नाभ्येति किं निज-शिशोः परिपालनार्थम् ॥५॥
अल्प-श्रुतं श्रुतवतां परिहास-धाम,
त्वद्भक्तिरेव मुखरीकुरुते बलान्माम् ।
यत्कोकिलः किल मधौ मधुरं विरौति,
तच्चाम्र-चारु-कलिका-निकरैक-हेतुः ॥६॥
त्वत्संस्तवेन भव-सन्तति-सन्निबद्धं,
पापं क्षणात्क्षयमुपैति शरीरभाजाम् ।
आक्रांत-लोकमलि-नीलमशेषमाशु,
सूर्यांशु-भिन्नमिव शार्वरमंधकारम् ॥७॥
मत्वेति नाथ तव संस्तवनं मयेद—
मारभ्यते तनु-धियापि तव प्रभावात् ।
चेतो हरिष्यति सतां नलिनी-दलेषु,
मुक्ता-फलद्युतिमुपैति ननूद-बिन्दुः ॥८॥
आस्तां तव स्तवनमस्त-समस्त-दोषं,
त्वत्संकथापि जगतां दुरितानि हंति ।
दूरे सहस्रकिरणः कुरुते प्रभैव,
पद्माकरेषु जलजानि विकासभांजि ॥९॥
नात्यद्भुतं भुवन-भूषण ! भूत-नाथ !
भूतैर्गुणैर्भुवि भवंतमभिष्टुवंतः ।
तुल्या भवंति भवतो ननु तेन किं वा,

भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति ॥१०॥

दृष्ट्वा भवंतमनिमेष-विलोकनीयं,

नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य चक्षुः

पीत्वा पयः शशिकर-द्युति-दुग्ध-सिन्धोः ।

क्षारं जलं जल-निधेरसितुं क इच्छेत् ॥११॥

यैः शांत-राग-रुचिभिः परमाणुभिस्त्वं,

निर्मापितस्त्रिभुवनैक-ललामभूत ।

तावंत एव खलु तेप्यणवः पृथिव्यां,

यत्ते समानमपरं न हि रूपमस्ति ॥१२॥

वक्त्रं क्व ते सुर-नरोरग-नेत्रहारि,

निःशेष-निर्जित-जगत्त्रितयोपमानं ।

बिम्बं कलंकमलिनं क्व निशाकरस्य,

यद्वासरे भवति पांडुपलाश-कल्पं ॥१३॥

संपूर्ण-मंडल-शशांक-कला-कलाप—

शुभ्रागुणास्त्रिभुवनं तव लंघयंति ।

ये संश्रितास्त्रिजगदीश्वर-नाथमेकं,

कस्तान्निवारयति संचरतो यथेष्टम् ॥१४॥

चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशांगनाभि—

र्नीतं मनागपि मनो न विकार-मार्गम् ।

कल्पांत-काल-मरुता चलिताचलेन,

किं मंदराद्रि-शिखरं चलितं कदाचित् ॥१५॥

निर्धूम-वर्तिरपवर्जित-तैल-पूरः,
कृत्स्नं जगत्त्रयमिदं प्रकटीकरोषि ।
गम्यो न जातु मरुतां चलिताचलानां,
दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ जगत्प्रकाशः ॥१६॥

नास्तं कदाचिदुपयासि न राहु-गम्यः,
स्पष्टीकरोषि सहसा युगपज्जगंति ।
नांभोधरोदर-निरुद्ध-महा-प्रभावः,
सूर्यातिशायि-महिमासि मुनीन्द्र लोके ॥१७॥

नित्योदयं दलित-मोह-महांधकारं,
गम्यं न राहु—वदनस्य न वारिदानां ।
विभ्राजते तव मुखाब्जमनल्पकांति,
विद्योतयज्जगदपूर्व-शशांक-बिंबम् ॥१८॥

किं शर्वरीषु शशिनाह्वि विवस्वता वा,
युष्मन्मुखेंदु-दलितेषु तमःसु नाथ ।
निष्पन्न शालि-वन-शालिनि जीव-लोके,
कार्यं कियज्जलधरैर्जल-भार-नम्रैः ॥१९॥

ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाशं,
नैवं तथा हरि-हरादिषु नायकेषु ।
तेजः स्फुरन्मणिषु याति यथा महत्त्वं,
नैवं तु काच-शकले किरणाकुलेऽपि ॥२०॥

मन्ये वरं हरि-हरादय एव दृष्टा,

दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोषमेति ।
किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः,
कश्चिन्मनो हरति नाथ भवांतरेऽपि ॥२१॥
स्त्रीणां शतानि शतशो जनयंति पुत्रान्,
नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता ।
सर्वा दिशो दधति भानि सहस्ररश्मिं,
प्राच्येव दिग्जनयति स्फुरदंशुजालम् ॥२२॥
त्वामामनंति मुनयः परमं पुमांस—
मादित्य-वर्णममलं तमसः पुरस्तात् ।
त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयंति मृत्युं,
नान्यः शिवः शिवपदस्य मुनीन्द्र पंथाः ॥२३॥
त्वामव्ययं विभुमचिंत्यमसंख्यमाद्यं,
ब्रह्माणमीश्वरमनंतमनंगकेतुं ।
योगीश्वरं विदित-योगमनेकमेकं,
ज्ञान-स्वरूपममलं प्रवदंति संतः ॥२४॥
बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चित-बुद्धि-बोधात्,
त्वं शङ्करोऽसि भुवन-त्रय-शङ्करत्वात् ।
धाताऽसि धीर शिव-मार्ग-विधेर्विधानाद्,
व्यक्तं त्वमेव भगवन् पुरुषोत्तमोऽसि ॥२५॥
तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्त्तिहराय नाथ !
तुभ्यं नमः क्षिति-तलामल-भूषणाय ।

तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय,
तुभ्यं नमो जिनभवोदधि-शोषणाय ॥२६॥

को विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणैरशेषै—
स्त्वं संश्रितो निरवकाशतया मुनीश !
दोषैरुपात्तविविधाश्रय-जात-गर्वैः,
स्वप्नांतरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि ॥२७॥

उच्चैरशोक-तरु-संश्रितमुन्मयूख—
माभातिरूपममलं भवतो नितांतं।
स्पष्टोल्लसत्किरणमस्त-तमो-वितानं,
बिम्बं रवेरिव पयोधर-पार्श्ववर्ति ॥२८॥

सिंहासने मणि-मयूख-शिखा-विचित्रे,
विभ्राजते तव वपुः कनकावदातं।
बिम्बं वियद्विलसदंशुलता-वितानं,
तुङ्गोदयाद्रिशिरसीव सहस्र-रश्मेः ॥२९॥

कुंदावदात-चल-चामर-चारु-शोभं,
विभ्राजते तव वपुः कलधौत-कांतं।
उद्यच्छशांक-शुचि-निर्झर-वारि-धार—
मुच्चैस्तटं सुरगिरेरिव शातकौम्भम् ॥३०॥

छत्र-त्रयं तव विभाति शशांककांत—
मुच्चैः स्थितं स्थगित-भानु-कर-प्रतापं।
मुक्ता-फल-प्रकर-जाल-विवृद्ध-शोभं,

प्रख्यापयत्त्रिजगतः परमेश्वरत्वं ॥३१॥

गंभीर-तार-रव-पूरित-दिग्विभाग—

स्त्रैलोक्य-लोक-शुभ-संगम-भूतिदक्षः ।

सद्धर्मराज-जय-घोषण-घोपकः सन् ,

खे दुंदुभिर्ध्वनति ते यशसः प्रवादी ॥३२॥

मंदार-सुंदर-नमेरु-सुपारिजात—

संतानकादि-कुसुमोत्कर-वृष्टि-रुद्धा ।

गंधोद-बिंदु-शुभ-मंद-मरुत्प्रपाता,

दिव्यादिवः पतति ते वचसां ततिर्वा ॥३३॥

शुम्भत्प्रभा-वलय-भूरि-विभा विभोस्ते,

लोक-त्रये द्युतिमतां द्युतिमाक्षिपंति ।

प्रोद्यद्दिवाकर-निरंतर-भूरि-संख्या,

दीप्त्या जयत्यपि निशामपि सोम-सौम्यां ॥३४

स्वर्गापवर्ग-गम-मार्ग-विमार्गणेष्टः,

सद्धर्म-तत्त्व-कथनैक-पटुस्त्रिलोक्याः ।

दिव्य-ध्वनिर्भवति ते विशदार्थ-सर्व—

भाषा-स्वभाव-परिणाम-गुणैः प्रयोज्यः ॥३५॥

उन्निद्र-हेम-नव-पङ्कज-पुञ्ज-कांती,

पर्युल्लसन्नख-मयूख-शिखाभिरामौ ।

पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्र धत्तः,

पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयंति ॥३६॥

इत्थं यथा तव विभूतिरभूज्जिनेन्द्र,
धर्मोपदेशन-विधौ न तथा परस्य ।
यादृक्प्रभा दिनकृतः प्रहतांधकारा,
तादृक् कुतो ग्रह-गणस्य विकासिनोऽपि ॥३७॥

श्च्योतन्मदाविल-विलोल-कपोल-मूल—
मत्त-भ्रमद्भ्रमर-नाद—विवृद्ध-कोपं ।
ऐरावताभमिभमुद्धतमापतन्तम् ,
दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदाश्रितानां ॥३८॥

भिन्नेभ-कुंभ-गलदुज्ज्वल-शोणिताक्त-
मुक्ता-फल-प्रकर-भूषित-भूमि-भागः ।
बद्ध-क्रमः क्रम-गतं हरिणाधिपोऽपि,
नाक्रामति क्रम-युगाचल-संश्रितं ते ॥३९॥

कल्पांत-काल-पवनोद्धत-वह्नि-कल्पं,
दावानलं ज्वलितमुज्ज्वलमुत्स्फुलिंगं ।
विश्वं जिघत्सुमिव सम्मुखमापतंतं,
त्वन्नाम-कीर्त न—जलं शमयत्यशेषं ॥४०॥

रक्तेक्षणं समद-कोकिल-कंठ-नीलं,
क्रोधोद्धतं फणिनमुत्फणमापतंतं ।
आक्रामति क्रम-युगेण निरस्तशंक—
स्त्वन्नाम-नाग-दमनी हृदि यस्य पुंसः ॥४१॥

वल्गत्तुरंग-गज-गर्जित-भीमनाद—

मार्जौ बलं बलवतामपि भूपतीनां ।
उद्यद्दिवाकर-मयूख-शिखापविद्धं,
त्वत्कीर्त्तनात्तम इवाशु भिदामुपैति ॥४२॥
कुंताग्र-भिन्न-गज-शोणित-वारिवाह—
वेगावतार-तरणातुर-योध-भीमे ।
युद्धे जयं विजित-दुर्जय-जेय-पक्षा—
स्त्वत्पाद-पङ्कज-वनाश्रयिणो लभंते ॥४३॥
अंभोनिधौ क्षुभित-भीषणनक्र-चक्र—
पाठीन-पीठभय-दोल्वण-वाडवाग्नौ ।
रंगत्तरंग-शिखर-स्थित-यान-पात्रा—
स्त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद् व्रजंति ॥४४॥
उद्भूत-भीषण-जलोदर-भार-भुग्नाः,
शोच्यां दशामुपगताश्च्युत-जीविताशाः ।
त्वत्पाद-पङ्कज-रजोऽमृत-दिग्ध-देहा,
मर्त्या भवंति मकरध्वज-तुल्यरूपाः ॥४५॥
आपाद-कंठमुरुशृंखल-वेष्टितांगा,
गाढं वृहन्निगड-कोटि-निघृष्ट-जंघाः ।
त्वन्नाम-मंत्रमनिशं मनुजाः स्मरंतः,
सद्यः स्वयं विगत-बंध-भया भवंति ॥४६॥
मत्तद्विपेन्द्र-मृगराज-दवानलाहि—
संग्राम-वारिधि-महोदर-बंधनोत्थं ।

तस्याशु नाशमुपयाति भयं भियेव,
यस्तावकं स्तवमिमं मतिमानधीते ॥४७॥
स्तोत्रस्रजं तव जिनेन्द्र गुणैर्निबद्धां,
भक्त्या मया विविध-वर्ण-विचित्रपुष्पां ।
धत्ते जनो य इह कंठ-गतामजस्रं,
तं 'मानतुंग' मवशा समुपैति लक्ष्मीः ॥४८॥
इति श्री मानतुङ्गाचार्य विरचितमादिनाथस्तोत्रं (भक्तामर स्तोत्रं)

मोक्ष-शास्त्रं

मोक्षमार्गस्य नेतारं भेत्तारं कर्मभूभृतां ।
ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां वंदे तद्गुणलब्धये ॥
त्रैकाल्यं द्रव्य-षट्कं नव-पद-सहितं जीव-षट्काय-लेश्याः ।
पञ्चान्ये चास्तिकाया व्रत-समिति-गति-ज्ञान-चारित्र-भेदाः ॥
इत्येतन्मोक्षमूलं त्रिभुवनमहितैः प्रोक्तमर्हद्भिरीशैः ।
प्रत्येति श्रद्धधाति स्पृशति च मतिमान् यः स वै शुद्धदृष्टिः॥१॥
सिद्धे जयप्पसिद्धे चउविहाराहणाफलं पत्ते ।
वंदित्ता अरहंते वोच्छं आराहणा कमसो ॥२॥
उज्जोवणमुज्जवणं णिव्वहणं साहणं च णिच्छरणं ।
दंसण-णाण-चरित्तं तवाणमाराहणा भणिया ॥ ३ ॥

सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्राणि मोक्षमार्गः ॥१॥ तत्त्वार्थ-श्रद्धानं सम्यग्दर्शनम् ।२॥ तन्निसर्गादधिगमाद्वा ।३॥ जीवा-

जीवास्रवबंध-संवर-निर्जरा-मोक्षास्तत्त्वं ॥ ४ ॥ नाम स्थापना द्रव्य-भावतस्तन्न्यासः ॥५॥ प्रमाण-नयैरधिगमः ॥६॥ निर्देशस्वामित्व-साधनाधिकरण-स्थितिविधानतः ॥ ७ ॥ सत्संख्याक्षेत्र-स्पर्शन-कालांतर-भावाल्पबहुत्वैश्च ॥८॥ मति-श्रुतावधिमनःपर्यय-केवलानि ज्ञानं ॥९॥ तत्प्रमाणे ॥१०॥ आद्ये परोक्षं ॥११॥ प्रत्यक्षमन्यत् ॥१२॥ मतिः स्मृतिः संज्ञा चिंताभिनिबोध इत्यनर्थान्तरं ॥१३॥ तदिंद्रियानिंद्रियनिमित्तं ।१४। अवग्रहेहावायधारणाः ॥१५॥ बहुबहुविधक्षिप्रानिःसृतानुक्तध्रुवाणां सेतराणां ॥१६॥ अर्थस्य ॥१७॥ व्यञ्जनस्यावग्रहः ॥१८॥ न चक्षुरनिन्द्रियाभ्यां ॥१९॥ श्रुतं मतिपूर्वं द्व्यनकेद्वादशभेदं ।२०। भवप्रत्ययोवधिर्देवनारकाणां ।२१। क्षयोपशमनिमित्तः षड्विकल्पः शेषाणां ॥२२॥ ऋजुविपुलमती मनःपर्ययः ॥२३॥ विशुद्ध्यप्रतिपाताभ्यां तद्विशेषः ॥२४॥ विशुद्धिक्षेत्रस्वामिविषयेभ्योऽवधिमनःपर्यययोः ।२५। मतिश्रुतयोर्निबंधो द्रव्येष्वसर्वपर्यायेषु ।२६। रूपिष्ववधेः ।२७। तदनन्तभागे मनःपर्ययस्य ॥२८॥ सर्वद्रव्यपर्यायेषु केवलस्य ॥२९॥ एकादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥३०। मतिश्रुतावधयो विपर्ययश्च ॥३१॥ सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥३२॥ नैगमसंग्रहव्यवहारर्जुसूत्रशब्दसमभिरूढैवंभूता नयः ॥३३॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

औपशमिक क्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्त्वमौद-यिकपारिणामिकौ च ॥ १ ॥ द्विनवाष्टादशैकविंशतित्रिभेदा यथाक्रमं ॥२॥ सम्यक्त्वचारित्रे ॥३॥ ज्ञानदर्शनदानलाभ-भोगोपभोगवीर्याणि च ॥४॥ ज्ञानाज्ञानदर्शनलब्धयश्चतुस्त्रि-त्रिपञ्चभेदाः सम्यक्त्वचारित्रसंयमासंयमाश्च ॥५॥ गतिकषाय-लिंगमिथ्यादर्शनाज्ञानासंयतासिद्धलेश्याश्चतुश्चतुस्त्र्येकैकैकैकषड्-भेदाः ॥६॥ जीवभव्याभव्यत्वानि च ॥७॥ उपयोगो लक्षणं ॥८॥ सद्विविधोऽष्टचतुर्भेदः ॥९॥ संसारिणो मुक्ताश्च ॥१०॥ समनस्काऽमनस्काः ॥११॥ संसारिणस्त्रसस्थावराः ॥१२॥ पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतयः स्थावराः ॥१३॥ द्वीन्द्रियादय-स्त्रसाः ॥१४॥ पंचेन्द्रियाणि ॥१५॥ द्विविधानि ॥१६॥ निर्वृत्त्युपकरणे द्रव्येन्द्रियं ।१७। लब्ध्युपयोगौ भावेन्द्रियं ।१८। स्पर्शन-रसन-घ्राण-चक्षुः-श्रोत्राणि ॥ १९ ॥ स्पर्श-रस गंध-वर्ण-शब्दास्तदर्थाः ॥२०॥ श्रुतमनिन्द्रियस्य ॥ २१ ॥ वनस्पत्यन्तानामेकम् ॥२१॥ कृमि-पिपीलिका-भ्रमर-मनुष्या-दीनामेकैक-वृद्धानि ॥२३॥ संज्ञिनः समनस्काः ॥२४॥ विग्रह-गतौ कर्म-योगः ॥२५॥ अनुश्रेणि गतिः ।२६॥ अवि-ग्रहा जीवस्य ॥२७॥ विग्रहवती च संसारिणः प्राक् चतुर्भ्यः ॥२८॥ एकसमयाऽविग्रहा ॥२९॥ एकं द्वौ त्रीन्वानाहारकः ॥३०॥ सम्मूर्च्छन-गर्भोपपादा जन्म ॥३१॥ सचित्त-शीत-संवृताः सेतरा मिश्राश्चैकशस्तद्योनयः ॥३२॥ जरायुजांडज-

पोतानां गर्भः ॥३३॥ देवनारकाणामुपपादः ॥३४॥ शेषाणां सम्मूर्च्छनं ।३५। औदारिक-वैक्रियिकाहारक-तैजस-कार्मणानि शरीराणि ॥३६॥ परं परं सूक्ष्मं ॥३७॥ प्रदेशतोऽसंख्येय-गुणं प्राक् तैजसात् ॥३८॥ अनन्त-गुणे परे ॥३९॥ अप्रती-घाते ॥४०॥ अनादि संबंधे च ॥४१॥ सर्वस्य ॥४२॥ तदादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥४३॥ निरुप-भोगमन्त्यम् ॥४४॥ गर्भ-सम्मूर्च्छनजमाद्यम् ॥४५॥ औप-पादिकं वैक्रियिकम् ॥४६॥ लब्धि-प्रत्ययं च ॥४७॥ तैजस-मपि ॥४८॥ शुभं विशुद्धमव्याघाति चाहारकं प्रमत्तसंयत-स्यैव ॥४९॥ नारकसंमूर्च्छिनो नपुंसकानि ॥५०॥ न देवाः ॥५१॥ शेषास्त्रिवेदाः ॥५२॥ औपपादिक-चरमोत्तमदेहाऽ-संख्येय—वर्षायुषोऽनपवर्त्यायुषः ॥५१॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥

रत्न-शर्करा-वालुका-पङ्क-धूम-तमो-महातमः-प्रभा-भूमयो घनांबुवाताकाश-प्रतिष्ठाः सप्ताऽधोऽधः ।१॥ तासु त्रिंशत्पञ्च-विंशति-पञ्चदश-दश-त्रि-पञ्चोनैक-नरक-शतसहस्राणि-पञ्च चैव यथाक्रमं ॥२॥ नारका नित्याऽशुभतर-लेश्या-परिणाम-देह-वेदना-विक्रियाः ॥३॥ परस्परोदीरित-दुःखा ॥४॥ संक्लिष्टा-ऽसुरो-दीरित-दुःखाश्च प्राक् चतुर्थ्याः ॥ ५ ॥ तेष्वेक-त्रि-सप्त-दश-सप्तदश-द्वाविंशति-त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमा सत्त्वानां परा स्थितिः ॥ ६ ॥ जंबूद्वीप-लवणोदादयः शुभनामानो द्वीप-

समुद्राः ॥७॥ द्विर्द्विर्विष्कंभाः पूर्व-पूर्वपरिक्षेपिणो वलयाकृतयः ॥८॥ तन्मध्ये मेरु-नाभिर्वृत्तो योजन-शतसहस्र-विष्कम्भो जम्बूद्वीपः ॥६॥ भरत-हैमवत-हरि-विदेह-रम्यक-हैरण्यवतैरावतवर्षाः क्षेत्राणि ॥१०॥ तद्विभाजिनः पूर्वापरायता हिमवन्महाहिमवन्निषध-नील-रुक्मि-शिखरिणो वर्षधरपर्वताः ॥११॥ हेमार्जुन-तपनीय-वैडूर्य-रजत-हेममयाः ॥१२॥ मणिविचित्र-पार्श्वा उपरि मूले च तुल्य-विस्ताराः ॥१३॥ पद्म-महापद्म-तिगिञ्छ-केशरि-महापुंडरीक-पुण्डरीका ह्रदास्तेषामुपरि ।१४। प्रथमो योजन-सहस्रायामस्तदर्द्ध विष्कम्भो ह्रदः ।१५॥ दश-योजनावगाहः ॥१६॥ तन्मध्ये योजनं पुष्करम् ॥१७॥ तद्-द्विगुण-द्विगुणा ह्रदाः पुष्कराणि च ॥१८॥ तन्निवासिन्यो देव्यः श्री-ह्री-धृति-कीर्ति-बुद्धि-लक्ष्म्यः पल्योपमस्थितयः ससामानिक-परिषत्काः ॥१६॥ गङ्गा-सिन्धु-रोहिद्रोहितास्या-हरिद्धरिकान्ता-सीता-सीतोदा-नारी-नरकान्ता-सुवर्ण-रूप्य-कूला-रक्ता-रक्तोदाः सरितस्तन्मध्यगाः ॥२०॥ द्वयोर्द्वयोः पूर्वाः पूर्वगाः ॥२१॥ शेषास्त्वपरगाः ॥२२॥ चतुर्दश-नदी-सहस्र-परिवृता गङ्गा-सिन्ध्वादयो नद्यः ॥२३॥ भरतः षड्-विंशति पञ्चयोजनशत-विस्तारः षट् चैकोनविंशति-भागा योजनस्य ॥ २४ ॥ तद्द्विगुण-द्विगुण-विस्तारा वर्षधर-वर्षा विदेहान्ताः ॥१५॥ उत्तरा दक्षिण-तुल्याः ॥२६॥ भरतैरावतयोर्वृद्धि-ह्रासौ षट्समयाभ्यामुत्सर्पिण्यवसर्पिणीभ्याम् ।२७।

ताभ्यामपरा भूमयोऽवस्थिताः ॥२८॥ एक-द्वि-त्रि-पल्योपम-स्थितयो हैमवतक-हारिवर्षक-दैवकुरवकाः २९॥ तथोत्तराः ॥३०॥ विदेहेषु संख्येय-कालाः ॥३१॥ भरतस्य विष्कम्भो जम्बूद्वीपस्य नवति-शत-भागः ॥३२॥ द्विर्धातकीखण्डे ॥३३॥ पुष्करार्द्धे च ॥३४॥ प्राङ् मानुषोत्तरान्मनुष्याः ॥३५॥ आर्या म्लेच्छाश्च ॥३६॥ भरतैरावत-विदेहाः कर्मभूमयोऽन्यत्र देवकुरूत्तर-कुरुभ्यः ॥३७॥ नृस्थिती परावरे त्रिपल्योपमान्त-र्मुहूर्ते ॥३८॥ तिर्यग्योनिजानां च ॥३९॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः ॥३॥

देवाश्चतुर्णिकायाः ॥१॥ आदितस्त्रिषु पीतान्तलेश्याः ॥२॥ दशाष्ट-पञ्च-द्वादश-विकल्पाः कल्पोपपन्न-पर्यन्ताः ॥३॥ इन्द्र-सामानिक-त्रायस्त्रिंश-पारिषदात्मरक्षलोकपालानीक-प्रकीर्णकाभियोग्य-किल्विषिकाश्चैकशः ॥४॥ त्रायस्त्रिंश-लोकपाल-वर्ज्या व्यन्तर-ज्योतिष्काः ॥५॥ पूर्वयोर्द्वीन्द्राः ॥६॥ काय-प्रवीचारा आ ऐशानात् ॥७॥ शेषाः स्पर्श-रूप-शब्द-मनः प्रवीचाराः ॥८॥ परेऽप्रवीचाराः ॥९॥ भवनवासिनोऽसुर-नाग-विद्युत्सुपर्णाग्नि-वात-स्तनितोदधि-द्वीप-दिक्कुमाराः ॥१०॥ व्यन्तराः किन्नर-किंपुरुष-महोरग-गन्धर्व-यक्ष-राक्षस-भूत-पिशाचाः ॥११॥ ज्योतिष्काः सूर्याचन्द्रमसौ ग्रह-नक्षत्र-प्रकीर्णक-तारकाश्च ॥१२॥ मेरु-प्रदक्षिणा नित्य-गतयो नृ-लोके ॥१३॥ तत्कृतः काल-विभागः ॥१४॥ बहिरवस्थिताः ॥१५॥ वैमा-

निकाः ॥१६॥ कल्पोपपन्नाः कल्पातीताश्च ॥१७॥ उपर्युपरि ॥१८॥ सौधर्मैशान-सानत्कुमार-माहेन्द्र-ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर-लान्तव-कापिष्ठ-शुक्र-महाशुक्र-शतार-सहस्रारेष्वानत-प्राणतयो-रारणा-च्युतयोर्नवसु ग्रैवेयकेषु विजय-वैजयन्त-जयन्तापराजितेषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥१९॥ स्थिति-प्रभाव-सुख-द्युति-लेश्या-विशुद्धी-न्द्रियावधि-विषयतोऽधिकाः ॥२०॥ गतिशरीर-परिग्रहाभिमानतो हीनाः ॥ २१ ॥ पीत-पद्म-शुक्ल-लेश्या द्वि-त्रि-शेषेषु ॥ २२ ॥ प्राग्ग्रैवेयकेभ्यः कल्पाः ॥ २३ ॥ ब्रह्म-लोकालया लौकान्तिकाः ॥२४॥ सारस्वतादित्य-वह्न्यरुण-गर्दतोय-तुषिताव्याबाधारिष्टाश्च ॥२५॥ विजयादिषु द्वि-चरमाः ॥२६॥ औपपादिक-मनुष्येभ्यः शेषास्तिर्यग्योनयः ॥ २७ ॥ स्थिति-रसुर-नाग-सुपर्ण-द्वीप-शेषाणां सागरोपम-त्रिपल्योपमार्द्ध-हीन-मिताः ॥ २८ ॥ सौधर्मैशानयोः सागरोपमेऽधिके ॥ २९ ॥ सानत्कुमार-माहेन्द्रयोः सप्त ॥ ३० ॥ त्रि-सप्त नवैकादश-त्रयोदश-पञ्चदशभिरधिकानि तु ॥ ३१ ॥ आरणाच्युता-दूर्ध्वमेकैकेन नवसु ग्रैवेयकेषु विजयादिषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥ ३२ ॥ अपरा पल्योपममधिकम् ॥ ३३ ॥ परतःपरतः पूर्वा पूर्वाऽनन्तरा ॥ ३४ ॥ नारकाणां च द्वितीयादिषु ॥ ३५ ॥ दश-वर्ष-सहस्राणि प्रथमायाम् ॥ ३६ ॥ भवनेषु च ॥३७॥ व्यन्तराणां च ॥३८॥ परापल्योपममधिकम् ॥३९॥ ज्योतिष्काणां च ॥४०॥ तदष्ट-भागोऽपरा ॥४१॥

लौकान्तिकानामष्टौ सागरोपमाणि सर्वेषाम् ॥ ४२ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अजीव-काया धर्माधर्माकाश-पुद्गलाः ॥ १ ॥ द्रव्याणि ॥ २ ॥ जीवाश्च ॥ ३ ॥ नित्यावस्थितान्यरूपाणि ॥ ४ ॥ रूपिणः पुद्गलाः ॥ ५ ॥ आ आकाशादेकद्रव्याणि ॥ ६ ॥ निष्क्रियाणि च ॥ ७ ॥ असंख्येयाः प्रदेशा धर्माधर्मैक-जीवानाम् ॥ ८ ॥ आकाशस्यानन्ताः ॥ ९ ॥ संख्येया-संख्येयाश्च पुद्गलानाम् ॥ १० ॥ नाणोः ॥ ११ ॥ लोकाकाशेऽवगाहः ॥ १२ ॥ धर्माधर्मयोः कृत्स्ने ॥ १३ ॥ एकप्रदेशादिषु भाज्यः पुद्गलानाम् ॥ १४ ॥ असंख्येय-भागादिषु जीवानाम् ॥ १५ ॥ प्रदेश–संहार–विसर्पाभ्यां प्रदीपवत् ॥ १६ ॥ गति-स्थित्युपग्रहौ धर्माधर्मयो-रुपकारः ॥ १७ ॥ आकाशस्यावगाहः ॥ १८ ॥ शरीर-वाङ्मनः–प्राणापानाः पुद्गलानाम् ॥ १९ ॥ सुख-दुःख-जीवित-मरणोपग्रहाश्च ॥ २० ॥ परस्परोपग्रहो जीवानाम् ॥ २१ ॥ वर्तना–परिणाम–क्रिया–परत्वापरत्वे च कालस्य ॥ २२ ॥ स्पर्श-रस-गन्ध-वर्णवन्तः पुद्गलाः ॥२३॥ शब्द-बन्ध-सौक्ष्म्य-स्थौल्य-संस्थान-भेद-तमश्छाया-तपोद्योतवन्तश्च ॥ २४ ॥ अणवः स्कन्धाश्च ॥ २५ ॥ भेद-संघातेभ्य उत्पद्यन्ते ॥ २६ ॥ भेदादणुः ॥ २७ ॥ भेद-संघाताभ्यां चाक्षुषः ॥२८॥ सद् द्रव्य-लक्षणम् ॥२९॥

उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य-युक्तं सत् ॥ ३० ॥ तद्भावाव्ययं नित्यम् ॥ ३१ ॥ अर्पितानर्पितसिद्धेः ॥ ३२ ॥ स्निग्ध-रूक्षत्वाद्बन्धः ॥ ३३ ॥ न जघन्य-गुणानाम् ॥ ३४ ॥ गुण-साम्ये सदृशानाम् ॥ ३५ ॥ द्व्यधिकादि-गुणानां तु ॥ ३६ ॥ बन्धेऽधिकौ पारिणामिकौ च ॥ ३७ ॥ गुण-पर्ययवद् द्रव्यम् ॥ ३८ ॥ कालश्च ॥ ३९ ॥ सोऽनन्तसमयः ॥ ४० ॥ द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणाः ॥ ४१ ॥ तद्भावः परिणामः ॥ ४२ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

काय-वाङ्-मनः-कर्म योगः ॥ १ ॥ स आस्रवः ॥ २ ॥ शुभः पुण्यस्याशुभः पापस्य ॥ ३ ॥ सकषायाकषाययोः साम्परायिकेर्यापथयोः ॥ ४ ॥ इन्द्रिय-कषायव्रत-क्रियाः पञ्च-चतुः-पञ्च-पञ्चविंशति-संख्याः पूर्वस्य भेदाः ॥ ५ ॥ तीव्र-मन्द-ज्ञाता-ज्ञातभावाधिकरण-वीर्य-विशेषेभ्यस्तद्विशेषः ॥ ६ ॥ अधिकरणं जीवाजीवाः ॥ ७ ॥ आद्यं संरम्भ-समारम्भारम्भ-योग-कृत-कारितानुमत-कषाय-विशेषैस्त्रिस्त्रिस्त्रिश्चतुश्चैकशः ॥ ८ ॥ निर्वर्तना-निक्षेप-संयोग-निसर्गा द्वि-चतुर्द्वि-त्रि-भेदाः परम् ॥ ९ ॥ तत्प्रदोष-निह्नव-मात्सर्यान्तरायासाद-नोपघाता ज्ञान-दर्शनावरणयोः ॥ १० ॥ दुःख-शोक-तापा-क्रन्दन-वध परिदेवनान्यात्म-परोभय-स्थानान्यसद्-वेद्यस्य ॥ ११ ॥ भूतव्रत्यनुकम्पादान-सरागसंयमादियोगः क्षान्तिः शौचमिति सद्वेद्यस्य ॥ १२ ॥ केवलि-श्रुत-संघ-धर्म-देवा-

वर्णवादो दर्शनमोहस्य ॥ १३ ॥ कषायोदयात्तीव्रपरिणामश्चारित्रमोहस्य ॥ १४ ॥ बह्वारम्भ-परिग्रहत्वं नारकस्यायुषः ॥ १५ ॥ माया तैर्यग्योनस्य ॥ १६ ॥ अल्पारम्भ-परिग्रहत्वं मानुषस्य ॥ १ ॥ स्वभाव-मार्दवं च ॥ १८ ॥ निःशील-व्रतत्वं च सर्वेषाम् ॥ १९ ॥ सरागसंयम-संयमासंयमाकाम-निर्जराबालतपांसि दैवस्य ॥ २० ॥ सम्यक्त्वं च ॥ २१ ॥ योगवक्रता विसंवादनं चाशुभस्य नाम्नः ॥ २२ ॥ तद्विपरीतं शुभस्य ॥ २३ ॥ दर्शनविशुद्धिर्विनयसम्पन्नता-शील-व्रतेष्वनतीचारोऽभीक्ष्णज्ञानोपयोग-संवेगौ शक्तितस्त्याग-तपसी साधु-समाधिर्वैयावृत्यकरणमर्हदाचार्य-बहुश्रुत-प्रवचन-भक्तिरावश्यकापरिहाणिर्मार्गप्रभावना प्रवचन-वत्सलत्वमिति तीर्थकरत्वस्य ॥ २४ ॥ परात्म-निंदा-प्रशंसे सदसद्गुणोच्छादनोद्भावने च नीचैर्गोत्रस्य ॥ २५ ॥ तद्विपर्ययो नीचैर्वृत्त्यनुत्सेकौ चोत्तरस्य ॥ २६ ॥ विघ्नकरणमन्तरायस्य ॥ २७ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

हिंसाऽनृत-स्तेयाब्रह्म-परिग्रहेभ्यो विरतिर्व्रतम् ॥ १ ॥ देश-सर्वतोऽणु-महती ॥ २ ॥ तत्स्थैर्यार्थं भावनाः पञ्च पञ्च ॥ ३ ॥ वाङ्मनोगुप्तीर्यादाननिक्षेपण-समित्यालोकित-पान-भोजनानि पञ्च ॥४॥ क्रोध-लोभ-भीरुत्व-हास्य-प्रत्याख्यानान्यनुवीचि-भाषणं च पञ्च ॥ ५ ॥ शून्यागार-विमोचितावास-परोपरोधाकरण-भैक्ष्यशुद्धि-सधर्माविसंवादाः पञ्च ॥६॥

स्त्रीरागकथाश्रवण– तन्मोहरांगनिरीक्षण –पूर्वरतानुस्मरण– वृष्येष्टरस-स्वशरीरसंस्कारत्यागाः पञ्च ॥ ७ ॥ मनोज्ञामनोज्ञेन्द्रिय-विषय-राग-द्वेष-वर्जनानि पञ्च ॥ ८ ॥ हिंसादिष्विहामुत्रापायावद्यदर्शनम् ॥ ९ ॥ दुःखमेव वा ॥ १० ॥ मैत्री-प्रमोद-कारुण्य-माध्यस्थानि च सत्त्व-गुणाधिक-क्लिश्यमानाविनयेषु ॥११॥ जगत्काय-स्वभावौ वा संवेग-वैराग्यार्थम् ॥ १२ ॥ प्रमत्तयोगात्प्राण-व्यपरोपणं हिंसा ॥१३॥ असदभिधानमनृतम् ॥ १४ ॥ अदत्तादानं स्तेयम् ॥१५॥ मैथुनमब्रह्म ॥ १६ ॥ मूर्छा परिग्रहः ।१७॥ निःशल्यो व्रती ॥ १८ ॥ अगार्यनगारश्च ॥ १९ ॥ अणुव्रतोऽगारी ॥२०॥ दिग्देशानर्थदण्ड-विरति-सामायिक-प्रोषधोपवासोपभोग-परिभोग-परिमाणातिथि-संविभाग-व्रत-सम्पन्नश्च ॥२१॥ मारणान्तिकीं सल्लेखनां जोषिता ॥ २२ ॥ शङ्का-कांक्षा-विचित्सान्यदृष्टि-प्रशंसा-संस्तवाः सम्यग्दृष्टेरतीचाराः ॥२३॥ व्रत-शीलेषु पञ्च पञ्च यथाक्रमम् ॥ २४ ॥ बन्ध-वध-च्छेदातिभारारोपणान्नपान-निरोधाः ॥ २५॥ मिथ्योपदेश-रहोभ्याख्यान-कूटलेखक्रिया-न्यासापहार-साकारमन्त्रभेदाः ॥२६॥ स्तेनप्रयोग-तदाहृतादान-विरुद्धराज्यातिक्रम–हीनाधिकमानोन्मान–प्रतिरूपकव्यवहाराः ॥२७॥ परविवाहकरणेत्वरिका-परिगृहीतापरिगृहीतागमनानङ्गक्रीडा–कामतीव्राभिनिवेशाः ॥ २८ ॥ क्षेत्रवास्तु-हिरण्यसुवर्ण-धनधान्य-दासीदास-कुप्य-प्रमाणातिक्रमाः ॥२९॥ ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्व्यतिक्रम-क्षेत्रवृद्धि-

स्मृत्यन्तराधानानि ॥ २० ॥ आनयन-प्रेष्यप्रयोग-शब्द-रूपानुपात-पुद्गलक्षेपाः ॥२१॥ कन्दर्प-कौत्कुच्य-मौखर्या-समीक्ष्याधिकरणोपभोगपरिभोगानर्थक्यानि ॥२२॥ योग-दुःप्रणिधानानादर-स्मृत्यनुपस्थानानि ॥ ३३॥ अप्रत्यवेक्षिताप्रमार्जितोत्सर्गादान-संस्तरोपक्रमणानादर-स्मृत्यनुपस्थानानि ॥३४॥ सचित्त-सम्बन्ध-सम्मिश्राभिषव-दुःपक्वाहाराः ॥३५। सचित्त-निक्षेपापिधान परव्यपदेश-मात्सर्य-कालातिक्रमाः ३६। जीवित-मरणाशंसा-मित्रानुराग-सुखानुबन्ध-निदानानि ॥३७॥ अनुग्रहार्थं स्वस्यातिसर्गो दानम् ॥३८॥ विधि-द्रव्य-दातृ-पात्र-विशेषात्तद्विशेषः ॥ ३९ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

मिथ्यादर्शनाविरति-प्रमाद-कषाय-योगा बन्धहेतवः ।१। सकषायत्वाज्जीवः कर्मणो योग्यान् पुद्गलानादत्ते स बन्धः ॥२॥ प्रकृति-स्थित्यनुभाग-प्रदेशास्तद्विधयः ॥ ३॥ आद्यो ज्ञान-दर्शनावरण-वेदनीय-मोहनीयायुर्नाम-गोत्रान्तरायाः ।४। पञ्च-नव-द्व्यष्टाविंशति-चतुर्द्विचत्वारिंशद्-द्वि-पञ्च-भेदा यथा-क्रमम् ॥ ५ ॥ मति-श्रुतावधिमनःपर्यय-केवलानाम् ॥ ६ ॥ चक्षुरचक्षुरवधि-केवलानां निद्रा-निद्रानिद्रा-प्रचला-प्रचलाप्रचला-स्त्यानगृद्धयश्च ॥ ७ ॥ सदसद्वेद्ये ॥ ८ ॥ दर्शन-चारित्र मोहनीयाकषाय-कषायवेदनीयाख्यास्त्रि-द्वि-नव-षोडशभेदाः सम्यक्त्व-मिथ्यात्व-तदुभयान्यकषायकषायौ हास्य-रत्यरति-शोक-भय-जुगुप्सा-स्त्री-पुन्नपुंसक-वेदा अनन्तानुबन्ध्यप्रत्या-ख्यान-प्रत्याख्यान-संज्वलन-विकल्पाश्चैकशःक्रोध-मान-माया

लोभाः ॥ ६ ॥ नारक-तैर्यग्योन-मानुष-दैवानि ॥ १० ॥ गति-जाति-शरीराङ्गोपाङ्ग-निर्माण-बन्धन-संघात-संस्थान-संहनन-स्पर्श-रस-गन्ध-वर्णानुपूर्व्यगुरुलघूपघात-परघातातपोद्योतोच्छ्वास-विहायोगतयः प्रत्येकशरीर-त्रस-सुभग-सुस्वर-शुभ-सूक्ष्म-पर्याप्ति-स्थिरादेय-यशःकीर्ति-सेतराणि तीर्थकरत्वं च ॥ ११ ॥ उच्चैर्नीचैश्च ॥ १२ ॥ दान-लाभ-भोगोपभोग-वीर्याणाम् ॥ १३ ॥ आदितस्तिसृणामन्तरायस्य च त्रिंशत्सागरोपम-कोटीकोट्यः परा स्थितिः ॥ १४ ॥ सप्ततिर्मोहनीयस्य ॥ १५ ॥ विंशतिर्नाम-गोत्रयोः ॥ १६ ॥ त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाण्यायुषः ॥ १७ ॥ अपरा द्वादश-मुहूर्ता वेदनीयस्य ॥ १८ ॥ नाम-गोत्रयोरष्टौ ॥ १९ ॥ शेषाणामन्तर्मुहूर्ता ॥२०॥ विपाकोऽनुभवः ॥ २१ ॥ स यथानाम ॥ २२ ॥ ततश्च निर्जरा ॥ २३ ॥ नाम-प्रत्ययाः सर्वतो योग-विशेषात्-सूक्ष्मैक-क्षेत्रावगाह-स्थिताः सर्वात्म-प्रदेशेष्वनन्तानन्त-प्रदेशाः ॥ २४ ॥ सद्वेद्य-शुभायुर्नाम-गोत्राणि पुण्यम् ॥ २५ ॥ अतोऽन्यत्पापम् ॥ २६ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रेऽष्टमोध्यायः ॥ ८ ॥

आस्रव-निरोधः संवरः ॥१॥ स गुप्ति-समिति-धर्मानुप्रेक्षा-परीषहजय-चारित्रैः ॥२॥ तपसा निर्जरा च ॥ ३ ॥ सम्यग्योग-निग्रहो गुप्तिः ॥ ४ ॥ ईर्या-भाषैषणादाननिक्षेपोत्सर्गाः समितयः ॥५॥ उत्तम-क्षमा-मार्दवार्जव-शौच-सत्य-

संयम-तप-स्त्यागाकिञ्चन्य-ब्रह्मचर्याणि धर्मः ॥ ६ ॥ अनि-
त्याशरण-संसारैकत्वान्यत्वाशुच्यास्रवसंवरनिर्जरा-लोक-बोधि-
दुर्लभ-धर्मस्वाख्या-तत्त्वानुचिन्तनमनुप्रेक्षाः ॥ ७ ॥ मार्गाच्य-
वन-निर्जरार्थं परिषोढव्याः परीषहाः ॥ ८ ॥ क्षुत्पिपासा-
शीतोष्णदंशमशक-नाग्न्यारति-स्त्रीचर्या-निषद्या-शय्याक्रोश-वध
याचनालाभ-रोग-तृणस्पर्श-मल-सत्कारपुरस्कार-प्रज्ञाज्ञानादर्श-
नानि ॥९॥ सूक्ष्मसाम्परायच्छद्मस्थवीतरागयोश्चतुर्दश ।१०।
एकादश जिने ॥११॥ बादरसाम्पराये सर्वे ॥१२ ॥ज्ञानाव-
रणे प्रज्ञाज्ञाने ॥१३॥ दर्शनमोहान्तराययोरदर्शनालाभौ।१४।
चारित्र-मोहे नाग्न्यारति-स्त्री-निषद्याक्रोश-याचना-सत्कारपुर-
स्काराः ॥१५॥ वेदनीये शेषाः ॥ १६ ॥ एकादयो भाज्या
युगपदेकस्मिन्नैकोनविंशतेः ।१७। सामायिक-च्छेदोपस्थापना-
परिहारविशुद्धि-सूक्ष्मसाम्पराय-यथाख्यातमिति चारित्रम् ।१८।
अनशनावमौदर्य-वृत्तिपरिसंख्यान-रसपरित्याग-विविक्तशय्या-
सन--कायक्लेशा बाह्यं तपः ॥१९॥ प्रायश्चित्त-विनय-वैयावृत्त्य-
स्वाध्याय-व्युत्सर्ग-ध्यानान्युत्तरं ॥२०॥ नव-चतुर्दश-पंच-द्वि-
भेदा यथाक्रमं प्राग्ध्यानात् ॥ २१ ॥ आलोचन-प्रतिक्रमण-
तदुभयविवेकव्युत्सर्गतपश्छेद-परिहारोपस्थापनाः ।२२। ज्ञान-
दर्शन-चारित्रोपचाराः ॥२३॥ आचार्योपाध्याय-तपस्वि-शैक्ष-
ग्लान-गण-कुल-सङ्घ-साधु-मनोज्ञानाम् ॥२४॥ वाचना
नानुप्रेक्षाम्नाय-धर्मोपदेशाः ।२५। बाह्याभ्यन्तरोपध्योः॥२६॥

उत्तमसंहननस्यैकाग्रचिन्ता-निरोधो ध्यानमान्तर्मुहूर्तात् ॥२७॥ आर्त्त-रौद्र-धर्म्य-शुक्लानि ॥ २८ ॥ परे मोक्ष-हेतू ॥२९॥ आर्तममनोज्ञस्य संप्रयोगे तद्विप्रयोगाय स्मृति-समन्वाहारः ॥३०॥ विपरीतं मनोज्ञस्य ॥३१॥ वेदनायाश्च ॥ ३२ ॥ निदानं च ॥३३॥ तदविरत-देशविरत-प्रमत्तसंयतानाम्॥३४॥ हिंसानृत-स्तेय-विषयसंरक्षणेभ्यो रौद्रमविरत-देशविरतयोः ॥३५॥ आज्ञापाय-विपाक-संस्थान-विचयाय धर्म्यम् ॥३६॥ शुक्ले चाद्ये पूर्वविदः ॥३७॥ परे केवलिनः ॥३८॥ पृथक्त्वैकत्ववितर्क-सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति-व्युपरतक्रियानिवर्तीनि ॥ ३९ ॥ त्र्येकयोगकाययोगायोगानाम् ॥ ४० ॥ एकाश्रये सवितर्क-वीचारे पूर्वे ॥ ४१ ॥ अवीचारं द्वितीयम् ॥४२॥ वितर्कः श्रुतम् ॥ ४३ ॥ वीचारोऽर्थव्यञ्जन-योग-संक्रान्तिः ॥ ४४ ॥ सम्यग्दृष्टि-श्रावक-विरतानन्तवियोजक-दर्शनमोह-क्षपकोपशमकोपशान्त-मोहक्षपक-क्षीणमोह-जिनाःक्रमशोऽसंख्येयगुणा-निर्जराः ॥ ४५ ॥ पुलाक-बकुश-कुशील-निर्ग्रन्थ-स्नातका निर्ग्रन्थाः ॥ ३६ ॥ संयमश्रुत-प्रतिसेवना-तीर्थ-लिङ्ग-लेश्योपपाद-स्थान-विकल्पतः साध्याः ॥ ४७ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

मोहक्षयाज्ज्ञान-दर्शनावरणान्तराय-क्षयाच्च केवलम्॥१॥ बन्धहेत्वभाव-निर्जराभ्यां कृत्स्न-कर्म-विप्रमोक्षो मोक्षः ॥२॥ औपशमिकादि-भव्यत्वानां च ॥३॥ अन्यत्र केवलसम्यक्त्व-

ज्ञान-दर्शन-सिद्धत्वेभ्यः ॥ ४ ॥ तदन्तरमूर्ध्वं गच्छत्यालोकान्तात् ॥५॥ पूर्वप्रयोगासदङ्गत्वाद् बन्धच्छेदात्तथागतिपरिणामाच्च ॥६॥ आविद्धकुलालचक्रवद्व्यपगतलेपालाबूवदेरण्डबीजवदग्निशिखावच्च ॥७॥ धर्मास्तिकायाभावात् ॥८॥ क्षेत्र-काल-गति-लिङ्ग--तीर्थ-चारित्र-प्रत्येकबुद्ध-बोधित--ज्ञानावगाहनान्तर--संख्याल्पबहुत्वतः साध्याः ॥९॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

कोटिशतं द्वादशं चैव कोटयो लक्षाण्यशीतिस्त्र्यधिकानि चैव पञ्चाशदष्टौ च सहस्रसंख्यामेतद्श्रुतं पञ्चपदं नमामि ॥१॥

अरहंत भासियत्थं गणहरदेवेहिं गंथियं सव्वं ।
पणमामि भत्तिजुत्तो, सुदणाणमहोवयं सिरसा ॥२॥
अक्षर-मात्र-पद-स्वर-हीनं व्यञ्जन-संधि-विवर्जित-रेफम् ।
साधुभिरत्र मम क्षमितव्यं को नविमुह्यति शास्त्रसमुद्रे ।
दशाध्याये परिच्छिन्ने तत्त्वार्थे पठिते सति ।
फलं स्यादुपवासस्य भाषितं मुनिपुङ्गवैः ॥ ४ ॥
तत्त्वार्थसूत्रकर्त्तारं गृद्धपिच्छोपलक्षितम् ।
वंदे गणीन्द्रसंजातमुमास्वामिमुनीश्वरम् ॥ ५ ॥
जं सक्कइ तं कीरइ, जं पुण सक्कइ तहेव सद्दहणं ।
सद्दहमाणो जीवो पावइ अजरामरं ठाणं ॥ ६ ॥
तवयरणं वयधरणं, सञ्जमसरणं च जीवदयाकरणम् ।
अंते समाहिमरणं, चउविह दुक्खं णिवारेई ॥७॥

इति तत्त्वार्थसूत्रापरनाम तत्त्वार्थाधिगमोक्षशास्त्रं समाप्तम् ।

महावीराष्टकस्तोत्र।

शिखरिणी ।

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचितः, समं भांति ध्रौव्यव्यय-जनि-लसंतोऽन्तरहिताः । जगत्साक्षी मार्ग-प्रकटनपरो भानुरिव यो, महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥ १ ॥ अताम्रं यच्चक्षुः कमलयुगलं स्पंदरहितं, जनान्कोपापायं प्रकटयति वाभ्यंतरमपि । स्फुटं मूर्तिर्यस्य प्रशमितमयी वातिविमला । महावीर० ॥ २ ॥ नमन्नाकेंद्राली मुकुटमणिभाजालजटिलं, लसत्पादांभोजद्वयमिह यदीयं तनुभृतां । भवज्ज्वालाशात्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि । महावीर० ॥३॥ यदर्चाभावेन प्रमुदितमना दर्दुर इह, क्षणादासीत्स्वर्गी गुणगणसमृद्धः सुखनिधिः । लभंते सद्भक्ताः शिवसुखसमाज किमु तदा । महावीर० ॥ ४ ॥ कनत्स्वर्णाभासोऽप्यपगततनुर्ज्ञाननिवहो, विचित्रात्माप्येको नृपतिवरसिद्धार्थतनयः । अजन्मापि श्रीमान् विगतभवरागोद्भुतगतिः । महा० ॥ ५ ॥ यदीया वाग्गंगा विविधनयकल्लोलविमला, वृहज्ज्ञानांभोभिर्जगति जनतां या स्नपयति । इदानीमप्येषा बुधजनमरालैः परिचिता, महावीर० ॥६॥ अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवनजयी काम सुभटः, कुमारावस्थायामपि जिनबलाद्येन विजितः । स्फुरन्नित्यानंदप्रशमपदराज्याय स जिनः । महावीर० ॥७॥ महामोहातंकप्रशमनपराकस्मिकभिषक्, निरापेक्षो बंधुर्विदितमहिमा मंगलकरः । शरण्यः साधूनां भवभयभृतामुत्तमगुणो । महावीर० ॥८॥

महावीराष्टकं स्तोत्रं भक्त्या भागेंदुना कृतं ।
यः पठेच्छृणुयाच्चापि स याति परमां गतिम् ॥

महावीराष्टक स्तोत्र (भाषा)

चेतन अचेतन तत्त्व जेते, है अनन्त जहान में। उत्पाद व्यय ध्रुवमय मुकुरवत्, लसत जाके ज्ञान मे । जो जगतदरशी जगत में सन्मार्ग दर्शक रवि मनो। ते वीर स्वामीजी हमारे, नयन पथगामी बनो ॥१॥ टिमिकार बिन युग कमल लोचन, लालिमा तैं रहित हैं। बाह्य अन्तर कीं क्षमाको, भविजनो से कहत हैं। अति परम पावन शान्तिमुद्रा, जासु तन उज्ज्वल घनो । ते वीर स्वामीजी हमारे नयन पथगामी बनो ॥२॥ जिहिं स्वर्गवासी विपुल सुरपति नम्र तन वह नमत हैं। तिन मुकुटमणि के प्रभा मंडल पद्म पद में लसत है ॥ जिन मात्र सुमरन रूप जलसे, हनै भव आतप घनो, ते वीर स्वामीजी हमारे नयन पथगामी बनो ॥३॥ मन मुदित ह्वै मंडूक ने प्रभु पूजवे मनसा करी। तत्छन लही सुर सम्पदा, बहुऋद्धि गुणनिधि सों भरी ॥ जिहिं भक्ति सों सद्भक्तजन लहैं, मुक्तिपुर को सुख घनो। ते वीर स्वामीजी हमारे नयन पथगामी बनो ॥४॥ कंचन तपतवत ज्ञाननिधि हैं, तदपि ज्ञान वर्जित रहे । जो हैं अनेक तथापि इक, सिद्धार्थ सुत भव रहित है॥ जो वीतरागी गति रहित हैं, तदपि अद्भुत गति घनो। ते वीर स्वामीजी हमारे, नयन पथगामी बनो ॥५॥ जिनको बचन मय अमल सुरसरि, विवध, नय लहरैं धरैं। जो पूर्ण ज्ञान स्वरूप जल से, न्हवन भविजन को करे ॥ तामैं अजो लगि घने पंडित, हंस ही सोहत मनो। ते वीर स्वामीजी हमारे नयन पथगामी बनो ॥ ६ ॥ जाने जगत की जंतु जनता, करी स्ववश तमाम है। है वेग जाको अमिट ऐसो, विकट अतिभट काम है॥ ताको स्वबल से प्रौढवय में शान्ति शासन हित हनो । ते वीर स्वामीजी हमारे नयन पथगामी बनो ॥ ७ ॥ भयभीत भव मे साधुजन को शरण उत्तम गुण भरे। निस्वार्थ के ही जगत बांधव, विदित यश मंगल करे॥ जो

मोह रूपी रोग हनिवे वैद्यवर अद्भुत मनो। 'ते वीर स्वामीजी हमारे नयन पथगामी बनो ॥८॥

दोहा-महावीर अष्टक रच्यो, भागचन्द रुचि ठान।
पढ़ै सुनैं जो भाव सों, ते पावें निरवान॥

भक्तामर-स्तोत्र भाषा

[स्वर्गीय पण्डित हेमराजजी कृत]

दोहा—आदि पुरुष आदीश जिन, आदि सुविधिकरतार।
धरमधुरन्धर परमगुरु, नमों आदि अवतार॥ १॥

चौपाई १५ मात्र

सुरनतमुकुटरतन छबि करैं, अंतरपापतिमिर सब हरैं।
जिन पद बंदों मनवचकाय, भवजल पतित उद्धरन सहाय॥ १॥
श्रुतपारग इन्द्रादिकदेव, जाकी थुति कीनी कर सेव।
शब्दमनोहर अरथ विशाल, तिस प्रभु की बरनों गुणमाल॥ २॥
विबुधवंद्यपद मैं मतिहीन, होय निलज थुति-मनसा कीन ।
जलप्रतिबिंब बुद्ध को गहै, शशिमण्डल बालक ही चहै॥ ३॥
गुणसमुद्र तुम गुण अविकार, कहत न सुरगुरु पावैं पार।
प्रलयपवन उद्धत जलजन्तु, जलधि तिरै को भुज बलवन्तु॥ ४॥
सों मै शक्तिहीन थुति करूं, भक्तिभाववश कछु नहिं डरूं।
ज्यों मृग निजसुत पालन हेत, मृगपति सनमुख जाय अचेत॥ ५॥
मैं शठ सुधी हँसन को धाम, मुझ तव भक्ति बुलावै राम।
ज्यों पिक अम्बकली परभाव, मधुऋतु मधुर करै आराव॥ ६॥
तुम जस जंपत जन छिनमाहिं, जनमजनमके पाप नसाहिं।
ज्यों रवि उगै फटै ततकाल, अलिवत नील निशातमजाल॥ ७॥
तव प्रभावतै कहूँ विचार, होसी यह थुति जनमनहार।
ज्यों जल कमलपत्र पैं परैं, मुक्ताफल की दुति विस्तरैं॥ ८॥

तुम गुण महिमा हतदुखदोष, सो तो दूर रहो सुख पोष
पापविनाशक हैं तुम नाम, कमलविकाशी ज्यों रविधाम ॥ ९ ॥
नहिं अचम्भ जो होंहिं तुरन्त, तुमसे तुम गुण बरनत सन्त।
जो गरीब को आप समान, करे न सो निंदत धनवान ॥ १० ॥
इकटक जन तुमको अविलोय, और विषैं रति करै न सोय।
कोकरि क्षीर जलधिजलपान, क्षारनीर पीवै मतिमान ॥ ११ ॥
प्रभु तुम वीतराग गुणलीन, जिन परमाणु देह तुम कीन।
है तिनने हीं ते परमानु, यातैं तुम सम रूप न आनु ॥ १२ ॥
कहँ तुम मुख अनुपम अविकार, सुरनरनागनयनमनहार।
कहाँ चन्द्र मण्डल सकलंक, दिन मे ढाकपत्रसम रंक ॥ १३ ॥
पूरणचन्द्र ज्योति छबिवंत, तुमगुण तीन जगत लंघंत।
एकनाथ त्रिभुवन आधार, तिन विचरत को करे निवार ॥ १४ ॥
जो सुरतियविभ्रमआरम्भ, मन न डिग्यौ तुम कौन अचंभ।
अचल चलावे प्रलय समीर, मेरुशिखर डगमगे न धीर ॥ १५ ॥
धूम रहित बाती गतनेह, परकाशै त्रिभुवन घर येह।
वातगम्य नाही परचंड, आप दीप सम बलो अखण्ड ॥ १६ ॥
छिपहु न लुपहु राहुकी छाँहि, जगपरकाशक हो छिनमांहि।
घन अनवर्त्त दाह विनिवार, रवि तें अधिक धरो गुणसार ॥ १७ ॥
सदा उदित विदलिततममोह, विघटित मेघ राहु अविरोह।
तुम मुखकमल अपूरवचन्द, जगतविकाशी ज्योति अमंद ॥ १८ ॥
निशिदिन शशिरविको नहिं काम, तुव मुखचंद हरै तमधाम।
जो स्वभावतैं उपजै नाज, सजल मेघतैं कौनहु काज ॥ १९ ॥
जो सुवोध सोहै तुम मांहि, हरिहर आदिक में सो नांहि।
जो दुति महारतन मे होय, काचखण्ड पावै नहिं सोय ॥ २० ॥

नाराचछन्द—सराग देव देख मैं भला विशेष मानिया,
स्वरूप जाहि देख वीतराग तू पिछानिया।

कछू न तोहि देखके जहां तुही विशेखिया,
मनोग चित्तचोर और भूल हू न देखिया ॥ २१ ॥
अनेक पुत्रवंतिनी नितंबिनी सपूत है,
न तौ समान पुत्र और माततैं प्रसूत है।
दिशा धरंत तारिका अनेक कोटि को गिने,
दिनेश तेजवंत एक पूर्व ही दिशा जनै ॥२२॥
पुरान हो पुमान हो पुनीत पुन्यवान हो,
कहे मुनीश अन्धकार नाशको सुभान हो।
महंत तोहि जानके न होय वश्य कालके,
न और मोहि मोखपंथ देय तोहि टालके ॥२३॥
अनन्त नित्य चित्त के अगम्य रम्य आदि हो,
असंख्य सर्वव्यापि विष्णु ब्रह्म हो अनादि हो।
महेश कामकेतु योग-ईश योग-ज्ञान हो,
अनेक एक ज्ञानरूप शुद्ध संत मान हो ॥२४॥
तुही जिनेश बुद्ध है सुबुद्धि के प्रमानतैं,
तुही जिनेश शङ्करो जगत्त्रये विधानतैं।
तुही विधात है सही सुमोखपंथ धारतें,
नरोत्तमो तुही प्रसिद्ध अर्थके विचारतैं ॥२५॥
नमो करूं जिनेश तोहि आपदा निवार हो,
नमों करूं सुभूरि भूमिलोक के सिंगार हो।
नमो करूं भवाब्धिनीरराशिशोख हेतु हो,
नमो करूं महेश तोहि मोक्ष पंथ देतु हो ॥२६॥

चौपाई १५ मात्रा

तुमजिन पूरन गुणगण भरे, दोष गर्व करि तुम परिहरे।
और देवगण आश्रय पाय, सुपन न देखे तुम फिर आय ॥२७॥
तरु अशोकतर किरन उदार, तुम तन शोभित है अविकार।

मेघ निकट ज्यो तेज फुरंत, दिनकर दिपै ज्यों तिमिर निहंत ।।२८।।
सिहासन मणिकिरण विचित्र, तापर कञ्चनवरन् पवित्र ।
तुम तनु शोभित किरण विथार, ज्यो उदयाचल रवि तमहार ।।२६।।
कुन्द पुहुप सित चमर ढुरंत, कनक वरण तुम तन शोभंत ।
ज्यो सुमेरुतट निर्मल काति, झरना झरैं नीर उमगाति ।।३०।।
ऊंचे रहे सूरि दुति लोप, तीन छत्र तुम दिपैं अगोप ।
तीन लोक की प्रभुता कहै, मोती झालरसो छवि लहै ।।३१।।
दुंदुभि शब्द गहर गम्भीर, चहुँ दिशि होय तुम्हारे धीर ।
त्रिभुवनजन शिवसङ्गम करै, मानो जय जय रव उच्चरै ।।३२।।
मन्द पवन गंधोदक इष्ट, विविध कल्पतरु पुहुप सुवृष्ट ।
देव करैं विकसित दल सार, मानो द्विजपंकति अवतार ।।३३।।
तुमतन भामण्डल जिनचन्द, सब दुतिवत करत है मंद ।
कोटि संख रवि तेज छिपाय, शशि निर्मल निशि करै अछाय ।।३४।।
स्वर्ग मोक्ष मारग संकेत, परम धरम उपदेशन हेत ।
दिव्य वचन तुम खिरैं अगाध, सबभाषागर्भित हितसाध ।।३५।।

दोहा—विकसित सुबरन कमल दुति, नख दुति मिलि चमकाहि ।
तुमपद पदवो जहं धरै, तहं सुर कमल रचाहि ।।३६।।
जैसी महिमा तुम विषै, और धरैं नहि कोय ।
सूरज मे जो ज्योति है, नहि तारागण होय ।।३७।।

षटपद

मदअवलिप्तकपोल–मूल, अलिकुल झंकारैं,
तिन सुन शब्द प्रचंड, क्रोध उद्धत अति धारै ।
कालवरन विकराल, कालवत् सन्मुख आवै,
ऐरावत सो प्रबल, सकल जन भय उपजावै ।
देखि गयन्द न भय करैं, तुम पद महिमालीन ।
विपतिरहित सम्पत्तिसहित, वरतै भक्त अदीन ।।३८।।

अति मदमत्तगयंद, कुम्भथल नखन विदारै,
मोती रक्त समेत, डारि भूतल सिंगारे।
बांको दाढ विशाल, वदन मे रसना लोलै,
भीम भयानक रूप देखि, जन थरहर डोलै,
ऐसे मृगपति पगतलैं, जो नर आयो होय।
शरण गये तुम चरण की, बाधा करै न सोय ॥३६॥

प्रलयपवन कर उठी, आग जो तास पटंतर,
बमैं फुलिंगशिखा उतङ्ग पर जलै निरन्तर।
जगत समस्त निगल्ल, भस्म कर देगी मानों,
'तड़तड़ाहट दव अनल, जोर चहुँदिशा उठानों।
सो इक छिन में उपशमे, नाम नीर तुम लेत।
होय सरोवर परिणमे, विकसित कमल समेत ॥४०॥

कोकिलकंठ समान श्यामतन क्रोध जलंता।
रक्तनयन फुंकार, मार विष-कण उगलंता।
फण को ऊंचो करे, बेग ही सनमुख आया।
तव जन होय निशङ्क, देख फणपति को आया।
जो चापै निज पावते, व्यापै विष न लगार।
नागदमनि तुम नामकी, है जिनके आधार ॥४१॥

जिस रण माहि भयानक, रव कर रहे तुरङ्गम,
घन सम गज गरजाहि, मत्त मानो गिरि जङ्गम।
अति कोलाहल माहि, बात जहं नहीं सुनीजे,
राजन को परचंड, देख बल धीरज छीजे।
नाथ तिहारे नाम तैं, सो छिन मांहि पलाय।
ज्यों दिनकर परकाशतै, अन्धकार विनशाय ॥४२॥

मारे जहां गयन्द, कुम्भ हथियार विदारे,
उमगे रुधिर-प्रवाह, वेग जलसों विस्तारे,

होय तिरन असमर्थ, महाजोधा बलपूरे,
तिस रन मे जिन तोय, भक्त जे हैं नर सूरे।
दुर्जय अरिकुल जीत के, जय पावैं निकलङ्क।
तुम पदपङ्कज मन बसे, ते नर सदा निशङ्क ।।४३।।

नक्र चक्र मगरादि, मच्छकरि भय उपजावे,
जामे वड़वा अग्नि, दाहतैं नीर जलावे।
पार न पावे जास, थाह न लहिए जाकी,
गरजे अति गम्भीर, लहर की गिनति न ताकी।
सुख सों तिरैं समुद्र को, जे तुम गुण सुमराहि।
लोल कलोलन के शिखर, पार यान ले जाहि ।।४४।।

महा जलोदर रोग, भार पीडित नर जे है,
वात पित कफ कुष्ट, आदि जो रोग गहे है।
सोचत रहे उदास, नांहि जीवन की आशा,
अति घिनावनी देह, धरैं दुर्गन्ध निवासा।
तुम पद पङ्कज धूल को, जो लावें निज अङ्ग।
ते निरोग शरीर लहि, छिन मे होहि अनङ्ग ।।४५।।

पांव कंठ तें जकर बांध सांकल अति भारी,
गाढी बेडी पैर मांहि जिन जाघ विदारी।
भूख प्यास चिन्ता शरीर, दुख जे बिललाने,
शरण नांहि जिन कोय, भूप के बन्दीखाने ।।
तुम सुमरत स्वयमेवही, बन्धन सब खुल जांहि।
छिन मे ते सम्पति लहैं, चिन्ता भय विनसांहि ।।४६।।

महामत्त गजराज, और मृगराज दवानल,
फनपति रण परचंड, नीरनिधि रोग महाबल।
बन्धन ये भए आठ, डरपकर मानों नाशैं,
तुम सुमरत छिनमांहि, अभय थानक परकाशैं ।।

इस अपार संसार मे, शरण नाहि प्रभु कोय।
यातै तुम पद भक्त को, भक्ति सहाई होय ॥४७॥

यह गुणमाल विशाल, नाथ तुम गुणन संवारी,
विविध वर्णमय पुहुप, गूंथ मै भक्ति विथारी।
जे नर पहिरै कंठ भावना मन मे भावे,
मानतुङ्ग ते निजाधीन, शिव लक्ष्मी पावैं ॥

भाषा भक्तामर कियो, 'हेमराज' हितहेत।
जे नर पढ़ें सुभाव सौं, ते पावैं शिव खेत ॥४८॥

समाधि मरण छोटा

(चाल योगीरासा)

गौतम स्वामी बन्दो नामी मरण समाधि भला है।
मै कब पाऊं निशदिन ध्याऊ गाऊं वचन कला है।
देव धर्म गुरु प्रीति महा दृढ सात व्यसन नही जाने।
त्यागि बाईस अभक्ष सयमी बारह व्रत नित ठाने ॥ १ ॥
चक्की चूल्ही उखरी बुहारी पानी त्रस ना विरोधे।
बनिज करे पर द्रव्य हरे नही छहो करम इमि सोधे।
पूजा शास्त्र गुरुन की सेवा संयम तप चहुं दानी।
पर उपकारी अल्प अहारी सामायिक विधि ज्ञानी ॥ २ ॥
जाप जपे तिहुं योग धरे दृढ तन की ममता टारे।
अन्त समय वैराग्य सम्हारे ध्यान समाधि विचारे।
आग लगे अरु नाव जब डूबे धर्म विघन जब आवे ॥
चार प्रकार आहार त्यागि के मन्त्र सु मन मे ध्यावे ॥३॥
रोग असाध्य जरा बहु देखें कारण और निहारे।
बात बड़ी है जो बनि आवे भार भवन को डारे।

जो न बने तो घर मे रह करि सब सों होय निराला ।
मात पिता सुत त्रिय को सोंपे निज परिग्रह अहि काला ।।४।।
कुछ चैत्यालय कुछ श्रावक जन कुछ दुखिया धन देही ।
क्षमा क्षमा सबही सों कहिके मनकी शल्य हनेई ।
शत्रुन सो मिल मिल कर जोरे मैं बहु करी है बुराई ।
तुमसे प्रीतम को दुख दीने ते सब बकसो -भाई ।। ५ ।।
धन धरती जो मुख सो मांगे सो सब दे सन्तोषे ।
छहों काय के प्रानी ऊपर करुणा भाव विशेषे ।
ऊँच नीच घर बैठ जगह इक कुछ भोजन कुछ पय ले ।
दूधा धारी क्रम क्रम तज के छाछ अहार गहेले ।। ६ ।।
छाछ त्यागि के पानी राखे पानी तजि संथारा ।
भूमि मांहि थिर आसन मांडे साधर्मी ढिग प्यारा ।
जब तुम जानो यह न जपै है तब जिनवाणी पढ़िये ।
यों कहि मौन लियो संन्यासी पञ्च परम पद लहिये ।।७।।
चार अराधन मन मे ध्यावे बारह भावन भावे ।
दश लक्षण मन धर्म विचारे रत्नत्रय मन ल्यावे ।
पैंतिस सोलह षटपन चारो दुइइक वरण विचारे ।
काया तेरी दुख की ढेरी ज्ञान मई तूं सारे ।। ८ ।।
अजर अमर निज गुणसो पूरे परमानन्द सुभावे ।
आनन्द कन्द चिदानन्द साहब तीन जगतपति ध्यावे ।
क्षुधा तृषादिक होइ परीषह सहे भाव सम राखे ।
अतीचार पाच सब त्यागे ज्ञान सुधारस चाखे ।। ९ ।।
हाड मास सब सूख जाय जब धरम लीन तन त्यागे ।
अद्भुत पुण्य उपाय सुरग मे सेज उठे ज्यों जागे ।
तहा ते आवे शिव पद पावे विलसे सुक्ख अनन्तो ।
'द्यानत' यह गति होय हमारी जैन धरम जयवन्तो ।।१०।।

।। इति समाधिमरणं समाप्तम् ।।

समाधिमरण भाषा

बन्दौ श्री अररंत परमगुरु, जो सबको सुखदाई ।
इस जग मे दुख जो मै भुगते, सो तुम जानो राई ।।
अब मै अरज करूं प्रभु तुमसे, कर समाधि उर मांही ।
अन्त समय मे यह वर मांगूं, सो दीजे जग-राई ।। १ ।।

भव भवमे तनधार नया मै, भव भव शुभ सङ्ग पायो ।
भव भव मे नृपरिद्धि लई मै, मात पिता सुत थायो ।।
भव भव मे तन पुरुषतनों धर, नारी हू तन लीनों ।
भव भव मे मैं भयो नपुंसक, आतम गुण नहिं चीन्हों ।।२ ।।

भव भव मे सुरपदवी पाई, ताके सुख अति भोगे ।
भव भव मे गति नरकतनी धर, दुख पाये विधि योगे ।
भव भव मे तिर्यञ्च योनिधर, पायो दुख अति भारी ।
भव भव मे साधर्मीजको, संग मिल्यो हितकारी ।। ३ ।।

भव भव मे जिनपूजन कीनी, दान सुपात्रहिं दीनो ।
भव भव मे मै समवसरण मे, देखो जिनगुण भीनो ।।
एती वस्तु मिली भव भव मे, सम्यकगुण नहिं पायो ,
नहिं समाधियुत मरण कियो मै, तातैं जग भरमायो ।। ४ ।।

काल अनादि भयो जग भ्रमतै, सदा कुमरणहिं कीनों ।
एकबार हूँ सम्यकयुत मै, निज आतम नहिं चीनों ।।
जो निज पर को ज्ञान होय तो, मरण समय दुख कांई ।
देहि विनाशी मै निज भासी, ज्योति स्वरूप सदाई ।। ५ ।।

विषय कषायन के वश होकर, देह आपनो जान्यो ।
कर मिथ्या सरधान हिये बिच, आतम नाहि पिछान्यो ।।
यो कलेश हियधार मरणकर, चारो गति भरमायो ।
सम्यकदर्शन-ज्ञान-चरन ये हिरदे मे नाहि लायो ।। ६ ।।

अब या अरज करूं प्रभु सुनिये, मरण समय यह मागो।
रोगजनित पीडा मत होवे, अरु कषाय मत जागो॥
ये मुझ मरण समय दुखदाता, इन हर साता कीजे।
जो समाधियुत मरण होय मुझ, अरु मिथ्यामद छीजे॥ ७ ॥
यह तन सात कुधातमई है, देखत ही घिन आवै।
चर्म लपेटो ऊपर सोहै, भीतरु विष्टा पावै॥
अति दुर्गन्ध अपावनसों यह, मूरख प्रीति बढावै।
देह विनासी जिय अविनासी, नित्यस्वरूप कहावै॥ ८ ॥
यह तन जीर्ण कुटीसम आतम, यातैं प्रीति न कीजे।
नूतन महल मिले जब भाई, तब यामे क्या छीजे॥
मृत्यु होन से हानि कौन है, याको भय मत लावो।
समता से जो देह तजोगे, तो शुभतन तुम पावो॥ ९ ॥
मृत्यु मित्र उपकारी तेरो, इस अवसर के माही।
जीरण तन से देत नयो यह, या सम काहू नाही॥
या सेती इम मृत्यु समय पर, उत्सव अति ही कीजे।
क्लेश भावको त्याग सयाने, समता भाव धरीजे॥ १० ॥
जो तुम पूरव पुण्य किये है, तिनको फल सुखदाई।
मृत्यु मित्र बिन कौन दिखावे, स्वर्गसम्पदा भाई॥
रागरोष को छोड सयाने, सात व्यसन दुखदाई।
अन्तसमय मे समता धारो, पर भव पंथ सहाई॥११॥
कर्म महादुठ बैरी मेरो, तासेती दुख पावै।
तन पिंजरमे बन्द कियो मोहि, यासों कौन छुडावै॥
भूख तृषा दुख आदि अनेकन, इस ही तनमे गाढै।
मृत्युराज अब आय दयाकर, तनपिंजरसों काढै॥१२॥
नाना वस्त्राभूषण मैने, इस तनको पहराये।
गन्ध सुगन्धित अतर लगाये, षटरस असन कराये।

रात दिना मै दास होयकर, सेवकरी तनकेरी।
सो तन मेरे काम न आयो, भूल रह्यो निधि मेरी ॥१३॥
मृत्युरायको शरण पाय, तन नूतन ऐसो पाऊँ।
जामै सम्यक रतन तीन लहि आठो कर्म खपाऊँ॥
देखो तन सम और कृतघ्नी, नाहि सु या जगमाही।
मृत्यु समय मे येही परिजन, सबही हैं, दुखदाई ॥१४॥
यह सब मोह बढावनहारे, जियको दुर्गति दाता।
इनसे ममत निवारो जियरा, जो चाहो सुख साता॥
मृत्युकल्पद्रुम पाय सयाने, मांगो इच्छा जेती।
समता धरकर मृत्यु करो तो, पावो सम्पति तेती ॥१५॥
चौआराधन सहित प्राण तज, तौ या पदवी पावो।
हरि प्रतिहरि चक्री तीर्थेश्वर, स्वर्गमुक्ति मे जावो।
मृत्युकल्पद्रुम सम नहि दाता, तीनो लोक मंझारे॥
ताको पाय कलेश करो मत, जन्म जवाहर हारे ॥१६॥
इस तन मे क्या राचै जियरा, दिन-दिन जीरन हो है।
तेजकाति बल नित्य घटत है, या सम अथिर सु को है॥
पांचो इन्द्री शिथिल भई अब, स्वास शुद्ध नहि आवै।
तापर भी ममता नहि छोडै, समता उर नहि लावै ॥१७॥
मृत्युराज उपकारी जियको, तनसौ तोहि छुडावै।
नातर या तन बन्दीगृहमे, परयो परयो बिललावै॥
पुद्गल के परमाणु मिलकै, पिण्डरूपतन भासी।
याही मूरत मै अमूरती, ज्ञानजोति गुणवासी ॥१८॥
रोगशोक आदिक जो वेदन, ते सब पुद्गल लारे।
मैं तो चेतन व्याधि बिना नित, हैं सो भाव हमारे॥
या तनसो इस छेत्रसम्बन्धी, कारन आन बन्यो है।
खान पान दे याको पोष्यो, अब सम भाव ठन्यो है ॥१९॥

मिथ्यादर्शन आत्मज्ञान विन, यह तन अपनो मान्यो ।
इन्द्रीभोग गिने सुख मैने, आपो नाहि पिछान्यो ।।
तन विनशनतैं नाश जानि निज यह अयान दुखदाई ।
कुटुम्व आदि को अपनो जान्यो भूल अनादि छाई ।।२०।।
अव निज भेद जथारथ समझयो, मैं हूं ज्योतिस्वरूपी ।
उपजे विनसे सो यह पुद्गल, जान्यो याको रूपी ।।
इष्ट अनिष्ट जेते सुख दुख है, सो सव पुद्गल लागैं ।
मैं जव अपनो रूप विचारो, तव वे सव दुख भागैं ।।२१।।
बिन समता तनऽनंत धरे मे, तिनमे ये दुख पायो ।
शस्त्रघाततैं अनन्त वार मर, नाना योनि भ्रमायो ।।
बार अनन्तहि अग्नि माहि जर मूवो सुमति न लायो ।
सिह व्याघ्र अहिऽनन्त बार मुझ नाना दुःख दिखायो ।।२२।।
बिन समाधि ये दु.ख लहे मै अब उर समता आई ।
मृत्युराज को भय नहि मानो, देवे तन सुखदाई ।।
यातैं जब लग मृत्यु न आवे, तबलग जप तप कीजै ।
जपतप बिन इस जगके मांही, कोई भी नहि सीजे ।।२३।।
स्वर्गसंपदा तपसो पावे, तपसों कर्म नसावे ।
तपहीसो शिवकामिनिपति ह्वै, यासों तप चित लावे ।।
अब मै जानी समता बिन, मुझ कोऊ नाहि सहाई ।
मात पिता सुत बान्धव तिरिया, ये सब हे दुखदाई ।।२४।।
मृत्यु समय मे मोह करें ये तातैं आरत हो है ।
आरततैं गति नीची पावें, यो लख मोहतज्यो है ।।
और परिग्रह जेते जग मे, तिनसो प्रीति न कीजै ।
परभवमे ये संग न चालैं, नाहक आरत कीजे ।।२५।।
जे जे वस्तु लखत है ते पर, तिनसो नेह निवारो ।
परगति मे ये साथ न चाले, ऐसो भाव विचारो ।।

जो परभवमे संग चलै तुझ, तिनसे प्रीति सु कीजै।
पञ्च पाप तज समता धारो, दान चार विधि कीजै ॥२६॥
दश लक्षणमय धर्म धरो उर, अनुकम्पा उर लावो।
षोडशकारण नित्य चितवो, द्वादश भावना भावो॥
चारों परवी प्रोषध कीजै, अशन रातको त्यागो।
समता धर दुरभाव निवारो, संयमसों अनुरागो ॥२७॥
अन्तसमयमे ये शुभ भावहि, होवैं आनि सुहाई।
स्वर्ग मोक्षफल तांहि दिखावे, रिद्धि देहिं अधिकाई॥
खोटे भाव सकल जिय त्यागो, उरमे समता लाके।
जासेती गति चार दूर कर, बसो मोक्षपुर जाके ॥२८॥
मन थिरता करके तुम चिंतो, चौ आराधन भाई।
ये ही तारकों सुखकी दाता, और हितू कोउ नाही॥
आगे बहु मुनिराज भये है, तिन गहि थिरता भारी।
बहु उपसर्ग सहे शुभ भावन, आराधन उरधारी ॥२६॥
तिनमे कछुइक नाम कहूं मै, सुनो जिया चित लाके।
भावसहित अनुमोदे तासे दुर्गति होय न जाके॥
अरु समता निज उरमे आवै, भाव अधीरज जावे।
यों निशदिन जो उन मुनिवरको, ध्यान हिये बिच लावे ॥३०॥
धन्य धन्य सुकुमाल महामुनि, कैसे धीरज धारी।
एक श्यालनी युगबच्चयुत पांव भख्यो दुखकारी॥
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है मृत्यु महोत्सव बारी ॥३१॥
धन्य धन्य जु सुकौशल स्वामी, व्याघ्रीने तन खायो।
तो भी श्रीमुनि नेक डिगो नहि, आतमसों हित लायो॥
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है! मृत्यु महोत्सव बारी ॥३२॥

देखो गजमुनिके सिर ऊपर, विप्र अगिनि बहु बारी ।
शीश जलै जिमि लकड़ी तनको, तो भी नाहि चिगारी ।।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी ।
तौ तुमरे जिय कौन दुःख है, मृत्यु महोत्सव बारी ।।३३।।

सनत्कुमार मुनिके तनमे, कुष्टवेदना व्यापी ।
छिन्नभिन्न तन तासों हूवो, तब चित्यो गुण आपी ।।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी ।
तौ तुमरे जिय कौन दुःख है, मृत्युमहोत्सव बारी ।।३४।।

श्रेणिकसुत गङ्गामें डूब्यो, तब जिन नाम चितारचो ।
धर सलेखना परिग्रह छोड्यो, शुद्ध भाव उर धारचो ।।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी ।
तो तुमरे जिये कौन दुःख है ? मृत्युमहोत्सव बारी ।।३५।।

समन्तभद्र मुनिवर के तनमें क्षुधावेदना आई ।
ता दुखमे मुनि नेक न डिगियो, चित्यो निजगुण भाई ।।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी ।
तौ तुमरे जिय कौन दुःख है ? मृत्यमहोत्सव बारी ।।३६।।

ललितघटादिक तीस दोय मुनि, कौशाम्बीतट जानो ।
नदीमे मुनि बहकर डूबे, सो दुख उन नहि मानो ।।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी ।
तो तुमरे जिय कौन दुःख है ? मृत्युमहोत्सव बारी ।।३७।।

धर्मकोष मुनि चम्पानगरी, बाह्य ध्यान धर ठाडो ।
एक मासकी कर मर्यादा, तृषा दुःख सह गाढो ।।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित धारी ।
तौ तुमरे जियकौन दुःख है ? मृत्युमहोत्सव बारी ।।३८।।

श्रीदंतमुनिके पूर्व जन्मको, बैरी देव सु आके ।
विक्रिय कर दुख शीततनों, सो सह्यो साधु मनलाके।।

यह उपसर्ग सह्यो धर धिरता, आराधन चितधारी।
तौ तुमरे जिय कौन दुःख है ? मृत्युमहोत्सव बारी ॥३९॥
वृषभसेन मुनि उष्ण शिलापर, ध्यान धरयो मनलाई।
सूर्य घाम अरु उष्ण पवनकी, वेदन सहि अधिकाई॥
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी।
तौ तुमरे जिय कौन दुःख है ? मृत्युमहोत्सव बारी ॥४०॥
अभयघोष मुनि काकंदीपुर, महावेदना पाई।
बैरी चण्डने सब तन छेद्यो, दुख दीनो अधिकाई॥
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चित्त धारी।
तौ तुमरे जिय कौन दुःख है ? मृत्युमहोत्सव बारी ॥४१॥
विद्युतच्चरने बहु दुख पायो, तो भी धीर न त्यागी।
शुभभावन से प्राण तजे निज, धन्य और बड़भागी॥
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी।
तौ तुमरे जिय कौन दुःख है ? मृत्युमहोत्सव बारी ॥४२॥
पुत्र चिलाती नामा मुनिको, बैरीने तन घातो।
मोटे मोटे कीट पड़े तन, तापर निज गुण रातो।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी॥
तौ तुमरे जिय कौन दुःख है ? मृत्युमहोत्सव बारी ॥४३॥
दण्डकनामा मुनिकी देही, बाणन कर अति भेदी।
तापर नेक डिगे नहिं वे मुनि, कर्म महारिपु छेदी॥
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी।
तौ तुमरे जिय कौन दुःख है ? मृत्युमहोत्सव बारी ॥४४॥
अभिनन्दन मुनि आदि पाच सौ, घानि पेलि जु मारे।
तौ भी श्रीमुनि समता धारी, पूरव कर्म विचारे।
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी।
तौ तुमरे जिय कौन दुःख है ? मत्युमहोत्सव बारी ॥४५॥

चाणक मुनि गौंघर के मांही, मन्द अगनि परजाल्यो।
श्रीगुरु उर समभाव धारके, अपनो रूप सम्हाल्यो॥
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी।
तौ तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्युमहोत्सव बारी ॥४६॥
सात शतक मुनिवर ने पायो, हथनापुर मे जानो।
बलिब्राह्मणकृत घोर उपद्रव, सो मुनिवर नहि मानो॥
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी।
तौ तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्युमहोत्सव बारी ॥४७॥
लोहमयी आभूषण गढके, ताते कर पहराये।
पांचों पांडव मुनिके तनमे, तो भी नाहि चिगाये॥
यह उपसर्ग सह्यो धर थिरता, आराधन चितधारी।
तौ तुमरे जिय कौन दुःख है? मृत्युमहोत्सवबारी ॥४८॥

और अनेक भये इस जगमें, समता रसके स्वादी।
वे ही हमको हों सुखदाता, हरहैं टेव प्रमादी॥
सम्यक्-दर्शन ज्ञान चरन तप, ये आराधन चारो।
ये ही मोक्ष सुख के दाता, इन्हें सदा उर धारो॥
यो समाधि उरमाही लावो, अपनो हित जो चाहो।
तज ममता अरु आठो मदको, जोतिस्वरूपी ध्यावो॥
जो कोई नित करत पयानो, ग्रामान्तर के काजै।
सो भी शकुन विचारै नीके, शुभके कारण साजै ॥५०॥

मातादिक अरु सर्व कुटुम्ब सौ, नीको शकुन बनावे।
हलदी धनिया पुङ्गी अक्षत, दूब दही फल लावे॥
एक ग्रामके कारण एते, करैं शुभाशुभ सारे।
जब परगतिको करत पयानो, तउ नहिं सोचै प्यारे ॥५१॥
सर्व कुटुम्ब जब रोवन लागै, तोहि रुलावें सारे।
ये अपशकुन करैं सुन तोको, तू यों क्यो न विचारे।

अब परगति की चालत बिरियां, धर्मध्यान उर आनो ।
चारों आराधन आराधों, मोहतनों दुख हानो ।।५२।।
ह्वै निःशल्य तजो सब दुविधा, आतमराम सुध्यावो ।
जब परगति को करहु पयानो, परम तत्त्व उर लावो ।।
मोह जालको काट पियारे, अपनो रूप विचारो ।
मृत्यु मित्र उपकारी तेरी, यों उर निश्चय धारो ।।५३।।

दोहा—मृत्युमहोत्सव पाठको, पढो सुनो बुधिवान ।
सरधा धर नित सुख लहो, सूरचन्द शिवथान ।।
पञ्च उभव नव एक नभ, सबतें सो सुखदाय ।
आश्विन श्यामा सप्तमी, कह्यो पाठ मनलाय ।।

।। समाप्त ।।

बारह भावना मंगतराय कृत

दोहा

बन्दूं श्री अरहन्त पद, वीतराग विज्ञान ।
बरणुं बारह भावना, जगजीवनहित जान ।।

विश्नुपद छन्द

कहां गये चक्री जिन जीता, भरतखण्ड सारा ।
कहां गये वह रामरु लछमन, जिन रावन मारा ।।
कहां कृष्ण रुक्मिणि सतभामा, अरु संपति सगरी ।
कहां गये वह रङ्गमहल अरु, सुवरन की नगरी ।।२।।
नहीं रहे वह लोभी कौरव, जूझ मरे रन में ।
गये राज तज पांडव वनको, अगनि लगी तनमे ।।
मोहनींद से उठ रे चेतन, तुझे जगावन को ।
हो दयाल उपदेश करैं गुरु, बारह भावन को ।।२।।

अथिर भावना

सूरज चांद छिपै निकलै ऋतु फिर फिर कर आवै ।
प्यारी आयु ऐसी बीते, पता नहीं पावै ।।
पर्वतपतितनदी सरिता जल, बहकर नहिं हटता ।
स्वास चलत यों घटे काठ ज्यों, आरेसों कटता ।।४।।
ओसबूंद ज्यौं गलै धूपमे, वा अंजुलि पानी ।
छिन छिन यौवन छीन होत है, क्या समझै प्रानी ।।
इन्द्रजाल आकाश नगर सब, जगसम्पति सारी !
अथिर रूप संसार विचारो, सब नर अरु नारी ।।५।।

अशरण भावना

कालसिंहने मृगचेतन को, घेरा भव-वन मे ।
नही बचावनहारा कोई, यो समझो मन मे ।।
मन्त्र यन्त्र सेना धन सम्पति, राज पाट छूटे ।
वश नहिं चलता काल लुटेरा, काय नगरि लूटै ।।६।।
चक्ररतन हलधरसा भाई, काम नही आया ।
एक तीरके लगत कृष्णकी, विनश गई काया ।।
देध धर्म गुरु शरण जगतमे, और नही कोई ।
भ्रमसे फिरै भटकता चेतन, युंही उमर खोई ।।७।।

संसार भावना

जनममरन अरु जरा रोगमे, सदा दुखी रहता ।
द्रव्य क्षेत्र अरु कालभावभव, परिवर्त्तन सहता ।।
छेदन भेदन नारक पशुगति, बध बन्धन सहना ।
रागउदयसे दुख सुरगतिमे, कहां सुखी रहना ।।८।।
भोगि पुण्यफल हो इकइन्द्री, क्या इसमे लाली ।
कुतवाली दिन चार वही फिर, खुरपा अरु जाली ।।

मानुषजन्म अनेक विपतिमय, कहीं न सुख देखा।
पञ्चमगति सुख मिलै, शुभाशुभका मेटा लेखा ॥६॥

एकत्व भावना

जन्मै मरै अकेला चेतन, सुखदुख का भोगी।
और किसीका क्या इकदिन यह, देह जुदी होगी॥
कमला चलत न पैंड जाय, मरघट तक परिवारा।
अपने अपने सुखको रोवै, पिता पुत्र दारा ॥१०॥
ज्यों मेले मे पंथीजन मिलि, नेह फिरै धरते।
ज्यों तरवरपै रैन बसेरा, पंछी आ करते।
कोस कोई दो कोस कोई उड फिर थक थक हारे।
जाय अकेला हंस संगमे, कोई न पर मारे ॥११॥

भिन्न भावना

मोहरूप मृगतृष्णा जगमे, मिथ्या जल चमकै।
मृग चेतन नित भ्रम में उड उठ, दौडै थक थककै।
जल नहिं पावै प्राण गमावै, भटक भटक मरता॥
वस्तु पराई मानै अपनी, भेद नही करता ॥१२॥
तू चेतन अरु देह अचेतन, यह जड़ तू ज्ञानी।
मिलै अनादि यतनतै बिछुड़ै ज्यों पय अरु पानी॥
रूप तुम्हारा सबसों न्यारा, भेद ज्ञान करना।
जौलों पुरुष थकै न तौलों, उद्यमसों चरना ॥१३॥

अशुचि भावना

तू नित पोखै यह सूखै, ज्यों धोवै त्यों मैली।
निशदिन करै उपाय देहका, रोगदशा फैली॥
मात-पिता-रज-वीरज मिलकर, बनी देह तेरी।
मांस हाड नश लहू राधकी, प्रकट व्याधि घेरी ॥१४॥

काना पौडा पडा हाथ यह, चूसै तो रोवै।
फलै अनन्त जु धर्म ध्यानकी, भूमिविषै बोवै॥
केसर चन्दन पुष्प सुगन्धित, वस्तु देख सारी।
देह परसते होय अपावन, निशदिन मल जारी ॥१५॥

आस्रव भावना

ज्यों सरजल आवत मोरी त्यों, आस्रव कर्मन को।
दर्वित जीव देश गहे जब पुद्गल भरमनको ॥
भावति आस्रवभाव शुभाशुभ, निशदिन चेतन को
पाप पुण्य के दोनो करता, कारण बन्धन को ॥१६॥
पन मिथ्यात योग पन्द्रह, द्वादश अविरत जानों।
पञ्चरु बीस कषाय मिले, सब सत्तावन मानौ॥
मोहभाव की ममता टारै, पर परणत खोते।
करे मोखका यतन निरास्रव, ज्ञान जनी होते ॥१७॥

संवर भावना

ज्यों मोरी में डाट लगावैं, तब जल रुक जाता।
त्यो आस्रव को रोकै संवर, क्यों नहिं मन लाता।
पञ्चमहाव्रत समिति गुप्तिकर, वचन काय मनको।
दशविधधर्म परीषह बाइस, बारह भावनको ॥१८॥
यह सब भाव सतावन मिलकर, आस्रव को खोते।
सुपन दशा से जागो चेतन, कहां पड़े सोते ॥
भाव शुभाशुभ रहित, शुद्ध भावन संवर पावै।
डांड लगत यह नाव पड़ी, मझधार पार जावै ॥१९॥

निर्जरा भावना

ज्यों सरवर जल रुका सूखता, तपन पड़ै भारी।
संवर रोके, कर्म निर्जरा ह्वै सोखन हारी ॥

उदय भोग सविपाक समय, पकजाय आम डाली।
दूजो है अविपाक पकावै, पालविषै मालो ॥२०॥
पहलो सबके होय नहीं, कुछ सरै काम तेरा।
दूजो करै जु उद्यम करके, मिटै जगतफेरा॥
संवर सहित करो तप प्रानी, मिलै मुक्ति राणी।
इन दुलहिन की वही सहेली, जानै सब ज्ञानी ॥२१॥

लोक भावना

लोक अलोक अकाश मांहि थिर, निराधार जानो।
पुरुषरूप कर-कटी भये षट्, द्रव्यनसों मानो॥
इसका कोई न करता हरता, अमिट अनादी है।
जीवरु पुद्गल नाचै यामै, कर्म उपाधी है ॥२२॥
पाप पुन्यसों जीव जगतमे नित सुख दुख भरता।
अपनी करनी आप भरै शिर,-औरन के धरता॥
मोहकर्म को नाश मेटकर, सब जगकी आसा।
निज पदमे थिर होय लोकके, शीश करो बासा ॥२३॥

बोधिदुर्लभ भावना

दुर्लभ है निगोद से थावर, अरु त्रसगति प्रानी।
नरकाया को सुरपति तरसै, सो दुर्लभ प्रानी॥
उत्तम देश सुसङ्गति दुर्लभ, श्रावककुल पाना।
दुर्लभ सम्यक दुर्लभ संयम, पञ्चम गुणठाना ॥२४॥
दुर्लभ रत्नत्रय आराधन, दीक्षा का धरना।
दुर्लभ मुनिवर को व्रत पालन, शुद्धभाव करना॥
दुर्लभ ते दुर्लभ है चेतन, बोधि ज्ञान पावै।
पाकर केवल ज्ञान नहीं, फिर इस भव में आवै ॥२५॥

धर्म भावना

हो सुछन्द जग पाप करै, सिर करता के लावै।
कोई छिनक कोई करता से, जगमें भटकावै ॥२६॥

वीतराग सर्वज्ञ दोष विन, श्रीजिन की वानी।
सप्त तत्त्वका वर्णन जामै, सबको सुखदानी।।
इनका चितवन बार बार कर, श्रद्धा उर धरना।
'मंगत' इसी जतनतैं इकदिन, भवसागर तरना।।२७।।

।। इति सुलतानपुर निवासी मङ्गतरायजी कृत बारह भावना ।।

बारह भावना

(भूधरदास कृत)

राजा राणा छत्रपति, हथियन के असवार। मरना सबको एक दिन, अपनी अपनी बार।। १ ।। दल बल देवी देवता, मात पिता परिवार। मरती बिरिया जीवको, कोई न राखनहार।।२।। दाम बिना निर्धन दुखी, तृष्णा वश धनवान। कही न सुख संसार मे सब जग देखो छान।। ३ ।। आप अकेला अवतरे, मरे अकेला होय। यूं कब हू इस जीवका, साथी सगा न कोय।। ४ ।। जहां देह अपनी नही, तहां न अपना कोय। घर सम्पति पर प्रगटये, पर है परिजन लोय।। ५ ।। दिपे चाम चादर मढो, हाड पीजरा देह। भीतर या सम जगत मे, और नही घिनगेह।।६।।

सोरठ—मोह नीदके जोर, जगवासी घूमे सदा। कर्मचोर चहुं ओर सरवस लूटे सुध नहीं।। ७ ।। सतगुरु देय जगाय, मोहनीद जब उपशमे। तब कुछ बने उपाय, कर्मचोर आवत रुके।।८।।

दोहा—ज्ञान दीप तप तेल भर, घर सोधै भ्रम छोर। याविधि बिन निकसे नही, बैठे पूर्व चोर।।९।। पञ्चमहाव्रत सञ्चरण, सुमति पञ्च परकार। प्रबल पञ्च इन्द्री विजय, धार निर्जरा सार।।१०।। चौदह राजु उतङ्ग नभ, लोक पुरुष संठान। तामे जीव अनादि से, भरमत है बिन ज्ञान।।११।। याचे सुरतरु देय सुख, चितन चिन्ता

रैन। बिन याचे बिन चितवे, धर्म सकल सुख दैन ॥१२॥ धनकन कञ्चन राजसुख, सर्व सुलभकर जान। दुर्लभ है संसारमे, एक यथारथ ज्ञान ॥ १३ ॥

इति सम्पूर्णम्

श्री चौबीस तीर्थङ्करों के चिह्न।

वृषभनाथ का 'वृषभ' जु जान। अजितनाथ के 'हाथी' मान ॥
सभवजिनके 'घोड़ा' कहा। अभिनन्दनपद 'बन्दर' लहा ॥१॥
सुमतिनाथ के 'चकवा' होय। पद्मप्रभ के 'कमल' जु जोय ॥
जिनसुपास के 'सथिया' कहा। चन्द्रप्रभ पद 'चन्द्र' जु लहा ॥२॥
पुष्पदन्त पद 'मगर' पिछान। 'कल्पवृक्ष शीतल पद मान ॥
श्री श्रेयास पद 'गेडा' होय। वासुपूज्य के 'भैंसा' जोय ॥३॥
विमलनाथपद 'शूकर' मान। अनन्तनाथके 'सेही' जान। धर्म-
नाथ के 'वज्र' कहाय। शातिनाथ पद 'हिरन' लहाय ॥४॥
कुन्थुनाथके पद 'अज' चीन। अरजिनके पदचिह्न जु 'मीन' ॥
मल्लिनाथ पद 'कलश' कहा। मुनिसुव्रत के 'कछुआ' लहा ॥५॥
'लालकमल' नमिजिन के होय। नेमिनाथ–पद 'शङ्ख' जु जोय ॥
पार्श्वनाथ के 'सर्प' जु कहा। वर्द्धमान पद सिंह' हि लहा ॥६॥

★ मेरी द्रव्य पूजा ★

[पं० जुगलकिशोरजी मुख्तार कृत]

कृमिकुल कलित नीर है जिसमे मच्छ कच्छ मेढक फिरते।
हैं मरते औ वहीं जनमते, प्रभो मलादिक भी करते ॥
दूध निकालें लोग छुडाकर, बच्चे को पीते पीते।
है उच्छिष्ट अनीतिलब्ध यो, योग तुम्हारे नहिं दीखे ॥१॥
दही घृतादिक भी वैसे है कारण उनका दूध यथा।

फूलों को भ्रमरादिक सूंघे, वे भी है उच्छिष्ट तथा ॥
दीपक तो पतङ्ग कालानल, जलते जिनपर कीट सदा।
त्रिभुवन सूर्य, आपको अथवा दीप दिखाना नहीं भला ॥२॥
फल मिष्टान्न अनेक यहां पर, उनमे ऐसा एक नही।
मलप्रिया मक्खी ने जिसको, आकर प्रभुवर छुआ नही ॥
यो अपवित्र पदार्थ अरुचिर, तू पवित्र सब गुण घेरा।
किस विध पूजूं क्या हि चढाऊं, चित्त डोलता है मेरा ॥३॥
औ आता है ध्यान तुम्हारे, क्षुधा तृषा का लेश नही।
नाना रस युत अन्न पान का, अतः प्रयोजन रहा नही ॥
नहिं बाछा न विनोद भाव नहि, राग अशङ्का पता कही।
इससे व्यर्थ चढाना होगा, औषध सम जब रोग नही ॥४॥
यदि तुम कहो रत्न वस्त्रादिक, भूषण क्यों न चढाते हो।
अन्य सदृश पावन है अर्पण, करते क्यो सकुचाते हो ॥
तो तुमने निःसार समझ जब, खुशी खुशी उनको त्यागा।
हो वैराग्य-लीनमति स्वामिन् ! इच्छा का तोडा तागा ॥५॥
तब क्या तुम्हे चढाऊं वे ही, करूं प्रार्थना ग्रहण करो।
होगी यह तो प्रकट अज्ञता, तव स्वरूप की सोच करो ॥
मुझे धृष्टता दीखे अपनी, और अश्रद्धा बहुत बडी।
हेय तथा सत्यक्त वस्तु यदि, तुम्हे चढाऊं घडी घड़ी ॥६॥
इससे युगल हस्त मस्तक पर, रखकर नम्रीभूत हुआ।
भक्ति सहित मै प्रणमूं तुमको, बार बार गुणलीन हुआ ॥
संस्तुति शक्ति समान करूं औ, सावधान हो नित तेरी।
काय वचनकी यह परिणति ही, अहो द्रव्य पूजा मेरी ॥७॥
भाव भरी इस पूजा से ही, होगा आराधन तेरा।
होगा तव सामीप्य प्राप्त औ, तभी मिटेगा जग फेरा ॥
तुझमे मुझमे भेद रहेगा, नही स्वरूप से तब कोई।
ज्ञानानन्द कला प्रकटेगी, थी अनादि से जो खोई ॥८॥

अथ लघुसहस्रनाम स्तोत्रम् ।

नमस्त्रैलोक्य-नाथाय, सर्वज्ञाय महात्मने ।
वक्ष्ये तस्यैव नामानि, मोक्ष-सौख्याभिलाषये ॥१॥
निर्मलः शास्वतो शुद्धो, निर्विकारो निरामयः ।
निःशरीरो निरातङ्को शुद्ध सूक्ष्मो निरञ्जनः ॥२॥
निष्कलङ्को निरालम्बो, निर्ममो निर्मलोत्तमः ।
निर्भयो निरहंकारो निर्विकारो निरुक्तयः ॥३॥
निर्दोषो निरुजः शान्तो निर्भयो निर्ममः शिवः ।
निस्तरङ्गो निराकारो निःकर्मो निकलः प्रभूः ॥४॥
निर्वादो निरूपज्ञानी निरागो निर्धनो जिनः ।
निःशब्दो प्रतिमश्रेष्ठो उत्कष्टो ज्ञान-गोचरः ॥५॥
नि-सङ्गो प्राप्त-कैवल्यो नैष्ठिकः शब्द-वर्जितः ।
अनघो महापूतात्मा जगत्-शिखर-शेखरः ॥६॥
नि.शब्दो गुण-सम्पन्नः पापताप-प्रणाशनः ।
सोपयोगो शुभं प्राप्तः कर्मद्योत-बलावहः ॥७॥
अजरो अमरो सिद्धः अर्चिता अक्षयो विभुः ।
अमूर्तो अच्युतो ब्रह्मः विष्णुरीशः प्रजापतिः ॥८॥
अनिद्यो विश्वनाथश्च अजो अनुपमो भवः ।
अप्रमेयो जगन्नाथः बोधरूपो जिनात्मकः ॥९॥
अव्ययो सकलाराध्यो निष्पन्नो ज्ञानलोचनः ।
अछेद्यो निर्मलो नित्य. सर्व-संकल्प-वर्जितः ॥१०॥
अजयो सर्वतोभद्रः नि.कषायी भवान्तकः ।
विश्वनाथः स्वयंबुद्धः वीतरागो जिनेश्वरः ॥११॥
अन्तको सहजानन्दः आवागमन गोचरः ।
असाध्य शुद्धचैतन्यः कर्मनोकर्म-वर्जितः ॥१२॥
अन्तको विमलज्ञानी निष्पृहो निःप्रकाशकः ।

कर्मजितो महात्मानम् लोकत्रय-शिरोमणिः ॥१३॥
अव्यावाधो वरः शम्भू विश्ववेदी पितामह ।
सर्वभूत-हितोदेवः सर्वलोक-शरण्यकः ॥१४॥
आनन्दरूपो चैतन्यो भगवान् त्रिजगद्गुरुः ।
अनन्तानन्तधी शक्तिस्तूतरव्यक्ता व्ययात्मकः ॥१५॥
अष्टकर्म-विनिर्मुक्तो सप्तधातु-विवर्जितः ।
गौरवादयस्त्रयो दूर सर्वज्ञानादि-संयुतः ॥१६॥
अभवः प्राप्त-केवल्यो निर्वाणो निरूपेक्षिकः ।
निकलो केवलज्ञानी मुक्तिसौख्य-प्रदायिकः ॥१७॥
अनामयो महाराध्यो वरदो ज्ञान पावनः ।
सर्वो साश्वत सुखावाप्तः जिनेन्द्रो मुनि-संस्तुतः ॥१८॥
अगुनः परमज्ञानी विश्वतत्त्व-प्रकाशकः ।
प्रबुद्धो भगवान्नाथ ! प्रशस्त-पुण्यकारकः ॥१६॥
शङ्करः सुगतो रुद्र सर्वज्ञो मदनान्तकः ।
ईश्वरो भुवनाधीशो सचित्तो पुरुषोत्तमः ॥२०॥
सद्योजात महात्मनं विमुक्तो मुक्तिवल्लभः ।
योगीन्द्रोऽनादि संसिद्धो निरहो ज्ञानगोचरः ॥२१॥
सदाशिव. चतुर्वक्त्रः सत्य सौख्य त्रिपुरान्तकः ।
त्रिनेत्रास्त्रिजगत् पूज्यः अष्टमूर्त्तिः कल्याणकः ॥२२॥
सर्वसाधु जनैर्वंद्यः सर्वपाप-विवर्जितः ।
सर्वदेवाधिको देवः सर्वभूत-हितंकरः ॥२३॥
सर्वसाधू स्वयंवेद्यो प्रसिद्धो पापनाशन. ।
चिन्मात्रः चिदानन्दः चैतन्यो चैतवैभवः ! ॥२४॥
सकलातिशयो देवः मुक्तिस्थो महतामहः ।
मुक्ति कार्यय सन्तुष्टो निरागो परमेश्वरः ॥२५॥
महादेवो महावीरो महा-मोह-विनाशकः ।
महाभावो महोदासी महामुक्ति प्रदायकः ॥२६॥

महाज्ञानी महायोगी महातपो महात्मयः ।
महाधिको महावीर्यो महापती पदस्थितः ॥२७॥
महापूज्यो महावन्द्यो महाविघ्न–विनाशकः ।
महासौख्यो महापुम्सो महामहिममहाच्युतः ॥२८॥
मुक्तामुक्तिर्निरोधो च एकानेकविनिश्चलः ।
सर्वद्वन्द्व-विनिर्मुक्तो सर्व लोक आराधकः ॥२९॥
महासूरो महाधीरो महादुःख–विनाशकः ।
महामुक्तो महावीरो महाह्लदो महागुरुः ॥३०॥
निर्मोही मारविध्वंसी निष्कामो विषयच्युतः ।
भगवन्तो गतभ्रान्तो शान्ति कल्याणकारकः ॥३१॥
परमात्मा परमानन्द परं परम आत्मकः ।
परमोजः परम तेजः परमधाम परममहः ॥३२॥
प्रसूतोऽनन्त विज्ञान. साक्षात् निर्वाण संस्तुतः ।
नाकृतिर्नाक्षरोऽवर्णः व्योमरूपो जितात्मकः ॥३३॥
व्यक्ताव्यक्त रसद्बोधः संसारच्छेदकारकः ।
नरवन्द्यो महाराध्य कर्मजित् धर्मनायकः ॥३४॥
बोधयन् सुजगद्वन्द्यो विश्वात्मनरकान्तकः ।
स्वयम्भू भव्यपूज्यात्मा पुनीतोविभवस्तुतः ॥३५॥
वर्णातीतो महातीतो रूपातीतो निरञ्जनः ।
अनन्तज्ञान सम्पन्नः देवदेवो सनायकः ॥३६॥
वरेण्य भवविध्वंशी योगिना ज्ञानगोचरः ।
जन्ममृत्युजरातंको सर्वविघ्नहरो हरः ॥३७॥
विश्वदृक् भव्यसरवन्द्य पवित्रो गुणसागरः ।
प्रसन्न परमाराध्यो लोकालोक प्रकाशकः ॥३८॥
रत्नगर्भो जगत्स्वामी इन्द्रवन्द्य सुरार्चितः ।
निः प्रपञ्चो निरातङ्को निःशेष क्लेशनाशकः ॥३९॥

लोकेशो लोक-संसेव्यो लोकालोक-प्रकाशकः ।
लोकोत्तमो नृलोकेशो लोकाग्रशिखरस्थित. ॥४०॥
नामाष्टक सहस्राणि ये पठन्ति पुन. पुनः ।
ते निर्वाणपदं यांति मुच्यन्ते नाम संशय. ॥४१॥

॥ इति लघुसहस्रनाम सम्पूर्णम् ॥

श्री जिन-सहस्रनाम स्तोत्रम् ।

स्वयंभुवे नमस्तुभ्यमुत्पाद्यात्मानमात्मनि । स्वात्मन्येव तथोद्भूतवृत्तयेऽचित्यवृत्तये ॥१॥ नमस्ते जगता पत्ये लक्ष्मीभर्त्रे नमोस्तुते । विदावर नमस्तुभ्यं नमस्ते वदतांवर ॥२॥ कर्मशत्रुहन देवमामनति मनीषिण । त्वामानमत्सुरेन्मौलिभालाभ्यर्चितक्रमम् ॥३॥ ध्यानदुर्घणनिर्भिन्नघनघातिमहातरुः । अनतभवसंतानजयादासीरनन्तजित् ॥४॥ त्रैलोक्यनिर्जयावाप्त-दुर्दर्पमतिदुर्जयं । मृत्युराजं विजित्यासोज्जन्ममृत्युञ्जयो भवान् ॥५॥ विधुताशेषसंसारबंधनोभव्यबाधव. । त्रिपुरारिस्त्वमेवासि जन्ममृत्युजरातकृत् ॥६॥ त्रिकालविजयाशेषतत्त्वभेदात् त्रिधोत्थितं । केवलाख्यं दवच्चक्षुस्त्रिनेत्रोसि त्वमोशिता ॥७॥ त्वामधकातकं प्राहुर्मोहाधासुरमर्द्दनात् । अर्द्धन्ते नारयो यस्मादर्धनारीश्वरोऽस्यतः ॥८॥ शिव. शिवपदाध्यासाद् दुरितारिहरो हरः । शङ्कर. कृतशं लोके शंभवस्त्वं भवन्सुखे ॥९॥ वृषभोसि जगज्ज्येष्ठ पुरु पुरुगुणोदयैः । नाभेयो नाभिसंभूतेरिक्ष्वाकुकुलनदनः ॥१०॥ त्वमेकः पुरुषस्कधस्त्वं द्वे लोकस्य लोचने । त्वं त्रिधा बुद्धसन्मार्गस्त्रिज्ञस्त्रिज्ञानधारकः ॥११॥ चतुःशरण-मागल्यमूर्तिस्त्व चतुरस्रधोः । पञ्चब्रह्ममयो देव पावनस्त्वं पुनीहि मां ॥१२॥ स्वर्गावतरणे तुभ्यं सद्योजातात्मने नमः । जन्माभिषेकवामाय वामदेव नमोस्तु ते ॥१३॥ सन्निष्क्रांतावघोराय परं प्रशममीयुषे । केवलज्ञानसंसिद्धावीशानाय नमोस्तुते ॥१४॥ पुरस्तत्पुरुषत्वेन विमुक्तपदभागिने । नमस्तत्पुरुषावस्था भाविनो तेऽद्य विभ्रते

।।१५।। ज्ञानावरणनिर्ह्लासान्नमस्तेऽनन्तचक्षुषे । दर्शनावरणोच्छेदान्नमस्ते विश्वदृश्वने ।।१६।। नमो दर्शनमोहघ्ने क्षायिकामलदृष्टये । नमश्चारित्रमोहघ्ने विरागाय महौजसे ।।१७।। नमस्तेऽनन्त-वीराय नमोऽनन्तसुखात्मने । नमस्तेऽनन्त-लोकाय लोकालोकविलोकिने ।।१८ नमस्तेऽनन्त-दानाय नमस्तेऽनन्त-लब्धये । नमस्तेऽनन्त-भोगाय नमोऽनन्तोपभोगिने ।।१६।। नमः परम-योगाय नमस्तुभ्यमयोनये ! नम. परम-पूताय नमस्ते परमर्षये ।।२०।। नमः परम विद्याय नमः परमतच्छिदे । नम. परमतत्त्वाय नमस्ते परमात्मने ।।२१।। नमः परमरूपाय नमः परमतेजसे । नमः परममार्गाय नमस्ते परमेष्ठिने ।।२२।। परमर्द्धिजुषे धाम्ने परमज्योतिषे नमः ! नमः पारेतमःप्राप्तधाम्ने परतरात्मने ।। २३ ।। नम क्षीणकलङ्काय क्षीणबंध नमोऽस्तुते । नमस्ते क्षीणमोहाय क्षीणदोषाय ते नमः ।।२४।। नम सुगतये तुभ्यं शोभनां गतिमीयुषे । नमस्तेतीद्रियज्ञानसुखायादिन्द्रियात्मने ।।२५।। कायबन्धननिर्मोक्षादकायाय नमोस्तुते । नमस्तुभ्यमयोगाय योगिनामधियोगिने ।।२६।। अवेदाय नमस्तुभ्यमकषायाय ते नमः । नम. परमयोगीन्द्रवन्दिताघ्रिद्वयाय-ते ।।२७।। नम. परमविज्ञान नमः परमसयम. । नम परमदृग्दृष्टपरमार्थाय ते नमः ।।२८।। नमस्तुभ्यमलेश्याय शुक्लेश्याशकस्पृशे । नमो भव्येतरावस्थाव्यतीताय विमोक्षणे ।।२६।। संज्ञ्यसंज्ञिद्वयावस्थाव्यतिरिक्तामलात्मने । नमस्ते वीतसंज्ञाय नमः क्षायिकदृष्टये ।।३०।। अनाहाराय तृप्ताय नमः परमभाजुषे । व्यतीताशेषदोषाय भवाब्धेपारमीयुषे ।।३१।। अजराय नमस्तुभ्यं नमस्तेऽतीतजन्मने । अमृत्यवे नमस्तुभ्यमचलायाक्षरात्मने ।।३२।। अलमास्तां गुणस्तोत्रमनंतास्तावका गुणाः । त्वन्नामस्मृतिमात्रेण पर्युपासिसिषामहे ।।३३।। एवं स्तुत्वा जिनं देवं भक्त्यापरमया सुधी. । पठेदष्टोत्तरं नाम्नां सहस्रं पाप शांतये ।।३४।। पुष्पाञ्जलि ।

इति प्रस्तावना

(अथ भगवज्जिनसेनाचार्य कृत स्तोत्रम्)

प्रसिद्धाष्टसहस्रेद्धलक्षणं त्वां गिरां पतिम् ।
नाम्नामष्टसहस्रेण तोष्टुमोऽभीष्टसिद्धये ॥ १ ॥

तद्यथा

श्रीमान्स्वयंभूर्वृषभः शंभवः शंभूरात्मभूः । स्वयंः प्रभः प्रभुर्भोक्ता विश्वभूरपुनर्भवः ॥२॥ विश्वात्मा विश्वलोकेशो विश्वतश्चक्षुरक्षरः । विश्वविद्विश्वविद्येशो विश्वयोनिरनश्वरः ॥३॥ विश्वदृश्वा विभुर्धाता विश्वेशो विश्वलोचनः । विश्वव्यापी विधिर्वेधाः शाश्वतो विश्वतोमुखः ॥ ४ ॥ विश्वकर्मा जगज्ज्येष्ठो विश्वमूर्तिर्जिनेश्वरः । विश्वदृग्विश्वभूतेशो विश्वज्योतिरनीश्वरः ॥५॥ जिनो जिष्णुरमेयात्मा विश्वरीशो जगत्पतिः । अनन्तजिदचिन्त्यात्मा भव्यबन्धुरबन्धनः ॥६॥ युगादिपुरुषो ब्रह्मा पञ्चब्रह्ममयः शिवः । परः परतरः सूक्ष्मः परमेष्ठी सनातनः ॥७॥ स्वयं ज्योतिरजोऽजन्मा ब्रह्मयोनिरयोनिजः। मोहारिविजयी जेता धर्मचक्री दयाध्वजः ॥८॥ प्रशान्तारिरनन्तात्मा योगी योगीश्वरार्चितः । ब्रह्मविद् ब्रह्मतत्त्वज्ञो ब्रह्मोद्याविद्यतीश्वरः ॥९॥ शुद्धो बुद्धः प्रबुद्धात्मा सिद्धार्थः सिद्धशासनः । सिद्धः सिद्धान्तविद् ध्येयः सिद्धसाध्यो जगद्धितः ॥१०॥ सहिष्णुरच्युतोऽनन्तः प्रभविष्णुर्भवोद्भवः । प्रभूष्णुरजरोऽजर्यो भ्राजिष्णुर्धीश्वरोऽव्ययः ॥११॥ विभावसुरसभूष्णुः स्वयंभूष्णुः पुरातनः । परामात्मा परंज्योतिस्त्रिजगत्परमेश्वरः ॥१२॥ इति श्रीमदादिशतम् ॥

दिव्यभाषापतिर्दिव्यः पूतवाक्पूतशासनः । पूतात्मा परमज्योतिर्धर्माध्यक्षो दमीश्वरः ॥१॥ श्रीपतिर्भगवानर्हन्नरजा विरजाः शुचिः । तीर्थकृत्केवलीशानः पूजार्हः स्नातकोऽमलः ॥२॥ अनन्तदीप्तिर्ज्ञानात्मा स्वयबुद्धः प्रजापतिः । मुक्तः शक्तो निराबाधो निष्कलो भुवनेश्वरः ॥३॥ निरञ्जनो जगज्ज्योतिर्निरुक्तोक्तिर्निरामयः । अचलस्थिति-

रक्षोभ्यः कूटस्थः स्थाणुरक्षयः ॥ ४ ॥ अग्रणीर्ग्रामणीर्नेता प्रणेता न्यायशास्त्रकृत् । शास्ता धर्मपतिर्धर्म्यो धर्मात्मा धर्मतीर्थकृत् ॥ ५ ॥ वृषध्वजो वृषाधीशो वृषकेतुर्वृषायुधः । वृषो वृषपतिर्भर्ता वृषभाङ्को वृषोद्भवः ॥ ६ ॥ हिरण्यनाभिर्भूतात्मा भूतभृद्भूतभावनः । प्रभवो विभवो भास्वान् भवो भावो भवान्तकः ॥ ७॥ हिरण्यगर्भः श्रीगर्भः प्रभूतविभवोद्भवः । स्वयं प्रभुः प्रभूतात्मा भूतनाथो जगत्प्रभुः । सर्वादिः सर्वदृक् सार्वः सर्वज्ञः सर्वदर्शनः । सर्वात्मा सर्वलोकेशः सर्ववित्सर्वलोकजित् ॥९॥ सुगतिः सुश्रुतः सुश्रुक् सुवाक् सूरिर्बहुश्रुतः । विश्रुतः विश्वतः पादो विश्वशीर्षः शुचिश्रवाः ॥१०॥ सहस्रशीर्षः क्षेत्रज्ञः सहस्राक्षः सहस्रपात् । भूतभव्यभवद्भर्ता विश्वविद्यामहेश्वरः ॥११॥ इति दिव्यादिशतम् ॥२॥

स्थविष्ठः स्थविरो ज्येष्ठः पृष्ठः पृष्ठो वरिष्ठधीः । स्थेष्ठो गरिष्ठो बंहिष्ठः श्रेष्ठोऽणिष्ठो गरिष्ठगीः ॥ १ ॥ विश्वभृद्विश्वसृट् विश्वेट् विश्वभुग्विश्वनायकः । विश्वाशीर्विश्वरूपात्मा विश्वजिद्विजितान्तकः । ॥२॥ विभवो विभयो वीरो विशोको विरुजो जरन् । विरागो विरतोऽसङ्गोऽविविक्तो वीतमत्सरः ॥३॥ विनेयजनताबन्धुर्विलीनाशेषकल्मषः । वियोगो योगविद्विद्वान्विधाता सुविधिः सुधीः ॥ ४ ॥ क्षान्तिभाक्पृथिवीमूर्तिः शान्तिभाक्सलिलात्मकः । वायुमूर्तिरसंगात्मा वह्निमूर्तिरधर्मधक् ॥ ५ ॥ सुयज्वा यजमानात्मा सुत्वा सुत्रामपूजितः । ऋत्विग्यज्ञपतिर्याज्यो यज्ञाङ्गममृतं हविः ॥६॥ व्योममूर्तिरमूर्तात्मा निर्लेपो निर्मलोऽचलः । सोममूर्तिः सुसौम्यात्मा सूर्यमूर्तिर्महाप्रभः ॥७॥ मंत्रविन्मन्त्रकृन्मन्त्री मन्त्रमूर्तिरनंतगः । स्वतन्त्रस्तन्त्रकृत्स्वान्तः कृतान्तान्तः कृतान्तकृत् ॥८॥ कृती कृतार्थः सत्कृत्यः कृतकृत्यः कृतक्रतुः । नित्यो मृत्युञ्जयो मृत्युरमृतात्माऽमृतोद्भवः ॥९॥ ब्रह्मनिष्ठः परंब्रह्म ब्रह्मात्मा ब्रह्मसंभवः महाब्रह्मपतिर्ब्रह्मेट् महाब्रह्मपदेश्वरः ॥१०॥ सुप्रसन्नः प्रसन्नात्मा ज्ञानधर्मदमप्रभुः । प्रशमात्मा प्रशान्तात्मा पुराणपुरुषोत्तमः ॥११॥ इति स्थविष्ठादिशतम् ॥३॥

महाशोकध्वजोऽशोक. क. स्रष्टा पद्मविष्टरः। पद्मेशः पद्मसम्भूति पद्मनाभिरनुत्तरः ॥१॥ पद्मयोनिर्जगद्योनिरित्यः स्तुत्यः स्तुतीश्वरः। स्तवनार्हो हृषीकेशो जितजेयः कृतक्रिय. ॥२॥ गणाधिपो गणज्येष्ठो गण्य. पुण्यो गणाग्रणीः। गुणाकरो गुणाम्भोधिर्गुणज्ञो गुणनायक ॥ ३ ॥ गुणादरी गुणोच्छेदो निर्गुण. पुण्यगीर्गुण। शरण्यः पुण्यवाक्पूतो वरेण्य. पुण्यनायक ॥ ४ ॥ अगण्य पुण्यधीर्गुण्य. पुण्यकृत्पुण्यशासन। धर्मारामो गुणग्राम पुण्यापुण्यनिरोधकः ॥ ५ ॥ पापापेतो विपापात्मा विपात्मा वीतकल्मष.। निर्द्वन्द्वो निर्मद शान्तो निर्मोहो निरुपप्लव. ॥ ६ ॥ निर्निमेषोनिराहारो नि क्रियो निरुपप्लव। निष्कलङ्को निरस्तैना निर्धूताङ्गो निराश्रवः ॥ ७ ॥ विशालो विपुलज्योतिरतुलोचिन्त्यवैभव.। सुसंवृतः सुगुप्तात्मा सुभुत्सुनयतत्त्ववित् ॥ ८ ॥ एकविद्यो महाविद्यो मुनिः परिवृढः पतिः। धीशो विद्यानिधि साक्षी विनेता विहतान्तकः ॥९॥ पिता पितामह पाता पवित्र. पावनो गति.। त्राता भिषग्वरो वर्यो वरद परम. पुमान्ः ॥१०॥ कवि. पुराणपुरुषो वर्षीयान्वृषभः पुरु.। प्रतिष्ठाप्रसवो हेतुर्भुवनैकपितामह. ॥ ११ ॥ इति महादिशतन् ॥४॥

श्रीवृषलक्षण. श्लक्ष्णो लक्षण्यः शुभलक्षण.। निरक्षः पुण्डरीकाक्षः पुष्कल. पुष्करेक्षणः ॥ १ ॥ सिद्धिद सिद्धसंकल्प सिद्धात्मा सिद्धिसाधन। बुद्धबोध्यो महाबोधिर्वर्धमानो महर्द्धिकः ॥ २ ॥ वेदाङ्गो वेदविद्वेद्यो जातरूपो विदावर.। वेदवेद्य स्वसवेद्यो विवेदो वदतांवर. ॥ ३ ॥ अनादिनिधनोऽव्यक्तो व्यक्तवाग् व्यक्तशासन। युगादिकृद्यु गाधारो युगादिर्जगदादिजः ॥ ४ ॥ अतीन्द्रोऽतीन्द्रियो धीन्द्रोमहेन्द्रोऽतीन्द्रियार्थदृक्। अनिन्द्रियोऽहमिन्द्राच्योंमहेन्द्रमहितो महान् ॥५॥ उद्भव. कारणं कर्ता पारगो भवतारकः। अगाह्यो गहन गुह्यं परार्घ्य. परमेश्वर. ॥६॥ अनन्तर्द्धिरमेयर्द्धिरचिन्त्यर्द्धिः समग्रधी.। प्राग्र्य. प्रागहरोऽभ्यग्र. प्रत्यगोऽग्रयऽग्रिमोऽग्रज. ॥७॥

महातपाः महातेजा महोदर्को महोदयः । महायशा महाधामा महासत्वो महाधृतिः ॥ ८ ॥ महाधैर्यो महावीर्यो महासम्पन्महाबलः । महाशक्तिर्महाज्योतिर्महाभूतिर्महाद्युतिः ॥९॥ महामतिर्महानीतिर्महाक्षांतिर्महोदयः । महाप्राज्ञो महाभागो महानदो महाकविः ॥१०॥ महामहामहाकीर्तिर्महाकातिर्महावपुः । महादानो महाज्ञानो महायोगो महागुणः ॥११॥ महामहपतिः प्राप्तमहाकल्याणपञ्चकः । महाप्रभुर्महाप्रातिहार्याधीशो महेश्वरः ॥१२॥ इति श्रीवृषादिशतम् ॥५॥

महामुनिर्महामौनी महाध्यानी महादमः । महाक्षमो महाशीलो महायज्ञो महामखः ॥१॥ महाव्रतपतिर्मह्यो महाकांतिधरोऽधिपः । महामैत्रो महामेयो महोपायो महोमयः ॥ २ ॥ महाकारुणिको मंता महामन्त्रो महामतिः । महानादो महाघोषो महेज्यो महसापतिः ।३। महाध्वरधरो धुर्यो महौदार्यो महिष्ठवाक् । महात्मा महसाधाम महर्षिर्महितोदयः ॥४॥ महाक्लेशांकुशः शूरो महाभूतपतिर्गुरुः । महापराक्रमोऽनंतो महाक्रोधरिपुर्वशी ॥५॥ महाभवाब्धिसंतारिर्महामोहाद्रि सूदनः । महागुणाकरः क्षांतो महायोगीश्वरः शमी ॥ ६ ॥ महाध्यानपतिर्ध्याता महाधर्मा महाव्रतः । महाकर्मारिहात्मज्ञो महादेवो महेशिता ॥ ७ ॥ सर्वक्लेशापहः साधुः सर्वदोषहरो हरः । असंख्येयोऽप्रमेयात्मा शमात्मा प्रशमाकरः ॥८॥ सर्वयोगीश्वरोऽचिन्त्यः श्रुतात्मा विष्टरश्रवाः । दांतात्मा दमतीर्थेशो योगात्मा ज्ञानसर्वगः ॥९॥ प्रधानमात्मा प्रकृतिः परमः परमोदयः । प्रक्षीणबंधः कामारिः क्षेमकृत्क्षेमशासनः ॥१० प्रणवः प्रणयः प्राणः प्राणदः प्रणतेश्वरः । प्रमाणं प्रणिधिर्दक्षो दक्षिणोऽध्वर्युरध्वरः ॥११॥ आनन्दो नन्दनो नन्दो वन्द्योऽनिंद्योऽभिनन्दनः । कामहा कामदः काम्यः कामधेनुररिंजयः ॥१२॥ इति महामुन्यादिशतम् ॥६॥

असंस्कृतः सुसंस्कारः प्राकृतो वैकृतांतकृत् । अंतकृत्कांतगुः कांतश्चितामणिरभीष्टदः ॥ १ ॥ अजितो जितकामारिरमितोऽमित-

शासनः । जितक्रोधो जितामित्रो जितक्लेशो जितांतकः ।२। जिनेन्द्रः परमानन्दो मुनीन्द्रो दुन्दुभिस्वनः । महेन्द्रवंद्यो योगीन्द्रो यतीन्द्रो नाभिनन्दनः ।।३।। नाभेया नाभिजोऽजातः सुव्रतो मनुरुत्तमः । अभेद्योऽनत्ययोऽनाश्वानधिकोऽधिगुरुः सुधीः ।।४।। सुमेधा विक्रमी स्वामी दुराधर्षो निरुत्सकः । विशिष्टः शिष्टभुक् शिष्टः प्रत्ययः कामनोऽनघः ।।५।। क्षेमी क्षेमंकरोऽक्षय्यः क्षेमधर्मपतिः क्षमी । अग्राह्यो ज्ञाननिग्राह्यो ध्यानगम्यो निरुत्तरः ।।६।। सुकृति धातुरिज्यार्हः सुनयश्चतुराननः । श्रीनिवासश्चतुर्वक्त्रश्चतुरास्यश्चतुर्मुखः ।। ७ ।। सत्यात्मा सत्यविज्ञानः सत्यवाक्सत्यशासनः । सत्याशीः सत्यसंधानः सत्यः सत्यपरायणः ।।८।। स्थेयान् स्थवीयान्नेदीयान्दवीयान्दूरदर्शनः । अणोरणीयाननणुर्गुरुराद्यो गरीयसाम् ।।९।। सदायोगः सदाभोगः सदातृप्तः सदाशिवः । सदागतिः सदासौख्यः सदाविद्यः सदोदयः ।।१०।। सुघोषः सुमुखः सौम्यः सुखदः सुहितः सुहृत् । सुगुप्तोगुप्तिभृद् गोप्ता लोकाध्यक्षो दमीश्वरः ।।११।। इति असंस्कृतादिशतम् ।।७।।

बृहद्बृहस्पतिर्वाग्मी वाचस्पतिरुदारधीः । मनीषो धिषणो धीमाञ्छेमुषीशो गिरांपतिः ।। १ ।। नैकरूपो नयोतुंगो नैकात्मा नैकधर्मकृत् । अविज्ञेयोऽप्रतर्क्यात्मा कृतज्ञः कृतलक्षणः ।।२।। ज्ञानगर्भो दयागर्भो रत्नगर्भः प्रभास्वरः । पद्मगर्भो जगद्गर्भो हेमगर्भः सुदर्शनः ।।३।। लक्ष्मीवास्त्रिदशाध्यक्षो दृढीयानिन ईशिता । मनोहरो मनोज्ञाङ्गो धीरो गम्भीरशासनः ।। ४ ।। धर्मयूपो दयायागो धर्मनेमिर्मुनीश्वरः । धर्म-चक्रायुधो देवः कर्महा धर्मघोषणः ।। ५ ।। अमोघवागमोघाज्ञो निर्मलोऽमोघशासनः । सुरूपः सुभगस्त्यागी समयज्ञः समाहितः ।। ६ ।। सुस्थितः स्वास्थ्यभाक्स्वस्थो नीरजस्को निरुद्धवः । अलेपो निष्कलङ्कात्मा वीतरागो गतस्पृहः ।।७।। वश्येन्द्रियो विमुक्तात्मा निःसपत्नो जितेन्द्रियः । प्रशान्तोऽनन्तधामर्षिर्मंगलं मलहानघः ।।८।। अनीदृगुपमाभूतो दृष्टिर्दैवमगोचरः । अमूर्तो

मूर्तिमानेको नैको नानैकतत्त्वदृक् ।। ९ ।। अध्यात्मगम्यो गम्यात्मा योगविद्योगिवन्दितः । सर्वत्रगः सदाभावी त्रिकालविषयार्थदृक् ।।१० शङ्करः शंवदो दान्तो दमी क्षान्तिपरायणः । अधिपः परमानन्दः परात्मज्ञः परात्परः ।। ११।। त्रिजगद्वल्लभोऽभ्यर्च्यस्त्रिजगन्मंगलोदयः । त्रिजगत्पतिपूज्याङ्घ्रिस्त्रिलोकाग्रशिखामणिः ।।१२।। इति वृहदादि-शतम् ।। ८ ।।

त्रिकालदर्शी लोकेशो लोकधाता दृढव्रतः । सर्वलोकातिगः पूज्यः सर्वलोकैकसारथिः ।। १ ।। पुराणपुरुषः पूर्वः कृतपूर्वांगवि-स्तरः । आदिदेवः पुराणाद्यः पुरुदेवोऽधिदेवता ।। २ ।। युगमुख्यो युगज्येष्ठो युगादिस्थितिदेशकः । कल्याणवर्णः कल्याणः कल्यः कल्याणलक्षणः ।।३।। कल्याणप्रकृतिर्दीप्तकल्याणात्मा विकल्मषः । विकलङ्कः कलातीतः कलिलघ्नः कलाधरः ।।४।। देवदेवो जगन्नाथो जगद्बन्धुर्जगद्विभुः । जगद्धितैषी लोकज्ञः सर्वगो जगदग्रजः ।। ५ ।। चराचरगुरुर्गोप्यो गूढात्मा गूढगोचरः । सद्योजातः प्रकाशात्मा ज्वलज्ज्वलनसप्रभः ।।६।। आदित्यवर्णो भर्माभः सुप्रभः कनकप्रभः । सुवर्णवर्णो रुक्माभः सूर्यकोटिसमप्रभः ।। ७ ।। तपनीयनिभस्तुङ्गो बालार्काभोऽनलप्रभः । सन्ध्याभ्रबभ्रुर्हेमाभस्तप्तचामीकरच्छविः ।। ८ ।। निष्टप्तकनकच्छायः कनत्काञ्चनसन्निभः । हिरण्यवर्णः स्वर्णाभः शातकुम्भनिभप्रभः ।। ९ ।। द्युम्नाभो जातरूपाभस्तप्त-जाम्बूनदद्युतिः । सुधौतकलधौतश्रीः प्रदीप्तो हाटकद्युतिः ।। १० ।। शिष्टेष्टः पुष्टिदः पुष्टः स्पष्टः स्पष्टाक्षरः क्षमः । शत्रुघ्नोऽप्रतिघोऽमोघः प्रशास्ता शासिता स्वभूः ।। ११ ।। शान्तिनिष्ठो मुनिज्येष्ठः शिवतातिः शिवप्रदः । शान्तिदः शान्तिकृच्छान्तिः कांतिमान्कामितप्रदः ।।१२।। श्रेयोनिधिरधिष्ठानमप्रतिष्ठः प्रतिष्ठितः । सुस्थिरः स्थावरः स्थाणुः प्रथीयान्प्रथितः पृथुः ।। १३ ।। इति त्रिकालदर्श्यादि-शतम् ।।९।।

दिग्वासा वातरशनो निर्ग्रन्थेशो निरम्बरः । निष्किञ्चनो निराशशो ज्ञानचक्षुरमोमुहः ॥ १॥ तेजोराशिरनन्तौजा ज्ञानाब्धिः शीलसागर । तेजोमयोऽमितज्योतिर्ज्योतिर्मूर्तिस्तमोपहः ॥ २ ॥ जगच्चूडामणिर्दीप्तः शंवान्विघ्नविनायक. । कलिघ्न. कर्मशत्रुघ्नो लोकालोकप्रकाशक ॥ ३ ॥ अनिद्रालुरतन्द्रालुर्जागरूक. प्रभामयः । लक्ष्मीपतिर्जगज्ज्योतिर्धर्मराज. प्रजाहितः ॥ ३ ॥ मुमुक्षुर्बन्धमोक्षज्ञो जिताक्षो जितमन्मथ । प्रशान्तरसशैलूषो भव्य-पेटकनायकः ॥ ५ ॥ मूलकर्ताखिलज्योतिर्मलघ्नो मूलकारणम् । आप्तो वागीश्वर. श्रेयाञ्छ्रायसोक्तिर्निरुक्तवाक् ॥ ६ ॥ प्रवक्ता वचसामीशो मारजिद्विश्वभाववित् । सुतनुस्तनुनिर्मुक्तः सुगतो हतदुर्नय ॥ ७ ॥ श्रीशः श्रीश्रितपादाब्जो वीतभीरभयङ्कर. । उत्सन्नदोषो निर्विघ्नो निश्चलो लोकवत्सल ॥ ८ ॥ लोकोत्तरो लोकपतिर्लोकचक्षुपारधीः । धीरधीर्बुद्धसन्मार्गः शुद्ध सूनृतपूतवाक् ॥ ६ ॥ प्रज्ञापारमित. प्राज्ञो यतिर्नियमितेन्द्रिय. । भदन्तो भद्रकृद्भद्र कल्पवृक्षो वरप्रदः ॥१०॥ समुन्मूलितकर्मारि. कर्मकाष्ठाशुशुक्षणि. । कर्मण्य. कर्मठ. प्रांशुर्हेयादेयविचक्षण. ॥ ११ ॥ अनन्तशक्तिरच्छेद्यस्त्रिपुरारिस्त्रिलोचन. । त्रिनेत्रस्त्र्यम्बकस्त्र्यक्ष. केवलज्ञानवीक्षण. ॥१२॥ समन्तभद्रः शान्तारिर्धर्माचार्यो दयानिधि । सूक्ष्मदर्शी जितानङ्ग. कृपालुधर्मदेशकः ॥१३॥ शुभयुः सुखसाद्भूत. पुण्यराशिरनामय । धर्मपालो जगत्पालो धर्मसाम्राज्यनायक. ॥१४॥ धाम्नां पते तवामूनि नामान्यागमकोविदै. । समुच्चितान्यनुध्यायन्पुमान्पूतस्मृतिर्भवेत् ॥ १५ ॥ इति दिग्वासाद्यष्टोत्तरशतम् ॥१५॥

इत्यष्टाधिकसहस्रनामावली समाप्ता ।

गोचरोऽपि गिरामासा त्वमवाग्गोचरो मत. । स्तोता तथाप्यसंदिग्धं त्वत्तोऽभीष्टफल भजेत् ॥१॥ त्वमतोऽसि जगद्बन्धुस्त्वमतोऽसि जगद्भिषक् । त्वमतोऽसि जगद्धाता त्वमतोऽसि जगद्धितः ॥२॥

त्वमेकं जगतां ज्योतिस्त्वं द्विरूपोपयोगभाक् । त्व त्रिरूपैकमुक्त्यंग-स्वोत्थानन्तचतुष्टय: ॥ ३ ॥ त्वं पञ्चब्रह्मतत्त्वात्मा पञ्चकल्याण-नायक. । षड्भेदभावतत्त्वज्ञस्त्व सप्तनयसंग्रह: ॥ ४ ॥ दिव्याष्टगुण-मूर्तिस्त्वं नवकेवललब्धिक: । दशावतार निर्धार्यो मां पाहि परमेश्वर ॥५॥ युष्मन्नामावलो-दृब्धविलसत्स्तोत्रमालया । भवन्त परिवस्याम: प्रसीदानुगृहाण न. ॥६॥ इदं स्तोत्रमनुस्मृत्य पूतो भवति भाक्तिक: । य: संपाठ पठत्येनं स स्यात्कल्याण-भाजनम् ॥ ७ ॥ तत: सदेदं पुण्यार्थी पुमान् पठति पुण्यधो: । पौरुहूतो श्रिय प्राप्तुं परमामभि-लाषुक: ॥७॥ स्तुत्वेति मघवा देवं चराचरं जगद्गुरुम् । ततस्तीर्थ-विहारस्य व्यधात्प्रस्तावनामिमाम् ॥ ९ ॥ स्तुति पुण्यगुणोत्कोर्तिः स्तोता भव्य: प्रसन्नधो: । निष्ठितार्थो भवास्तुत्य. फल नैश्रेयसं सुखम् ॥१०॥ य: स्तुत्यो जगता त्रयस्य न पुन स्तोता स्वयं कस्य-चित् । ध्येया योगिजनस्य यश्च नितरा ध्याता स्वयं कस्यचित् ॥ यो नेतृन् नयते नमस्कृतिमलं नन्तव्यपक्षेक्षण । स श्रोमान् जगतां त्रयस्य च गुरुर्देव: पुरु: पावन: ॥११॥ तं देवं त्रिदशाधिपार्चितपदं घातिक्षयानन्तर, प्रोत्थानन्तचतुष्टयं जिनमिनं भव्याब्जिनीनामिनम् । मानस्तम्भविलोकनानतजगन्मान्यं त्रिलोकीपतिं, प्राप्ताचिन्त्यवहि-र्विभूतिमनघ भक्त्यां प्रवन्दामहे ॥१२॥

इति भगवज्जिनसेनाचार्य विरचितादिपुराणान्तर्गत जिनसहस्र नाम स्तवनम् ॥

सङ्कट हरण स्तुति

हो दीनवन्धु श्रीपति, करुणानिधानजी ।
अब मेरी विथा क्यों न हरो, वार क्या लगी ॥ टेक ॥

मालिक हो दो जहान के जिनराज आपही । ऐबो हुनर हमारा तुम से छिपा नही । वेजान मे गुनाह जो मुझसे बना सही । कंकरी के चोर को कटार मारिये नही । हो दीन० ॥१॥

दुख दर्द दिलका आपसे जिसने कहा सही। मुश्किल कहर बहर से लई है भुजा गही ।। सब वेद औ पुराण मे प्रमाण है यही। आनन्द कन्द श्री जिनेन्द्र देव है तुही। दीन० ।। २ ।।

हाथी पै चढी जाती थी सुलोचना सती। गंगा मे ग्राह ने गही गजराज की गति ।। उस वक्त मे पुकार किया था तुम्हे सती। भय टार के उभार लिया हो कृपापती। हो दीन० ।। ३ ।।

पावक प्रचण्ड कुण्ड मे उमण्ड जब रहा। सीता से शपथ लेने को तब रामने कहा ।। तुम ध्यान धार जानकी पग धारती तहा। तत्काल ही सर स्वच्छ हुआ कमल लहलहा। हो दीन० ।।४।।

जब द्रौपदी का चीर दुशासन ने था गहा। सबही सभाके लोग कहते थे ह हा ह हा। उस वक्त भीर पीर मे तुमने करी सहा। पडदा ढका सती का सुयश जगत मे रहा। हो दीन० ।। ५ ।।

सम्यक्त्व शुद्धशीलवन्ति चन्दना सती। जिसके नजीक लगती थी जाहिर रती रती। बेड़ी मे पडी थी तुम्हें जब ध्यावती हुती। तब वीर धीर ने हरी दुख द्वन्द्व की गति। हो दीन० ।। ६ ।।

श्रीपाल को सागर विषै जब सेठ गिराया। उसकी रमा से रमने को आया था बेहया ।। उस वक्त संकट मे सती तुम को जो ध्याया। दुख द्वन्द्व फन्द मेटके आनन्द बढाया। हो दीन० ।।७।।

हरिषेण की माता को जब सोत सताया। रथ जैन का तेरा चले पीछे से बताया ।। उस वक्त अनशन मे सती तुम को जो ध्याया। चक्रीश हो सुत उसके ने रथ जैन चलाया। हो दीन० ।।८।।

जब अंजना सती को हुआ गर्भ उजाला। तब सासुने कलंक लगा घर से निकाला ।। बन वर्ग के उपसर्ग मे सती तुम को चितारा। प्रभु भक्तियुत जानकें भय देव निवारा।। होदीन० ।।९।।

सोमा से कहा जो तू सती शील विशाला। तो कुम्भ मे से काढ़ भला नाग हो काला। उस वक्त तुम्हे ध्याय के सती हाथ जो डाला। तत्काल ही वह नाग हुआ फूलकी माला ।।हो दीन०।।१०

जब कुष्टरोग था हुआ श्रीपाल राज को। मैना सती तब आप को पूजा इलाज को। तत्काल ही सुन्दर किया श्रीपाल राज को। वह राज भोग भोग गया मुक्तिराज को॥ दीन० ॥ ११ ॥

जब सेठ सुदर्शन को मृषा दोष लगाया। रानी के कहे भूपने सूली पे चढाया॥ उस वक्त तुम्हें सेठ ने निज ध्यान मे ध्याया। शूली उतार उसको सिंहासन पै बिठाया। हो दीन० ॥१२॥

जब सेठ सुधन्नाजी को वापी मे गिराया। ऊपर से दुष्ट था उसे वह मारने आया॥ उस वक्त तुम्हे सेठ ने दिल अपने मे ध्याया। तत्काल ही जंजाल से तब उसको बचाया॥ हो दीन० ॥

इक सेठ के घर में किया दारिद्र ने डेरा। भोजन का ठिकाना भी न था साझ सबेरा। उस वक्त तुम्हें सेठ ने जब ध्यान मे घेरा। घर उसके में तब कर दिया लक्ष्मी का बसेरा॥हो दीन०॥ १४

बलि वाद में मुनिराज सों जब पार न पाया। तब रात को तलवार ले शठ मारने आया॥ मुनिराज ने निज ध्यान मे मन लीन लगाया। उस वक्त हो परतक्ष तहा देव बचाया॥ हो दीन० ॥१५॥

जब राम ने हनुमन्त को गढ लंक पठाया। सीता की खबर लेने को फिरफौर सिधाया। मग बीच दो मुनिराज को लख आग में काया। झट वारि मूसल धार से उपसर्ग बुझाया। हो दीन० ॥१६॥

जिननाथ ही को माथ नवाता था उदारा। घेरे मे पड़ा था वह कुम्भकरण विचारा। उस वक्त तुम्हे प्रेम से सङ्कट में उचारा। रघुवीर ने सब पीर तहां तुरत निवारा। हो दीन० ॥१७॥

रणपाल कुंवर के पड़ी थी पांव मे बेरी। उस वक्त तुम्हे ध्यान मे ध्याया था सबेरी। तत्काल ही सुकुमार की सब झड़ पड़ी बेरी। तुम राजकुंवर की सभी दुख द्वन्द्व निवेरी। हो दीन० ॥१८॥

जब सेठ के नन्दन को डसा नाग जु कारा। उस वक्त तुम्हे

पीरमे धरधीर पुकारा । तत्काल ही उस बालका. विषभूरि उतारा । वह जाग उठा सो के मानो सेज सकारा ।। हो दीन० ।।१६।।

मुनि मानतुङ्ग को दई जब भूप ने पोरा । ताले में किया बन्द भारी लोह जञ्जीरा । मुनीश ने आदीश की थुति की है गम्भीरा। चक्रेश्वरी तब आन के झट दूर की पीरा ।। हो दीन० ।।२०।।

शिवकोटि ने हठ था किया सामन्तभद्र सो । शिवपिण्ड. की बन्दन करो शको अभद्र सो । उस वक्त स्वयम्भू रचा गुरु भाव भद्र सों । जिन चन्द्र की प्रतिमा तहा प्रगटी सुभद्रसो ।। हो० ।।२१

सूवे ने तुम्हे आनके फल आम चढाया । मैढक ले चला फूल भरा भक्ति का भाया ।। उन दोनो को अभिराम स्वर्गधाम बसाया । हम आपसे दातार को लख आजही पाया ।। हो दीन० ।।२२।।

कपि स्वान सिह नवल अज बैल विचारे । तिर्यञ्च जिन्हे रञ्च न था बोध चितारे ।। इत्यादि को सुरधाम दे शिवधाम मे धारे । हम आपमे दातार को प्रभु आज निहारे ।। हो दीन० ।।२३।।

तुमही अनन्त जन्तुका भय भीर निवारा । वेदो-पुराण मे गुरु गणधर ने उचारा ।। हम आपकी शरणागति मे आके पुकारा । तुम हो प्रत्यक्ष कल्पवृक्ष इच्छिताकारा । हो दीन० ।।२४।।

प्रभु भक्त व्यक्त भक्तियुक्त मुक्ति के दानी । आनन्द कन्द वृन्द को हो मुक्ति के दानी ।। मोहि दीन जान दीनबन्धु पातक भानी । ससार विपम क्षार तार अन्तरजामी ।। हो दीन० ।।२५।।

करुणानिधान वान को अब क्यो न निहारो । दानी अनन्त दानके दाता हो सम्भारो ।। वृषचन्द नन्द वृन्द का उपसर्ग निवारो संसार विषमक्षार से प्रभु पार उतारो । हो दीनबन्धु श्रीपति करुणा-निधानजी । अब मेरी विथा क्यो ना हरो वार क्या लगी ।।२६।।

सम्पूर्णम् ।

वैराग्य भावना

दोहा—बीज राख फल भोगले, ज्यो किसान जग मांहि ।
त्यो चक्री सुख मे मगन, धर्म विसारे नाहि ।।

योगीरामा वा नरेन्द्र छन्द

इस विधि राज्य करे नर नायक भोगे पुण्य विशाला ।
सुखसागर मे मग्न निरन्तर जात न जानो काला ।।
एक दिवस शुभकर्म योग से क्षेमङ्कर मुनि वन्दे ।
देखे श्रीगुरु के पद पङ्कज लोचन अलि आनन्दे ।।१।।
तीन प्रदक्षिरणा दे शिरनायो कर पूजा स्तुति कीनी ।
साधु समीप विनय कर बैठो चरणो दृष्टि दीनी ।।
गुरु उपदेशो धर्म शिरोमणि सुन राजा वैरागी ।
राज्य रमा वनितादिक जो रस सो सब नीरस लागो ।।२।।
मुनि सूरज कथनी किरणावलि लगत भर्म बुद्धि भागी ।
भव तन भोग स्वरूप विचारो मरम धर्म अनुरागी ।।
या ससार महा वन भीतर ।भर्म छोर न आवे ।
जन्मन मरन जरा दोंदावे जीव महादुख पावे ।।३।।
कबहुं कि जाय नर्क पद भुंजे छेदन भेदन भारी ।
कबहुं कि पशु पर्याय धरे तहा बध बन्धन भयकारी ।।
सुरगति मे पर सम्पति देखे राग उदय दुख होई ।
मानुष योनि अनेक विपतिमय सब सुखी नहि कोई ।।४।।
कोई इष्ट वियोगी विलखे कोई अनिष्ट संयोगी ।
कोई दीन दरिद्री दीखे कोई तन का रोगी ।।
किस ही वर कलिहारी नारी कै बैरी सम भाई ।
किस ही के दुख बाहर दीखे किसही उर दुचिताई ।।५।।
कोई पुत्र बिना नित झूरे होय मरै तब रोवै ।

खोटी संतति मे दुख उपजे क्यों प्राणी सुख सोवै ॥
पुण्य उदय जिनके तिनको भी नाहि सदा सुख साता ।
यह जग बास यथारथ दीखे सबही है दुख घाता ॥६॥
जो संसार विषै सुख हो तो तीर्थङ्कर क्यों त्यागे ।
काहे को शिव साधन करते संयम से अनुरागे ॥
देह अपावन अथिर घिनावन इसमे सार न कोई ।
सागर के जल से शुचि कीजै तो भी शुद्ध न होई ॥७॥
सप्त कुधातु भरी मल मूत्र से धर्म लपेटी सो है ।
अन्तर देखत या सम जग मे और अपावन को है ॥
नव मल द्वार श्रवै निश वासर नाम लिये घिन आवे ।
व्याधि उपाधि अनेक जहां तहा कौन सुखी सुख पावे ॥८॥
पोषत तो दुःख दोष करे अति सोषत सुख उपजावे ।
दुर्जन देह स्वभाव बराबर मूरख प्रीति बढावै ॥
राचन योग्य स्वरूप न याको विरचन योग्य सही है ।
यह तन पाय महातप कीजै इसमे सार यही है ॥६॥
भोग बुरे भव भोग बढावै बैरी है जग जी के ।
वे रस होय विपाक समय अति सेवत लागै नीके ॥
वज्र अग्नि विषमे विषधर से है अधिक दुखदाई ।
धर्म रत्न को चोर प्रबल अति दुर्गति पथ सहाई ॥१०॥
मोह उदय यह जीव अज्ञानी भोग भले कर जाने ।
ज्यो कोई जन खाय धतूरा सो सब कञ्चन माने ॥
ज्यो-ज्यो भोग सयोग मनोहर मनवाछित जन पावे ।
तृष्णा डाकिनी त्यो-त्यो भंके जहर लोभ विष लावे ॥११॥
मै चक्री पद पाय निरन्तर भोगे भोग घनेरे ।
तो भी तनिक भये ना पूरण भोग मनोरथ मेरे ॥
राज समाज महा अघ कारण बैर बढावन हारा ।

वेश्या सम लक्ष्मी अति चञ्चल इसका कौन पतियारा ।।१२।।
मोह महा रिपु वैर विचारे जग जीव सङ्कट टारे।
कारागार वनिता बेड़ी परजन है रखवारे ।।
सम्यग्दर्शन ज्ञान चरण तप ये जिय को हितकारी।
ये ही सार असार और सब यह चक्री चित धारी ।।१३।।
छोड़े चौदहरत्न नवोनिधि और छोड़े संग साथी।
कोड़ि अठारह घोड़े छोड़े चौरासी लख हाथी ।।
इत्यादिक सम्पति बहु तेरी जीर्ण तृणवत् त्यागी।
नीति विचार नियोगी सुत को राज्य दियो बड़भागी ।।१४।।
होइ निःशल्य अनेक नृपति संग भूषण वसन उतारे।
श्री गुरु चरण धरी जिन मुद्रा पञ्च महाव्रत धारे ।।
धनि यह समझ सुबुद्धि जगोत्तम धन्य यह धैर्य धारी।
ऐसी सम्पति छोड बसे वन तिन पद धोक हमारी ।।१५।।

दोहा—परिग्रह पोट उतार सब, दीनो चारित्र पंथ।
निज स्वभाव में थिर भये, वज्रनाभि निर्ग्रंथ ।।

इति वैराग्य भावना सम्पूर्णम्।

गुरुस्तुति।

वन्दों दिगम्बर गुरुचरन, जग तरन तारन जान। जे भरम भारी रोगको, है राजवैद्य महान ।। जिनके अनुग्रह बिन कभी, नहीं कटैं कर्म जञ्जीर। ते साधु मेरे मन बसो, मेरी हरो पातक पीर ।।१।। यह तन अपावन अशुचि है, संसार सकल असार। ये भोग विष पकवान से, इस भांति सोच विचार ।। तप विरचि श्रीमुनि वन बसे, सब त्यागि परिग्रह भीर। ते साधु मेरे मन बसो; मेरी हरो पातक पीर ।।२।। जे काच कञ्चन सम गिनै, अरि मित्र एक सरूप। निंदा बडाई सारिखी, वन खंड शहर अनूप। सुख दुःख जीवन मरन

मे, नहिं खुशी नहि दिलगीर। ते साधु मेरे मन बसौ, मेरी हरौ पातक पीर ।३। जे बाह्य परबत बन बसैं, गिरि गुहा महल मनोग। सिल सेज समता सहचरी, शशिकरण दीपकजोग ।। मृग मित्र भोजन तप मई, विज्ञान निरमल नीर। ते साधु मेरे मन बसौ, मेरी हरो पातक पीर ।।४।। सूखै सरोवर जल भरे, सूखै तरङ्गनि-तोय। वाटै बटोहि ना चलै, जहँ घाम गरमी होय। तिस काल मुनिवर तप तपैं, गिरि शिखर ठाड़े धीर। ते साधु मेरे मन बसौ, मेरी हरो पातक पीर ।।५।। घनघोर गरजै घनघटा, जल परै पावसकाल। चहुँ ओर चमकै बीजुरी, अति चलै शीतल व्याल (र)। तरुहेट तिष्ठै तब जती, एकात अचल शरीर। ते साधु मेरे मन बसौ, मेरी हरौ पातक पीर।।६।। जब शीतमास तुसारसौ, दाहै सकल बनराय। जब जमै पानी पोखरां, थरहरै सबकी काय।। तब नगन निवसैं चौहटै, अथवा नदी के तीर। ते साधु मेरे मन बसौ, मेरी हरौ पातक पीर।।७।। कर जोर 'भूधर' बीनवै, कब मिलै वे मुनिराज। यह आस मनकी कब फले, मेरे सरे सगरे काज।। संसार विषम विदेश मे, जे विना कारण वीर। ते साधु मेरे मन बसौ, मेरी हरौ पातक पीर।।८।।

गुरुस्तुति (२) दोहा [राग—भरथरी]

ते गुरु मेरे मन बसौ, जे भव—जलधि—जिहाज। आप तिरैं पर तारही, ऐसे श्री ऋषिराज।।ते गुरु.।।१।। मोह महारिपु जीतिकैं छाड्यो सब घरबार। होय दिगम्बर बन बसे, आतम शुद्ध विचार। ते गुरु० ।।१।। रोगउरग—बिल विपु गिण्यो, भोग भुजङ्ग समान। कदलीतरु संसार है, त्यागयो यह सब जान।। ते गुरु० ।।३।। रत्न-त्रय निधि उर धरैं, अरु निरग्रन्थ त्रिकाल। मारयो काम पिशाच को, स्वामी परम दयाल।।ते गुरु० ।। ४।। पञ्च महाव्रत आदरै, पाचो समिति—समेत। तीन गुपति पालै सदा, अजर अमर—पद

हेत ॥ गुरु० ॥ ५ ॥ धर्म धरै दसलक्षणी, भावै भावना सार। सहैं परीषह बीस द्वै, चारित-रतन भंडार ॥ ते गुरु० ॥६॥ जेठ तपै रवि आकरो, सूखै सरवरनीर। शैल-शिखर मुनि तप तपै, दाझै नगन शरीर ॥ ते गुरु० ॥ ७ ॥ पावस रैन डरावनी, बरसे जलधर धार। तरुतल निवसैं साहसी, बाजे झझाव्यार। ते गुरु० ॥८॥ शीत पड़े कपि-मद गलै, दाहे सब बनराय। ताल तरंगनि के तटै, ठाडे ध्यान लगाय ॥ ते गुरु० ॥९॥ इहि विधि दुद्धर तप तपैं, तीनो कालमंझार। लागे सहज सरूपमे, तनसौ ममत निवार ॥ ते गुरु० ॥१०॥ पूरव भोग न चितवै, आगम बांछा नाहि। चहूं गति के दुखसौं डरै, सुरत लगी शिवमाहि ॥ ते गुरु० ॥११॥ रङ्ग-महल मे पौढते, कोमल सेज बिछाय। ते पच्छिम निशि भूमि मे सोवैं संवरि काय ॥ ते गुरु० ॥ १२ ॥ गज चढि चलते गरवसौ, सेना सजि चतुरङ्ग। निरखि निरखि पग वे धरै, पालै करुणा अङ्ग ॥ ते गुरु० ॥ १३॥ वे गुरु चरण जहां धरे, जगमे तीरथ जेह। सो रज मम मस्तक चढो, 'भूधर' मागे येह ॥ ते गुरु० ॥१४॥

श्री शांतिनाथ स्तव

शान्तिनाथ ! जगपूज्य, दयालो,
देवेन्द्र, विश्वसुत, शुद्ध सुवर्ण देह,
तेरे मनोरम ह्रदय मे रचो ये—
सद्भाव भक्ति परि पूरित चित्त मेरा ॥१॥
कैसी मनोज्ञ रमणीय, सुशान्त तेरी—
ध्यानस्थ मूर्ति भगवन् यह सोहती है।
संसार ताप हरणार्थ मनो स्वयं ही—
श्री शांति की सकल आकर ही खड़े हो ॥२॥

तेरे प्रभो बचन की विमल प्रभा से,
अज्ञान अन्ध तल है किसका न जाता ?
विद्युच्छटा अनुपम स्थिर शक्तिशाली,
जो छा रहे तम कहां फिर है दिखाता ॥३॥
हे नाथ ! दर्शन किये तव शांति आवे,
आवे न पास दुख दारिद, क्लेश जावे,
छावे महा जगत मे यश, रत्न पावे
धावे सुमार्ग पर, ठोकर भी न खावे ॥ ४ ॥
आकाश चुम्बन करे भगवान तेरी—
प्रासाद सुन्दर, ध्वजा उडती वहां सो—
जो आत्मसिद्धि करके जग जीतते है,
उनका प्रभाव यह है, बतला रही है ॥५॥
आनन्द-मङ्गल सदा उस ठौर होवे,
आरोग्य-सौख्य-धन-धान्य समृद्धि होवे,
विद्वेष भाव सबका सब दूर होवे,
होवे जहां भजन-पूजन नित्य तेरा ॥६॥
हे शान्तिनाथ भगवान तुझे नमूं मे,
देवाधिदेव जगदीश तुझे नमूं मै,
त्रैलोक्य-शान्ति कर देव तुझे नमूं मैं,
स्वामिन् नमूं जिन नमूं भगवन् नमूं मैं ॥७॥

तू बुद्ध तू जिन मुनीन्द्र विभू स्वयम्भू,
तू राम कृष्ण जगदीश दयालु दाता,
अल्ला, रहीम, रहमान, खुदा करीम,
तू गाड, तू अहुरमज्द महेश, मौला ॥८॥
है ज्ञान दर्पण महोज्ज्वल नाथ तेरा,
आश्चर्यकारक महा जिसमे पड़े है—

त्रैलोक्य के सकल भाव त्रिकाल के भी,
होवे भविष्य उसमे अति उच्च मेरा ॥९॥
जो शुद्ध बुद्ध कर निर्मल वृत्तियों को—
श्रीशांतिनाथ प्रभु के स्तव को पढेंगे,
होंगे सभी विमलकीर्ति महासुखी वे,
संसार को अतुलशान्ति भरा करेंगे ॥१०॥

—:०:—

पार्श्वनाथ स्तवन

हे पार्श्वनाथ, परमेश, महोपदेशी,
हे अश्वसेन सुत, श्यामल शांति देह।
वामाङ्गजात, करुणाकर लोक-वन्द्यो,
तेरे सदा चरण ही मम आसरा है ॥ १ ॥
संसार का तरण तारण तू कहाया,
तेरा किये स्मरण हर्ष न कौन पाया।
पाया सुभक्ति तब जो वह मोक्ष पाया,
तेरे सदा चरण ही मम आसरा है ॥२॥
तूने सहे कमठ के उपसर्ग भारी,
तूने अनन्त जगत के उपकार कीन्हे।
आदर्श भव्य जनका भगवान है तू,
तेरे सदा चरण ही मम आसरा है ॥ ३ ॥
तूने कुमारपन मे सब योग साधा,
माई सदा सकल जीवन की भलाई।
तत्त्वार्थ का मरम मानव को जताया,
तेरे सदा चरण ही मम आसरा है ॥ ४ ॥
निर्व्याज बन्धु जगनायक तू जगत का,
तेरी करे न किसका हित दिव्य वाणी।

स्वामिन् तुम्हारे पदपद्म का हो—
प्रेमी सदा ही यह चित्त मेरा ॥१॥

स्वामिन्, किसी का न बुरा विचारूं,
सन्मार्ग पै मैं चलते न हारूं ।
तत्त्वार्थ श्रद्धान सदैव धारूं,
दो शक्ति, हो उत्तम शील मेरा ॥२॥

सदा भलाई सबकी करूं मैं,
सामर्थ्य पा जीव दया धरूं मैं ।
संसार के क्लेश सभी हरूं मैं,
हो ज्ञान, चारित्र विशुद्ध मेरा ॥३॥

स्वामिन्, तुम्हारी यह शान्त मुद्रा,
किसके लगाती हिय मे ना क्षुद्रा ।
कहे उसे क्या यह बुद्धि क्षुद्रा,
स्वीकारिये नाथ प्रणाम मेरा ॥४॥

प्रभो तुम्ही हो निकटोपकारी,
प्रभो तुम्ही हो भवदुःखहारी ।
प्रभो तुम्ही हो शुचिपंथचारी ।
हो नाथ साष्टांग प्रणाम मेरा ॥५॥

जो भव्य पूजा करते तुम्हारी ।
होती उन्हीं की गति उच्च धारी ।
प्रसिद्ध है 'दादुरफूल' वारी,
सम्पूर्ण निश्चय नाथ मेरा ॥६॥

मेरी प्रभो दर्शन शुद्धि होवे,
सद्भावना पूर्ण समृद्धि होवे ।
पांचों व्रतो की शुभ सिद्धि होवे,
सद्बुद्धि पै हो अधिकार मेरा ॥७॥

आया नही गौतम विज्ञ जौलों,
खिरी न वाणी तव दिव्य तौलों ।
पीयूष से पात्र भरा सतौलों,
मै पात्र होऊँ अभिलाष मेरा ॥८॥
प्रभो तुम्हें ही दिन रात ध्याऊं,
सदा तुम्हारे गुणगान गाऊं ।
प्रभावना खूब करूं कराऊं,
कल्याण होवे सब भांति मेरा ॥९॥
श्री वीर के मारग पे चले जो,
श्री वीर पूजा मन मे करे जो ।
सद्भव्य वीर स्तव को पढे जो,
वे लब्धियां पा सुख पूर्ण होवें ॥१०॥

मंगलाष्टकम् ।

श्रीमन्नम्रसुरा-सुरेन्द्र-मुकुट-प्रद्योतरत्न-प्रभा—
भास्वत्पादनखेन्दवः प्रवचनाम्भोधीन्दवः स्थायिनः ।
ये सर्वे जिनसिद्धसूर्यनुगतास्ते पाठकाः साधवः ।
स्तुत्या योगिजनैश्च पञ्चगुरवः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥१॥
नाभेयादिजिनाः प्रशस्तवदनाः, ख्याताश्चतुर्विंशतिः ।
श्रीमन्तो भरतेश्वरप्रभृतयो, ये चक्रिणो द्वादश ॥
ये विष्णुप्रतिविष्णु-लाङ्गलधरा, सप्तोत्तरा विंशतिः ।
त्रैलोक्ये प्रथितास्त्रिषष्टिपुरुषाः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥२॥
ये पञ्चौषधिऋद्धयः श्रुततपो-वृद्धिगता पञ्च ये ।
ये चाष्टाङ्गमहानिमित्तकुशलाश्चाष्टौ वियाश्चारिणः ॥
पञ्चज्ञानधराश्चयेपि विपुला, ये बुद्धि-ऋद्धीश्वराः ।
सप्तैते सकलार्चिता मुनिवराः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ॥३॥

ज्योतिर्व्यन्तर-भावनामर-गृहे, मेरौ कुलाद्रौ स्थिताः ।
जम्बूशाल्मलिचैत्यशाखिषु तथा, वक्षार-रूप्याद्रिषु ।।
इक्ष्वाकारगिरौ च कुण्डलनगे, द्वीपे च नन्दीश्वरे ।
शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहाः कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ।।४।
कैलाशो वृषभस्य निर्वृत्ति-मही, वीरस्य पावापुरी ।
चम्पा या वासुपूज्यसज्जिनपतेः सम्मेदशैलोऽर्हताम् ।।
शेषाणामपि चोर्जयन्तशिखरी नेमीश्वरस्यार्हतः ।
निर्वाण-वनयः प्रसिद्धविभवाः, कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ।।५।।
सर्पो हारलता भवत्यसिलता, सत्पुष्पदामायते ।
सम्पद्येत रसायनं विषमपि, प्रीतिं विधत्ते रिपुः ।।
देवा यान्ति वशं प्रसन्नमनसः, किंवा बहु ब्रूमहे ।
धर्मादेव नभोऽपि वर्षति तरां, कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ।।
यो गर्भावतरोत्सवे भगवतां, जन्माभिषेकोत्सवे ।
यो जातः परिनिष्क्रमेण विभवो, यः केवलज्ञानभाक् ।।
यः कैवल्यपुरप्रवेशमहिमा, सम्पादितः स्वर्गिभिः ।
कल्याणानि च तानि पञ्च सततं, कुर्वन्तु ते मङ्गलम् ।।७।
आकाशं मूर्त्यभावा-दघकुलदहना-दग्निरुर्वी क्षमाप्ता ।
नैः संगादायुरापः-प्रगुणशमतया, स्वात्मनिष्ठैः सुयज्वा ।
सोमः सौम्यत्वयोगा-द्रविरिति च विदु-स्तेजसः सन्निधानाद् ।
विश्वात्मा विश्वचक्षु-र्वितरतु भवतां, मंगलं श्रीजिनेशः ।।८।।
इत्थं श्री जिनमंगलाष्टकमिदं, सौभाग्य-सम्पत्करं ।
कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थङ्कराणां मुखाः ।।
ये शृण्वन्ति पठन्ति तैश्च सुजनैः, धर्मार्थकामान्विताः ।
लक्ष्मीर्लभ्यत एव मानवहिता, निर्वाणलक्ष्मीरपि ।।९।।

।। इति मंगलाष्टकम् ।।

ऋषि-मंडल-स्तोत्र

आद्यंताक्षरसंलक्ष्यमक्षरं व्याप्य यस्थितम् ।
अग्निज्वालासमं नादं बिन्दुरेखासमन्वितं ।।१।।
अग्निज्वालासमाक्रान्तं मनोमलविशोधनं ।
दैदीप्यमानं हृत्पद्मे तत्पदं नौमि निर्मलं ।। युग्मं ।।
ॐनमोऽर्हद्भ्यः ईशेभ्य. ॐ सिद्धेभ्यो नमो नमः ।
ॐनम. सर्वसूरिभ्यः उपाध्यायेभ्य. ॐ नम. ।।३।।
ॐ नमः सर्वसाधुभ्यः तत्त्वदृष्टिभ्य. ॐ नमः ।
ॐ नमः शुद्धबोधेभ्यश्चारित्रेभ्यो नमो नम. ।।४।।
श्रेयसेस्तु श्रीयेस्त्वेनदर्हदाद्यष्टकं शुभं ।
स्थानेष्वष्टसु सन्यस्तं पृथग्बीजसमन्वितम् ।।५।।
आद्यं पद शिरो रक्षेत् परं रक्षतु मस्तकं ।
तृतीयं रक्षेन्नेत्रे द्वे तुर्यं रक्षेच्च नासिकाम् ।।६।।
पञ्चमं तु मुखं रक्षेत् षष्ठं रक्षतु घंटिका ।
सप्तमं रक्षेन्नाभ्यतं पादातं चाष्टम पुन. ।।७।। युग्मं ।।
पूर्वं प्रणवत. सातः सरेफो द्वित्रिपञ्चषान् ।
सप्ताष्टदशसूर्या-कान् श्रितो बिंदुस्वरान् पृथक् ।।८।।
पूज्यनामाक्षराद्यस्तु पञ्चदर्शनबोधकं ।
चारित्रेभ्यो नमो मध्ये ह्रीं सातसमलंकृतं ।।९।।

जंबूवृक्षधरो द्वीपः क्षीरोदधि-समावृतः ।
अर्हदाद्यष्टकैरष्टकाष्ठाधिष्ठैरलङ्कृतः ।।१।।
तन्मध्ये संगतो मेरु. कूटलक्षैरलंकृतः ।
उच्चैरुच्चैस्तरस्तारतारामंडलमंडितः ।।२।।
तस्योपरि सकारातं बीजमध्यास्य सर्वगं ।
नमामि बिम्बमार्हत्यं ललाटस्थं निरञ्जनं ।।३।। विशेषकं ।।

अक्षयं निर्मलं शांतं बहुल जाड्यतोज्झितं ।
निरीहं निरहंकारं सारं सारतरं घनम् ॥३॥
अनुद्धभूतं शुभं स्फोतं सात्विकं राजसं मतं ।
तामसं विरसं बुद्धं तैजसं शर्वरीसमं ॥५॥
साकारं च निराकारं सरसं विरसं परं ।
परापरं परातीतं परं परपरापरं ॥६॥
सकलं निष्कलं तुष्टं निर्भृतं भ्रांतिवर्जितं ।
निरञ्जनं निराकांक्षं निर्लेपं वीतसंशयं ॥७॥
ब्रह्माणमीश्वरं बुद्धं शुद्धं सिद्धमभंगुरं ।
ज्योतिरूपं महादेवं लोकालोकप्रकाशकं ॥८॥ कुलकं॥
अर्हदाख्य. सवर्णान्तः सरेफो बिंदुमंडितः ।
तूर्यस्वरसमायुक्तो बहुध्यानादिमालितः ॥९॥
एकवर्णं द्विवर्णं च त्रिवर्णं तुर्यवर्णकं ।
पञ्चवर्णं महावर्णं सपरं च परापरं ॥१०॥ युग्मं ॥
अस्मिन् बीजे स्थिताः सर्वे ऋषभाद्या जिनोत्तमाः ।
वर्णैर्निजैर्निजैर्युक्ता ध्यातव्यास्तत्र संगताः ॥११॥
नादश्चंद्रसमाकारो बिंदुर्नीलसमप्रभः ।
कलारुणसमा सातः स्वर्णाभ. सर्वतोमुखः ॥१२॥
शिरःसंलीन ईकारो विनीलो वर्णतः स्मृतः ।
वर्णानुसारिसंलीनं तीर्थकृन्मंडलं नमः ॥१३॥ युग्मं ॥
चन्द्रप्रभपुष्पदन्तौ नादस्थितिसमाश्रितौ ।
बिन्दुमध्यगतौ नेमिसुव्रतौ जिनसत्तमौ ॥१४॥
पद्मप्रभवासुपूज्यौ कलापदमधिश्रितौ ।
शिरईस्थितिसंलीनौ सुपार्श्वपार्श्वौ जिनोत्तमौ ॥१५॥
शेषास्तीर्थङ्कराः सर्वे रहःस्थाने नियोजिताः ।
मायाबीजाक्षरं प्राप्तश्चतुर्विंशतिरर्हतां ॥१६॥

गतरागद्वेषमोहाः सर्वपापविवर्जिताः ।
सर्वदा सर्वलोकेषु ते भवन्तु जिनोत्तमाः ॥१७॥ कलापकं ॥
देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा ।
तयाच्छादितसर्वांगं मां मा हिंसतु पन्नगाः ॥१८॥
देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा ।
तयाच्छादितसर्वांगं मां मा हिंसतु नागिनो ॥१९॥
देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा ।
तयाच्छादितसर्वांगं मा मा हिंसतु गोनसाः ॥२०॥

देवदेवस्य .... मा हिंसतु वृश्चिकाः ॥२१॥*
देवदेवस्य .... मा हिंसतु काकिनी ॥२२॥
देवदेवस्य......... मा हिंसतु डाकिनी ॥२३॥
देवदेवस्य......... मा हिंसतु साकिनी ॥२४॥
देवदेवस्य .... मा हिंसतु राकिनी ॥२५॥
देवदेवस्य......... मा हिंसतु लाकिनी ॥२६॥
देवदेवस्य......... मा हिंसतु शाकिनी ॥२७॥
देवदेवस्य......... मा हिंसतु हाकिनी ॥२८॥
देवदेवस्य.........मा हिंसतु राक्षसाः ॥२९॥
देवदेवस्य......... मा हिंसतु व्यंतराः ॥३०॥
देवदेवस्य.........मा हिंसतु भेकसाः ॥३१॥
देवदेवस्य.........मा हिंसतु ते ग्रहाः ॥३२॥
देवदेवस्य......... मा हिंसतु तस्कराः ॥३३॥
देवदेवस्य.........मा हिंसतु वह्नय. ॥३४॥

*नोट—२० वें श्लोक के बाद २१ वें में भी २० वें श्लोक की भांति पाठ पढते हुए अन्त मे 'गोनसाः' के स्थान पर वृश्चिकाः तथा २२ व २३, २४ आदि में क्रमशः काकिनी, डाकिनी आदि बोलना चाहिए ।

देवदेवस्य……… मा हिंसतु श्रृंगिणः ॥३५॥
देवदेवस्य……… मा हिंसतु दंष्ट्रिणः ॥३६॥
देवदेवस्य……… मा हिंसतु रेलपाः ॥३७॥
देवदेवस्य……… मा हिंसतु पक्षिणः ॥३८॥
देवदेवस्य……… मा हिंसतु मुद्गलाः ॥३९॥
देवदेवस्य……… मा हिंसतु जृंभकाः ॥४०॥
देवदेवस्य……… मा हिंसतु तोयदाः ॥४१॥
देवदेवस्य……… मा हिंसतु सिंहकाः ॥४२॥
देवदेवस्य……… मा हिंसतु शूकराः ॥४३॥
देवदेवस्य……… मा हिंसतु चित्रकाः ॥४४॥
देवदेवस्य……… मा हिंसतु हस्तिनः ॥४५॥
देवदेवस्य……… मा हिंसतु भूमिपाः ॥४६॥
देवदेवस्य……… मा हिंसतु शत्रवः ॥४७॥
देवदेवस्य……… मा हिंसतु ग्रामिणः ॥४८॥
देवदेवस्य……… मा हिंसतु दुर्जनाः ॥४९॥
देवदेवस्य……… मा हिंसतु व्याधयः ॥५०॥

श्रीगौतमस्य या मुद्रा तस्या या भुवि लब्धयः ।
ताभिरभ्यधिकं ज्योतिरर्हः सर्वनिधीश्वरः ॥५१॥
पातालवासिनो देवा देवा भूपीठवासिनः ।
स्वः स्वर्गवासिनो देवाः सर्वे रक्षंतु मामितः ॥५२॥
येऽवधिलब्धया ये तु परमावधिलब्धयः ।
ते सर्वे मुनयो दिव्या मां संरक्षंतु सर्वतः ॥५३॥
ॐ श्रीं ह्रीश्च धृतिर्लक्ष्मीः गौरी चंडी सरस्वती ।
जया वा विजया क्लिन्नाऽजिता नित्या मदद्रवा ॥५४॥
कामांगा कामबाणा च सानंदा नंदमालिनी ।
माया मायाविनी रौद्री कला काली कलिप्रिया ॥५५॥

एताः सर्वा महादेव्यो वर्तते या जगत्त्रये ।
मम सर्वाः प्रयच्छंतु कान्ति लक्ष्मी धृति मति ॥५६॥
दुर्जना भूतवेताला पिशाचा मुद्‌गलास्तथा ।
ते सर्वे उपशाम्यतु देवदेवप्रभावतः ॥५७॥
दिव्यो गोप्य सुदुष्प्राप्य श्री ऋषिमंडलस्तवः
भाषितस्तीर्थनाथेन जगत्त्राणकृतोऽनघ ॥५८॥
रणे राजकुले वह्नौ जले दुर्गे गजे हरौ ।
श्मशाने विपिने घोरे स्मृतो रक्षति मानवं ॥५९॥
राज्यभ्रष्टा निजं राज्यं पदभ्रष्टा निजं पदं ।
लक्ष्मीभ्रष्टा निजं लक्ष्मी प्राप्नुवंति न संशय ॥६०॥
भार्यार्थी लभते भार्यां पुत्रार्थी लभते सुत ।
धनार्थी लभते वित्त नर स्मरणमात्रत ॥६१॥
स्वर्णे रूप्येऽथवा कास्ये लिखित्वा यस्तु पूजयेत् ।
तस्यैवेष्टमहासिद्धिर्गृहे वसति शाश्वती ॥६२॥
भूर्जपत्रे लिखित्वेद गलके मूर्ध्नि वा भुजे ।
धारित सर्वदा दिव्यं सर्वभीतिविनाशिनं ॥६३॥
भूतैः प्रेतैर्ग्रहैर्यक्षैः पिशाचैर्मुद्‌लैस्तथा ।
वातापित्तकफोद्रेको मुच्यते नात्र संशयः ॥६४॥
भूर्भुव स्वस्त्रयीपीठवर्त्तिन शाश्वता जिनाः ।
तै स्तुतैर्वंदितैर्दृष्टैर्यत्फलं तत्फलं स्मृतेः ॥६५॥
एतद्‌गोप्यं महास्तोत्र न देयं यस्य कस्यचित् ।
मिथ्यात्ववासिनो देये बालहत्या पदे पदे ॥६६॥
आचाम्लादितपः कृत्वा पूजयित्वा जिनावलिं ।
अष्टसाहस्रिको जाप्यः कार्यस्तत्सिद्धिहेतवे ॥६७॥
शतमष्टोत्तर प्रातर्ये पठंति दिने दिने ।
तेषां न व्याधयो देहे प्रभवंति च सम्पदः ॥६८॥

अष्टमासावधि यावत् प्रातः प्रातस्तु यः पठेत् ।
स्तोत्रमेतन्महातेजस्त्वर्हद्बिंबं स पश्यति ॥६९॥
दृष्टे सत्यार्हते बिबे भवे सप्तमके ध्रुवं ।
पदं प्राप्नोति विश्रस्तं परमानन्दसम्पदा ॥७०॥ युग्मं ॥
इदं स्तोत्रं महास्तोत्रं स्तुतीनामुत्तमं पर ।
पठनात्स्मरणाज्जाप्यात् सर्वदोषैर्विमुच्यते ॥७१॥

—०—

कल्याण मन्दिर स्तोत्र भाषा

दोहा—परमज्योति परमात्मा, परमज्ञान परवीन ।
बन्दो परमानन्दमय, घट घट अन्तरलीन ॥१॥

चौपाई (१५ मात्रा)

निर्भयकरन परम परधान, भवसमुद्र जलतारण जान ।
शिव मन्दिर अघहरण अनिन्द, वन्दहुं पास चरण अरविन्द ॥२॥
कमठमानभञ्जन वरवीर, गरिमासागर गुण गम्भीर । सुरगुरु पार लहें नहिं जासु, मै अजान जपो जस तासु ॥ ३ ॥ प्रभुस्वरूप अति अगम अथाह, क्यों हमसे इह होय निवाह । ज्यो दिनअंध उलूको पोत, कहि न सके रविकिरन उदोत ॥४॥ मोहहीन जाने मनमांहि, तोउ न तुमगुण वरणे जांहि । प्रलयपयोधि करे जल वीन । प्रगटहि रतन गिने तिहि कौन ॥५॥ तुम असंख्य निर्म्मलगुणखानि, मै मतिहीन कहों निजवानि । ज्यो बालक निज बांह पसार, सागर परिमित कहै विचार ॥६॥ जो जोगीन्द्र करहि तप खेद, तउ न जानहीं तुम गुणभेद । भगतिभाव मुझ मन अभिलाख, ज्यो पंखी बोलहि निज भाख ॥७॥ तुम जस महिमा अगम अपार, नाम एक त्रिभुवन आधार । आवे पवन पद्मसर होय, ग्रीषम तपत निवारै सोय ॥८॥ तुम आवत भविजन मनमांहि, कर्मनिबंध शिथिल हो

जाहिं । ज्यो चंदनतरु बौलहि मोर, डरहि भुजङ्ग लगे चहुं ओर ॥९॥ तुम निरखन जन दीनदयाल, सङ्कटते छूटहिं ततकाल । ज्यों पशु घेर लेहिं निशिचोर, ते तज भागहि देखत भोर ॥ १० ॥ तू भविजन्न तारक किम होइ, ते चित धार तिरहिं ले तोहि । यह ऐसे करि जान स्वभाव, तिरे मसक ज्यो गर्भितवाउ ॥ ११ ॥ जिन सब देव किये वश वाम, तैं छिनमे जीत्यो सो काम । ज्यों जल करै अग्निकुलहानि, बडवानल पीवै सो पानि ॥ १२ ॥ तुम अनन्त गुरुवागुण लिये, क्योकरि भक्ति धरूं निज हिये । 'ह्वै लघुरूप तिरहि ससार, प्रभु महिमा है अथक अपार ॥ १३ ॥ क्रोध निवार कियो मनशाति, कर्म सुभटजीते किहिं भाति । यह पटतर देखहु संसार, नोलवृक्ष ज्यों दहैं तुसार ॥ १४ ॥ मुनिजन हिये कमल निज टोहि, सिद्धरूप समध्यावहि तोहि । कमल–कर्णिका विन नहि और, कमलबीज उपजन की ठौर ॥ १५ ॥ जब तुह ध्यानधरै मुनि कोय, तब विदेह परमातम होय । जैसे धातु शिलातन त्याग, कनक-स्वरूप धरै जब आग ॥ १६ ॥ जाके मन तुम करहु निवास, विनस जाय क्यो विग्रह तास । ज्यो महन्त बिच आवे कोय, विग्रह मूल निवारै सोय ॥ १७ ॥ करहिं विबुध जे आतम ध्यान, तुम प्रभावतैं होय निदान । जैसे नीर सुधा अनुमान, पीवत विष विकार की हान ॥१८॥ तुम भगवंत विमल गुणलीन, सकलरूप मानहि मतिहीन । ज्यो पोलिया रोग दृग गहै, वर्ण विवर्ण संखसौ कहै ॥ १९ ॥

दोहा—निकट रहै उपदेश मुनि, तरुवर भये अशोक ।
ज्यो रवि ऊगत जोव सब, प्रगट होत भुविलोक ॥२०॥
सुपनवृष्टि जो सुर करहिं, हेठ बीटमुख सोहि ।
त्यों तुम सेवत सुमनजन, बंध अधोमुख होहि ॥ २१ ॥
उपजी तुम हिय उदधितैं, वाणी सुधा समान ।
जिहि पीवत भविजन लहहि, अजर अमर पदथान ॥२२॥

कहहिं सार तिहुंलोक को, ये सुर चामर दोय।
भावसहित जो जिन नमे, तसुगति ऊरध होय ॥२३॥
सिंहासन गिरि मेरु सम, प्रभुधुनि गरजित घोर।
श्याम सुतन घनरूप लख, नाचत भविजन मोर ॥२४॥
छविहत होहि अशोकदल, तुम भामंडल देख।
वीतराग के निकट रह, रहत न राग विशेख ॥२५॥
सीखि कहै तिहुंलोकको, यह सुरदुन्दुभि नाद।
शिवपथ सारथिवाह जिन, भजहू तज परमाद ॥२६॥
तीन छत्र त्रिभुवन उदित, मुक्तागण छविदेत।
त्रिविधरूप धर मनहुं शशि, सेवत नखत समेत ॥२७॥

पद्धरिछन्द

प्रभु तुम शरीर दुति रतन जेम, परताप पुञ्ज जिम शुद्ध हेम।
अति धवलसुजस रूपा समान, तिनके गढ तीन विराजमान ॥२८॥
सेवहिं सुरेन्द्र कर नमित भाल, तिन शीस मुकुट तज देहिं माल।
तुव चरण लगत लहलहे प्रीति, नहि रमहि और जन सुमनरीति ।२६
प्रभुभोग विमुख तन कर्मदाह, जन पार करत भवजन निवाह।
ज्यों माटीकलश सुपक्व होय, ले भार अधोमुख तिरहि तोय ॥३०॥
तुम महाराज निर्धन निराश, तज विभव २ सब जग विकाश।
अक्षर स्वभावसैं लिखै न कोय, महिमा अनन्त भगवंत सोय ॥३१॥
कोप्यो सु कमठ निज वैर देख, नित करी धूल वर्षा विशेष।
प्रभु तुम छाया नहिं भई हीन, सो भयो पापी लंपट मलीन ॥३२॥
गरजंत घोर घन अंधकार, चमकंत विज्जु जल मूसलधार।
वरषंत कमठ धरध्यान रुद्र, दुस्तर करन्त निजभवसमुद्र ॥३३॥

वस्तु छन्द

मेघमाली मेघमाली आप बल फोरि।
भेद तुरत पिशाचगण, नाथ पास उपसर्ग करण।

अग्निजाल झलकत मुख, धुनि करंत जिमि मत्तवारण।
कालरूप विकराल तन, मुंडमाल तिह कंठ।
ह्वै निशङ्क वह रङ्कनिज, करे कर्म दृगगंठ॥

चौपाई।

जे तुम चरणकमल तिहुंकाल, सेवहिं तज माया जञ्जाल। भाव भगति मन हरष अपार, धन्य धन्य जग तिन अवतार॥३५॥ भवसागर महं फिरत अजान, मैं तुम सुजस सुन्यो नहि कान। जो प्रभु नाम मंत्र मन धरै, तासौं विपति भुजङ्गम डरै॥३६॥ मनवांछित फल जिनपदमांहि, मै पूरब भव पूजे नाहिं। माया मगन फिरयो अज्ञान, करहि रङ्करञ्जन मुझ अपमान॥३७॥ मोहतिमिर छायो दृग मोहि, जन्मान्तर देख्यो नहि तोहि। तो दुर्जन मुझ संगति गहै, मरमछेद के कुवचन कहै॥३८॥ सुन्यो कान जस पूजे पाय, नैनन देख्यो रूप अघाय. भक्ति हेतु न भयो चित चाव, दुखदायक किरिया विन भाव॥३९॥ महाराज शरणागत पाल, पतितउधारन दीनदयाल। सुमिरण करहूं नाथ निज शीस, मुझ दुख दूर करहु जगदीश॥४०॥ कर्मनिकन्दन महिमासार, अशरण शरण सुजश विस्तार। नहि सेये प्रभु तुमरे पाय, तो मुझ जन्म अकारथ जाय। ॥४१॥ सुरगण वन्दित दया निधान, जगतारण जगपति जग जान। दुखसागर ते मोहि निकास, निर्भय थान देहु सुखराशि॥४२॥ मै तुम चरण कमल गुन गाय, बहुविधि भक्ति करो मनलाय। जन्म जन्म प्रभु पावहु तोहि, यह सेवाफल दीजे मोहि॥४३॥

दोधकान्त बेसरी छन्द, षट्पद

इहि विधि श्री भगवन्त, सुजस जे भविजन भाषहि। ते निज पुण्य भंडार, सञ्च चिर पाप प्रणाशहिं। रोम रोम हुलसंति अंग प्रभु गुण मन ध्यावहि। स्वर्ग सम्पदा भुञ्ज, वेग पञ्चमगति पावहिं। यह कल्याण मन्दिर कियो, कुमुदचन्द्र की बुद्धि। भाषा कहत बनारसी, कारण समकित शुद्धि॥ ४४॥ इति॥

एकीभाव स्तोत्र

दोहा छन्द ।

वादिराज मुनिराजके, चरण कमल चितलाय ।
भाषा एकीभाव की, करूं स्वपर सुखदाय ।।

जो अति एकीभाव भयों मानो अनिवारी, समुझै कर्म्म प्रबन्ध करत भव भव दुःखहारी। ताहि तिहारी भक्ति जगत रविजो निरवारै, सो अब और क्लेश कौनसो नाहि बिदारै ।। १ ।। तुम जिन जोतिस्वरूप दुरित अन्धियारि निवारि, सो गणेश गुरु कहैं तत्त्व विद्याधन धारी। मेरे चितधर मांहि बसो तेजोमय यावत, पापतिमिर अवकाश वहां सो क्यों कर पावत ।।२।। आनन्द आंसू वदन धोय तुम सो चित सानै, गदगद सुर सो सुयस मन्त्र पढ पूजा ठानै। ताके बहुबिधि व्याधिव्याल चिरकाल निवासी, भाजै थानक छोड देहबमियों के वासी ।।३।। दिवसे आवनहार भये भवि भाग उदय बल, पहले ही सुर आय कनकमय कीन महीतल। मन गृह ध्यान दुबार आय निवसो जगनामी, जो सुवर्ण तन तरो कौन यह अचरज स्वामी ।४। प्रभु सब जगके बिना हेतु बांधव उपकारी, निरावर्ण सर्वज्ञ शक्ति जिनराज तिहारी। भक्ति रचित मम चित्त सेज नित वास करोगे, मेरे दुःख संताप देख किमि धीर धरोगे ।।५।। भववनमें चिरकाल भ्रम्यो कुछ कही न जाई, तुम थुति कथा पीयूष वापिका भागन पाई। शशितुषार घनसार हार शीतल नहिं जा सम, करत न्हौन तिस मांहि क्यों न भवताप बुझै मम ।।६।। श्री विहार परिवाह होत शुचि रूप सकल जग, कमल कनक आभास सुरभि श्रीवास धरत पग। मेरो मन सर्वांग परस प्रभुको सुख पावे, अब सो कौन कल्याण जो न दिन दिन ढिग आवे ।। ७ ।। भव तज दुखपद बसे काम मद सुभट संघारे, जो तुमको निरखंत सदा प्रिय-

दास तिहारे। तुम वचनामृत पान भक्ति अञ्जुलिसो पीवै, तिन्हें भयानक क्रूर रोग रिपु कैसे छीवे ।८। मानथंभ पाषाण आन पाषाण पटतर, ऐसे और अनेक रत्न दीखैं जग अन्तर। देखत दृष्टिप्रमाण मानमद तुरत मिटावै, जो तुम निकट न होय शक्ति यह क्यों कर पावै ।।६।। प्रभुतन पर्वत परस पवन उरमें निबहे है, तासो तत्क्षण सकल रोगरज बाहि रहे है। जाके ध्यानाहूत बसो उर अंबुज माही, कौन जगत उपकार करण समरथ सो नाही ।।१०।। जन्म जन्म के दुःख सहे सब ते तुम जानो, याद किये मुझ हिये लगैं आयुध सो मानो। तुम दयालु जगपाल स्वामि मै शरण गही है, जो कुछ करना होय करो परणाम वही है ।।११।। मरण समय तुम नाम मन्त्र जीवक तै पायो, पापाचारी स्वान प्राण तज अमर कहायो। जो मणि माला लेय जपै तुम नाम निरन्तर, इन्द्र सम्पदा लहै कौन सशय इस अन्दर ।१२। जे नर निर्मल ज्ञान मान शुचि चारित साधैं। अनवधि सुख की सार भक्ति तालो नहि हाथैं। सो शिव बाछक पुरुष मोक्षपट-केम उघारे, मोह मुहर दिढकरी मोक्षमन्दिर के द्वारे ।।१३।। शिवपुर केरो पथ पापतम सो अति छायो, दुख स्वरूप बहु कपट खांड सो विकट बतायो। स्वामी सुख सो तहा कौन जन-मारग लागे, प्रभु प्रवचन मणिदीप जौन के आगै आगैं ।।१४।। कर्म पटल भूमाहि दबी आतमनिधि भारी, देखत अति सुख होय विमुखजन नाहि उघारी। तुम सेवक तत्काल ताहि निश्चिय कर धारैं, स्तुति कुदाल सो खोद बद भू कठिन विदारे ।।१५।। स्याद-वाद गिर उपज मोक्ष सागर लो धाई, तुम चरणाम्बुज परमभक्ति गङ्गा सुखदाई। मो चित निर्मल थयी न्होन रुचि पूरव तामै। अब वह हो न मलीन कौन जिन संशय यामै ।। १६ ।। तुम शिवसुखमय प्रकट करत प्रभु चितवन तेरो, मै भगवान् समान भाव यों बरतै मेरो। यदपि झूठ है तदपि तृपत निश्चल उपजावै, तुम प्रसाद

सकलङ्क जीव वांछित फल पावै ।। १७ ।। वचन जलधि तुम देव सकल त्रिभुवन मे व्यापै, भंग तरंगिनी विकथ वाद मल मलिन उथापै । मन सुमेरु सों मथै ताहि जे सम्यकज्ञानी, परमामृत सों तृपत होंहि ते चिर लों प्राणी ।। १८ ।। जो कुदेव छवि हीन वसन भूषण अभिलाषै, बैरी सो भयभीत होय मो आयुध राखै । तुम सुन्दर सर्वंग शत्रु समरथ नहि कोई, भूषण वसन गदादि ग्रहण काहे को होई ।।१९।। सुरपति सेवा करै कहा प्रभु प्रभुता तेरी, सो शलाघना लहै मिटै जग सो जब फेरी । तुम भव जलधि जहाज तोहि शिव कंत उचरिये, तुही जगत जनपाल नाथ थुति की थुति करिये ।।२०।। वचन जाल जड रूप आप चिन्मूरति भांई, तातै थुति आलाप नांहि पहुंचै तुम तांई । तो भी निष्फल नांहि भक्ति रस भीने वायक, सन्तन को सुरतरु समान वांछित वरदायक ।।२१।। कोप कभी नहि करो प्रीत कबहु नहि धारो, अति उदास बेचाह चित्त जिनराज तिहारौ । तदपि आन जग बहै बैर तुम निकट न लहिये, यह प्रभुता जग तिलक कहा तुम बिन सरधैये ।।२२।। सुर तिय गावै सुयश सर्व गति ज्ञान स्वरूपी, जो तुमको थिर होहि नमै भवि आनन्दरूपी । ताहि क्षेमपुर चलन बाट बाकी नहि हो है, श्रुत के सुमरण माहि सो न कब ही नर मोहे ।।२३।। अतुल चतुष्टयरूप तुम्है जो चितमे धारै, आदर सो तिहुँकाल माहि जगथुति विस्तारै । सो सुकृत शिवपन्थ भक्ति रचना कर पूरै, पञ्चकल्याणक ऋद्धि पाय निश्चय दुख चूरै ।।२४।। अहो जगतपति पूज्य अवधिज्ञानी मुनि हारे, तुम गुण कीर्तन माहि कौन हम मन्द बिचारे । स्तुति छल सों तुम विषै देव आदर विस्तारे, शिव सुख पूरण हार कल्पतरु येही हमारे ।।२५।। वादिराज मुनिराज शब्दविद्या के स्वामी, वादिराज मुनिराज तर्कविद्या पति नामि । वादिराज मुनिराज काव्य करता अधिकारी, वादिराज मुनिराज बडे भविजन उपकारी ।।२६।।

दोहा—मूल अर्थ बहुविधि कुसुम, भाषा सूत्र मझार ।
भक्तिमाल 'भूधर' करी, करो कंठ सुखकार ।।१।।

इति एकीभावभाषा स्तोत्रम्

नामावली स्तोत्रम्

छन्द नयमालिनी २६ मात्रा

जय जिनन्द सुखकन्दनमस्ते, जय जिनन्द जिन फन्द नमस्ते । जय जिनन्द वरबोध नमस्ते, जय जिनन्द जित क्रोध नमस्ते ।।१।। पाप ताप हर इन्दु नमस्ते, अर्ह वरन जुत विन्दु नस्ते । शिष्टाचार विशिष्ट नमस्ते, इष्ट मिष्ट उत्कृष्ट नमस्ते ।।२।। पर्म धर्म वर शर्म नमस्ते, मर्म भर्म घन धर्म नमस्ते । दृगविशाल वर भाल नमस्ते हृद दयाल गुनमाल नमस्ते ।।३।। शुद्धबुद्ध अविरुद्ध नमस्ते, रिद्धि सिद्धि वर वृद्धि नमस्ते । वीतराग विज्ञान नमस्ते, चिद्विलास धृत ध्यान नमस्ते ।। ४ ।। स्वच्छ गुणाबुधि रत्न नमस्ते, सत्व हितङ्कर यत्न नमस्ते । कुनयकरी मृगराज नमस्ते, मिथ्या खग वर बाज नमस्ते ।। ५ ।। भव्य भवोदधि तार नमस्ते, शर्मामृत सित सार नमस्ते । दरश ज्ञान सुखवीर्य नमस्ते, चतुरानन धर धीर्य नमस्ते ।। ६ ।। हरिहर ब्रह्मा विष्णु नमस्ते, मोह मर्दमनु जिष्णु नमस्ते । महादान महाभोग नमस्ते, महाज्ञान महजोग नमस्ते ।।७।। महा उग्र तप सूर नमस्ते, महा मौन गुण भूरि नमस्ते । धर्म चक्रि वृष केतु नमस्ते, भवसमुद्रशत सेतु नमस्ते ।।८।। विद्याईश मुनीश नमस्ते, इन्द्रादिक नुत शीस नमस्ते । जय रत्नत्रय राय नमस्ते, सकल जीव सुखदाय नमस्ते । अशरण शरण सहायक नमस्ते, भव्य सुपन्थ लगाय नमस्ते । निराकार साकार

नमस्ते, एकानेक अधार नमस्ते ।।१०।। लोकालोक विलोक नमस्ते, त्रिधा सर्व गुण थोक नमस्ते । सल्ल दल्लदल मल्ल नमस्ते, कल्ल मल्ल जितलल्ल नमस्ते ।। ११ ।। भुक्ति मुक्ति दातार नमस्ते, उक्ति सुक्ति शृङ्गार नमस्ते । गुण अनन्त भगवन्त नमस्ते, जै जै जै जयवन्त नमस्ते ।।१।।

यह पढकर जिन भगवान के चरणों के आगे पुष्पाञ्जलि क्षेपण करना चाहिए ।

अथ पखवाड़ा

बानी एक नमों सदा, एक दरव आकाश ।
एक धर्म अधर्म दरब, पडवा शुद्ध प्रकाश ।।

दोज दुनंद सिद्ध संसार, संसारी त्रस थावर धार ।
सुपर दया दोनों मन धरो, राग दोष तजि समता करो ।।
तीज त्रिपात दान नित भजो, तीन काल सामायिक सजो ।
व्यय उत्पाद ध्रौव्य पद साध, मन वच तन थिर होय समाध ।
चौथ चार विधि दान विचार, चारों आराधन संभार ।
मैत्री आदि भावना चार, चार बन्धसों भिन्न निहार ।।
पांच पञ्च लब्धि लहि जोव, भज परमेष्ठी पञ्च सदोव ।
पांच भेद स्वाध्याय बखान, पांचों पैतारे पहचान ।।
छठ छः लेश्या के पुरनाम, पूजा आदि करो परकाम ।
पुद्गल के जानों षट्भेद, छहों काल लखिकै सुख वेद ।।
सातै सात नरक से डरो, सात खेत धन जलसों भरो ।
सातै नय समझो गुणवन्त, सात तत्त्व सरधाकरि सन्त ।।
आठे आठ दरस के अंग, ज्ञान आठ विध सहो अभंग ।
आठ भेद पूजा जिनराय, आठ योग कीजे मन लाय ।।
नौमी शील बाडि नवपाल, प्रायश्चित्त नो भेद संभाल ।
नौ क्षायिक गुण मनमे राख, नौ कषाय की तजि अभिलाख ।।

दशमी दश पुद्गल परजाय, दशों बंध हर चेतन राय।
जनमत दश अतिशय जिनराज, दशविधि परिग्रहसों क्या काज ॥
ग्यारह ग्यारह भाव समाज, सब अहमिन्द्र ग्यारह राज।
ग्यारह जोग सुरलोक मझार, ग्यारह अंग पढे मुनिसार ॥
बारह बारह विधि उपयोग, बारह प्रकृति दोष की रोग।
बारह चक्रवर्ति लखि लेहु, बारह अव्रत को तज देहु ॥
तेरसि तेरह श्रावक थान, तेरह भेद मनुज पहचान।
तेरह राग प्रकृति सब निद, तेरह भाव अयोग जिनन्द ॥
चौदस चौदह पूरब जान, चौंदह वाहिज अंग बखान।
चौदह अन्तर परिग्रह डार, चौंदह जीव समास विचार ॥
मावस सम पन्द्रह परमाद, करम भूमि पन्द्रह अनाद।
पञ्च शरीर पन्द्रह रूप, पन्द्रह प्रकृति हरे मुनि भूप ॥
सोलह कषाय राह घटाय, सोलह कला सम भावन भाय।
पूरनमासी सौलै ध्यान, सौलै स्वर्ग कहे भगवान् ॥
सब चर्चा की चर्चा एक, आतम पर पुद्गल पर टेक।
लाख कोटि ग्रन्थन को सार, भेद ज्ञान अरु दया विचार ॥

दोहा—गुण विलास सब तिथि कही, है परमारथ रूप।
पढ़ें सुने जो मन धरे, उपजे ज्ञान अनूप ॥

अथ अठाई रासा

बरत अठाई जे करे ते पावें भव पार प्राणी ॥टेक॥
जम्बूद्वीप सुहावणो, लख जोजन विस्तार प्राणी ॥१॥
भरत क्षेत्र दक्षिण दिशा, पोदणपुर तिहु सार प्राणी।
विद्यापति विद्याधरो, सोमाराणी राय प्राणी ॥बरत० ॥२॥
चारण मुनि तहं पारणो, आये राजा गेह प्राणी।
सोमाराणी आहार दे, पुन्य बढा अति नेह प्राणी ॥बरत०॥३॥

तिसी समय नभ देवता, चले जात विमान प्राणी ।
जै जै शब्द भयो घनो, मुनिवर पूछ्यो ज्ञान प्राणी ।वरत०॥४॥
मुनिवर बोले सुन राणी, नन्दीश्वर को जात प्राणी ।
जे नर करहिं स्वभाव सो, ते पावे शिवकांत प्राणी ।वरत० ॥५॥
यह वचन राणी सुनो, मन मे भयो आनन्द प्राणी ।
नंदीश्वर पूजा करे, ध्यावे आदि जिनेन्द्र प्राणी ।वरत०॥६॥
कार्तिक फागुन साढ मे, पाले मन वच देह प्राणी ।
वसु दिवस पूजा करै, तीन भवातर लेय प्राणी ।वरत० ॥७॥
विद्यापति सुनि चालियो, रच्यो विमान अनूप प्राणी ।
राणी बरजे राय को, तू तो मानुष भूप प्राणी । वरत० ॥८॥
मानुषोत्र लंघत नही, मानुष जेती जात प्राणी ।
जिनवाणी निश्चय सही, तीन भवन विख्यात प्राणी ।वर०॥९॥
सो विद्यापति ना रहो, चलो नन्दीश्वर द्वीप प्राणी ।
मानुषोत्र गिरिसो मिलो, जाय न मान महीप प्राणी ।वर०॥१०॥
मानुषोत्र को भैटते, परचो धरणि सिर भार प्राणी ।
विद्यापति भव चूरियो, देव भयो सुरसार प्राणी ।वरत०॥११॥
दीप नन्दीश्वर छिनक मे, पूजा वसु विधि ठान प्राणी ।
करी सु मन वचकाय से, मालादई करमान प्राणी ।वरत०॥१२॥
आनन्द सो फिर घर आयो, नन्दीश्वर कर जात प्राणी ।
विद्यापति का रूप कर, पूछो राणी बात प्राणी ।वरत०॥१३॥
राणी बोली सुन राजा, यह तो कबहूँ न होय प्राणी ।
जिनवाणी मिथ्या नही, निश्चय मनमे सोय प्राणी ।वर०॥१४॥
नन्दीश्वर की जयमाला, राय दिखाई आन प्राणी ।
अबतू साचो मोहि जाणो, पूजन करी बहुमान प्राणी ।व०॥१५॥
राणी फिर तासो कहै, यह भव परसै नाहि प्राणी ।
पश्चिम सूर्य उदय हुए, जिनवाणी शुचि ताहि प्राणी ।वर०॥१६॥

राणी सों नृप फिर बोल्यो, बावन भवन जिनालय प्राणी ।
तेरह तेरह मै बन्दे, पूजन करो तत्काल प्राणी । वरत० ॥१७॥
जयमाला तहां मो मिलो, आयो हूं तुझ पास प्राणी ।
अब तू मिथ्या मत माने, पूजा भई अवश्य प्राणी ।वरत० ॥१८॥
पूरव दक्षिण मै बन्दे, पश्चिम उत्तर जात प्राणी ।
मै मिथ्या नही भाषहूं, मोहि जिनवरकी आण प्राणी ।वरत०॥१९॥
सुनि राजा से तब कही, जिन वाणी शुभ सार प्राणी ।
ढाई दीपन लंघई, मानुष जन विस्तार प्राणी ।वरत०॥२०॥
विद्यापति से सुर भयो, रूप धरो शुभ सोई प्राणी ।
राणीकी स्तुति करी, निश्चय समकित तोय प्राणी ।वरत०॥२१॥
देव कहे अब सुन राणी, मानुषोत्र मिलो जाय प्राणी ।
तिहते चय में सुर भयो, पूज नन्दीश्वर आय प्राणी ।वरत०॥२२॥
एक भवांतर मो रहो, जिन शासन प्रमाण प्राणी ।
मिथ्याती माने नही, श्रावक निश्चय आन प्राणी ।वरत०॥२३॥
सुरचय तहा हथिनापुरी, राज कियो भरपूर प्राणी ।
परिग्रह तज संयम लियो, करम महागिर चूर प्राणी ।वरत०॥२४॥
केवल ज्ञान उपार्ज कर, मोक्ष गयो मुनिराय प्राणी ।
शाश्वत सुख विलसै सदा, जन्म-मरण मिटाय प्राणी ।वरत०॥२५॥
अब राणी की सुनो कथा, संयम लीनो सार प्राणी ।
तप कर चयके सुर भयो, विलसे सुख अपार प्राणी ।वरत०॥२६॥
गजपुरी नगरी अवतरो, राजकरो बहु भाय प्राणी ।
सोलह कारण भाइयो, धर्म सुनो अधिकाय प्राणी ।वरत०॥२७॥
मुनि सङ्घाटक आइयो, माली सार जनाय प्राणी ।
राजा बन्दो भावसों, पुन्य बड़ो अधिकाय प्राणी ।वरत०॥२८॥
राजा मन वैरागियो, संयम लीनो सार प्राणी ।
आठ सहस्त्र नृप साथले, यह संसार असार प्राणी ।वरत० ॥२९॥

केवल ज्ञान उपार्ज के, दोय सहस्र निर्वाण प्राणी।
दोय सहस्र-सुख स्वर्ग के, भोगे भोग सुथान प्राणी ।वरत०।।३०।।
चार सहस्र भू-लोक मे हण्डे बहु संसार प्राणी।
काल पाय शिवपुर गये, उत्तम धर्म विचार प्राणी ।वरत०।।३१।।
वरत अठाई जे करें, तीन जन्म परमाण प्राणी।
लोकालोक सु जाणही, सिद्धारथ कुल ठाण प्राणी। वरत० ।।३२।।
भव समुद्र के तरण को, बावन नौका जान प्राणी।
जो जिय करें स्वभाव सों, जिनवर सांच बखान प्राणी। वर०।।३३
मन वच काया जे पढे, ते पावे भवपार प्राणी।
विनयकीर्ति सुखसों भणें, जनम सफल संसार प्राणी।
वरत अठाई जे पढे, ते पावें भवपार प्राणी। वरत० ।।३४।।

वैराग्यभावना भजन

संत साधू बनके विचरूं, वह घड़ी कब आयगी।
शांति तब मन मे मेरे वैराग्य की छा जायगी ।। टेक ।।
मोह ममता त्याग दूं सब कुटुम्ब परिवार से।
छोड दूं झूठी लगन धन धाम अरु घर बार से ।।
मोह तजदूं महलो-मंदिर और चमन गुलजार से।
बन मे जा डेरा करूं मुंह मोड़ इस संसार से ।।१।।
इस जगत मे जो पदारथ आ रहे मुझको नजर।
थिर नहीं है एक इनमें, है ये सब के सब अथिर।
जिन्दगी का क्या भरोसा, यह रही हरदम गुजर ।।
दम है जब तक दम मे दम है दममें दम से बे खबर ।।२।।
कौनसी वह चीज है जिस पर लगाऊँ दिल यहां।
आज जीवन बन रहा, जो कल भला वह फिर कहा।
माल औ धनकी हकीकत है जमाने पर अयां।

क्या भरोसा लक्ष्मी का अब यहा और कल वहा ॥३॥
बाप मा अरु बहन भाई, बेटा बेटी नार क्या ।
सब सगे अपनो गरज के यार क्या परिवार क्या ॥
बात मतलब मे करे सब जगत क्या संसार क्या ।
बिन गरज पूछे न कोई बात क्या तकरार क्या ॥४॥
था अकेला हू अकेला अरु अकेला ही रहूँ ।
जो पड़े दुख मे सहे अरु जो पडे सो मैं सहूं ॥
कौन है अपना सहायक कौन का शरणा गहूँ ।
फिर भला किसको जगत मे अपना हमराही कहूँ ॥५॥
ज्ञानरूपी जल से अग्नि क्रोध की शीतल करूँ ।
मान माया लोभ राग अरु द्वेष आदिक परिहरूँ ॥
वश मे विषयो को करूँ अरु सब कषायो को हरूं ।
शुद्ध चित आनन्द मे मैं ध्यान आतम का धरूं ॥६॥
जगके सब जीवो मे अपना प्रेम हो अरु प्यार हो ।
और मेरी इस देह मे ससार का उपकार हो ॥
ज्ञान का प्रचार हो अरु देश का उद्धार हो ।
प्रेम और आनन्द का व्यवहार घर घर द्वार हो ॥७॥
काल सर पर कालका खञ्जर लिए तैयार है ।
कौन बच सकता है इससे इसका गहरा वार है ॥
हाय जब हर हर कदम पर इस तरह से हार है ।
फिर न क्यो वह राह पकड़ूँ सुख का जो भंडार है ॥८॥
प्रेमका मन्दिर बनाकर ज्ञानदेव कूं दूं बिठा ।
और आनन्द शाति के घडियाल घण्टे दूं बजा ॥
और पुजारी बनके दूं मै सबको आतम रस चखा ।
यह करूँ उपदेश जगमे कर भला होगा भला ॥९॥
आय वह कब शुभ घड़ी जब वन विचरता मै फिरूँ ।

शांति से तब शांति गङ्गा का मैं निर्मल जल पीऊँ ॥
'ज्योति' से गुणगान को अज्ञान सब जगका दहूं ।
होय सब जगका भला यह बात मैं हरदम चहूं ॥१०॥

भावना भजन

भावना दिन रात मेरी सब सुखी संसार हो ।
सत्य संयम शीलका व्यवहार घर घर बार हो ॥टेक॥
धर्म का प्रचार हो अरु देश का उद्धार हो ।
और यह उजड़ा हुआ भारत चमन गुलजार हो ॥१॥
रोशनी से ज्ञान की संसार में परकाश हो ।
धर्मकी तलवार से हिंसा का सत्यानाश हो ॥२॥
शान्ति अरु आनन्द का हर एक घर में वास हो ।
वीरवाणी पर सभी संसार का विश्वास हो ॥३॥
रोग और भय शोक होवें दूर सब परमात्मा ।
कर सके कल्याण 'ज्योति' सब जगत की आतमा ॥४॥

पद्मावती स्तोत्र

जिन शासनी हंसासनी पद्मासनी माता ।
भुज चारते फल चार दे पद्मावती माता ॥टेक॥
जब पार्श्वनाथजी ने मुक्त ध्यान आरम्भा ।

जिनपार्श्व को हुआ तभी केवल सुज्ञान है।
समवादिसरन को बनी रचना महान है ।।
प्रभू ने दिया धर्मार्थ काम मोक्ष दान है।
तब इन्द्र आदि ने किया पूजा विधान है ।। जिन० ।।३।।
जबसे किया तुम पार्श्व के उपसर्ग का विनाश।
तबसे हुआ जस आपका त्रैलोक मे प्रकाश ।।
इन्द्रादि ने भी आपके गुण मे किया हुलास।
किस वास्ते कि इन्द्र खास पार्श्वका है दास ।।जिन० ।।४।।
धर्मानुराग रङ्ग से उमङ्ग भरी हो।
संध्या समान लाल रङ्ग अङ्ग धरी हो ।।
जिन सन्त शीलवन्त पै तुरन्त खड़ी हो।
मनभावती दरसावती आनन्द वडी हो ।। जिन० ।।५।।
जिन धर्म की प्रभावना का भाव किया है।
तिन साधने भी आपकी सहाय लिया है ।।
तब आपने उस बात को बनाय दिया है।
जिनधर्म के निशान को फहराय दिया है ।। जिन० ।।६।।
था बौद्ध ने तारा का किया कुम्भ मे थापन।
अकलङ्कजी से करते रहे बाद बेहापन ।।
तब आपने सहाय किया धाय मात धन।
तारा का हरा मान हुआ बोध उत्थापन ।। जिन० ।।७।।
इत्यादि जहा धर्म का विवाद पडा है।
तहा आपने परवादियो का मान हरा है ।।
तुमसे यह स्याद्वाद का निशान खरा है।
इस वास्ते हम आपमे अनुराग धरा है ।। जिन० ।।८।।
तुम शब्द ब्रह्मरूप मन्त्र मूर्ति धरैया।
चिन्तामणी समान कामना की भरैया ।।

जप जाप जोग जैन की सब सिद्धि करैया ।
परवाद के पुरयोग की तत्काल हरैया ।। जिन० ।।६।।
लखि पार्श्व तेरे पास शत्रु त्रास तैं भाजे ।
अंकुश निहार दुष्ट जुष्ट दर्प को त्याजे ।।
दुख रूप खर्व गर्व को वह वज्र हरे है ।
कर कञ्जमे इक कञ्जसो सुख पुञ्ज भरे है ।। जिन० ।।१०।।
चरणारविन्द मे है नूपुरादि आभरन ।
कटि मे है सार मेखला प्रमोद को करन ।।
उर मे है सुमन माल सुमन भान की माला ।
पट रङ्ग अंग संग सो सोहे विशाला ।। जिन० ।।११।।
करकञ्ज चार भूषन सों भूरि भरा है ।
भवि वृंद को आनन्द कन्द पूरि करा है ।।
जुग भान कान कुण्डल सो जोति धरा है ।
शिर शीस फूल २ सो अतूल धरा है ।। जिन० ।।१२।।
मुख चन्द को अमंद देख चन्द भी थम्भा ।
छवि हेर हार हो रहा रम्भा को अचम्भा ।।
दृग तीन सहित लाल तिलक भाल धरे है ।
विकसित मुखारविन्द सों आनन्द भरे है ।। जिन० ।।१३।।
जो आपको त्रिकाल लाल चाह सो ध्यावे ।
विकराल भूमिपाल उसे भाल झुकावे ।।
जो प्रीत सो प्रतीति सपरीति बढावे ।
सो ऋद्धि सिद्धि वृद्धि नवोनिधि को पावे ।। जिन० ।।१४।।
जो दीप दान के विधान से तुम्हें जपै ।
सो पापके निधान तेज पुञ्ज से दिपै ।।
जो भेद मन्त्र वेद मे निवेद किया है ।
सो बाध के उपाध सिद्ध साध लिया है ।। जिन० ।।१५।।

धन धान्यका अर्थी है सो धन धान्य को पावै।
सतान का अर्थी है सो संतान खिलावै॥
निजराज का अर्थी है सो फिर राज लहावै।
पद भ्रष्ट सुपद पायकै मनमोद बढावै॥ जिन० ॥१६॥
ग्रह क्रूर ब्यन्तराल व्याल जाल पूतना।
तुम नाम के सुन हाक सो भागे है भूतना॥
कफ वात पित्त रक्त रोग शोक शाकिनी।
तुम नाम तै डरी मही परात डाकिनी॥ जिन० ॥१७॥
भयभीत की हरनी है तुही मात भवानी।
उपसर्ग दुर्ग द्रावती दुर्गावती रानी।
तुम सङ्कटा समस्त कष्ट काटनी दानी।
सुखसार की करनी, तू शङ्करोश महारानी ॥जिन०॥१८॥
इस वक्तमे जिन भक्त को दुख व्यक्त सतावै।
अय मात तुझे देखिके क्या दर्द ना आवै॥
सब दिनसे तो करती रही जिन भक्त पै छाया।
किस वास्ते उस बात को ऐ मात भुलाया ॥जिन० ॥१९॥
हो मात मेरे सर्व ही अपराध छिमा कर।
होता नही क्या बाल से कुचाल यहा पर।
कुपुत्र तो होते हैं जगत माहि सरासर।
माता न तजै तिनसो कभो नेह जन्म भर ॥जिन० ॥२०॥
अब मात मेरी बात को सब भात सुधारो।
मन कामना को सिद्ध करो विघ्न विदारो॥
मति देर करो मेरी ओर नेक निहारो।
करकञ्ज की छाया करो दुख दर्द निवारो ॥जिन० ॥२१॥
ब्रह्माण्डनी खलमर्दनी सुखमण्डनो ख्याता।
दुख टारिकै परिवार सहित दे मुझे साता॥

तज के बिलम्ब अम्बजी अवलम्ब दीजिये।
वृष चन्द नन्द वृन्दको आनन्द कीजिये॥ जिन० ॥२२॥
जिन धर्म से डिगने का कहीं आपड़े कारन।
तो लीजिये उबार मुझे भक्त उधारन॥
निजकर्म के संजोग से जिस जौन मे जावो।
तहां दीजिये सम्यक्त्व जो शिवधामको पावो॥
जिन शासनी हंसासनी पदमावती माता।
भुज चारते फल चारु दे पदमावती माता॥२३॥

शास्त्र–भक्ति

करूं भक्ति तेरी हरो दुख माता भ्रमण का॥ टेर॥
अकेला ही हू मै कर्म सब आये सिमटिके।
लिया है मै तेरा शरण अब माता सटकि के॥
भ्रमावत है मोको–करम दुख देता जनम का।
करूं भक्ति तेरी हरो दुख माता भ्रमण का॥१॥
दुखी हुआ भारी, भ्रमत फिरता हू जगत में।
सहा जाता नाही अकल घबराई भ्रमण मे॥
करूं क्या मा मोरी चलत वश नाही मिटन का॥करूं०॥२॥
सुनो माता मोरी अरज करता हूं दरद में।
दुखी जानो मोकों डरप कर आया शरण में॥
कृपा ऐसी कीजे, दरद मिट जाये मरण का॥ करूं० ॥३॥
पिलावे जो मोकूं सुबुद्धिकर प्याला अमृत का।
मिटावे जो मेरा, सरव दुख सारे फिरन का॥
पड़ूं पांवां तेरे, हरो दुख सारा फिकर का॥ करूं० ॥४॥

सवैया

मिथ्यातम नासवे को, ज्ञान के प्रकाशवे को।
आपा परकासवे को भानुसी बखानी है॥

हो द्रव्य जानवे को, वसु विधि भानवे को।
स्व-पर पिछानवे को परम प्रमानी है॥
नुभौ बतायवे को जीव के जतायवे को।
काहू न सतायवे को भव्य उर आनी है॥
हा तहा तारवे को, पार के उतारवे को।
सुख विस्तारवे को, ऐसी जिन वाणी है॥

दोहा—जिनवाणी की स्तुति करे, अल्प बुद्धि परमान।
'पन्नालाल' विनती करें, दे माता मोहि ज्ञान॥६॥
हे जिनवाणी भारती, तोहि जपूं दिन रैन।
जो तेरा शरणा गहै, सुख पावै दिन रैन॥७॥
जा वानी के ज्ञान तैं, सूझै लोकालोक।
सो वाणी मस्तक चढो, सदा देत हो धोक॥८॥

श्री सिद्धचक्र की आरती

जय सिद्धचक्रदेवा जय सिद्धचक्रदेवा
करत तुम्हारी निशदिन मन से सुर नर मुनि सेवा ॥जय०॥
ज्ञानावर्ण दर्शनावरणी मोह अन्तराया।
नाम गोत्र वेदनी आयु को नाशि मोक्ष पाया ॥जय० ॥१॥
ज्ञान अनत अनन दर्श सुख बल अनंत धारो।
अव्यावाध अमूर्ति अगुरुलघु अवगाहन धारी ॥जय० ॥२॥
तुम अशरीर शुद्ध चिन्मूरति स्वातम रसभोगी।
तुम्हे जपैं आचार्योपाध्याय सर्वसाधु योगी ॥जय० ॥३॥
ब्रह्मा विष्णु महेश सुरेश गणेश तुम्हे ध्यावैं।
भविअलि तुम चरणाम्बुज सेवत निर्भय पद पावैं ॥जय०॥४॥
सङ्कट-टारण अधम उधारन भवसागर तरणा।
अष्ट दुष्ट रिपुकर्म नष्ट करि जन्ममर्ण हरणा ॥जय०॥५॥

दीन दुखी असमर्थ दरिद्री निर्धन तन रोगी ।
सिद्धचक्र को ध्याय भये ते सुर नर सुख भोगी ।।जय०।।६।।
डाकिन शाकिन भूत पिशाचिन व्यंतर उपसर्गा ।
नाम लेत भगि जाय छिनक मे सब देवी दुर्गा ।।जय०।।७।।
वन रन शत्रु अग्निजल पर्वत विषधर पञ्चानन ।
मिटे सकल भय कष्ट, करें जे सिद्धचक्र सुमिरन ।।जय०।।८।।
मैना सुन्दर कियो पाठ यह पर्व अठाइनि मे ।
पति-युत सात शतक कोढिन का गया कुष्ट छिनमे ।।जय० ।।९।।
कार्तिक फागुन साढ आठ दिन सिद्धचक्र पूजा ।
करे शुद्ध भावो से 'मक्खन' लहे न पद पूजा ।।जय० ।।१०।।

भजन सिद्धचक्र

श्री सिद्धचक्र का पाठ करो दिन आठ ठाठ से प्राणी,
फल पायो मैना राणी ।। टेक ।।
मैना सुन्दरि इक नारी थी, कोढी पति लखि दुखियारी थी ।
नहि पड़े चैन दिन रैन व्यथित अकुलानी ।। फल० ।।१।।
जो पति का कष्ट मिटाऊंगी, तो उभयलोक सुख पाऊंगी ।
नहिं अजागल-स्तनवत् निष्फल जिन्दगानी ।। फल० ।।२।।
इक दिवस गई जिन मन्दिर मे, दर्शन करि अति हर्षी उरमे
फिर लखे साधु निर्ग्रंथ दिगम्बर ज्ञानी ।। फल० ।।३।।
बैठी मुनि को कर नमस्कार, निज निन्दा करती बार बार
भरि अश्रु नयन कही मुनिसौं दुखद कहानी ।।फल० ।।४।।
बोले मुनि पुत्री धैर्य धरो, श्री सिद्धचक्र का पाठ करो ।
नहिं रहे कुष्ट की तन मे नाम निशानी ।।फल० ।।५।।
सुनि साधु वचन हर्षी मैना, नहिं होय झूठ मुनि के बैना
करिके श्रद्धा श्री सिद्धचक्र की ठानी ।। फल० ।। ६ ।।

जब पूर्व अठाई आया है, उत्सवयुत पाठ कराया है।
सबके तन छिड़का यन्त्र-न्हवन का पानी ।। फल० ।। ७ ।।
गंधोदक छिड़कत वसुदिन मे, नहि रहा कुष्ट किञ्चित् तन मे।
सब सात शतक की काया स्वर्ण समानी ।। फल० ।। ८ ।।
भवभोग भोगि योगेश भये श्रीपाल कर्म हनि मोक्ष गये।
दूजे भव मैना पावे शिव रजधानी ।। फल० ।। ६ ।।
जो पाठ करे मन वच तन से, वे छूट जाय भवबन्धन से।
'मक्खन' मत करो विकल्प कहा जिनवानी ।। फल० ।।१०।।

शास्त्र स्वाध्याय का मङ्गलाचरण

ॐ नमो सिद्धेभ्य, ॐ जय जय जय,
नमोस्तु ! नमोस्तु !! नमोस्तु !!!
णमो अरिहंताणं णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं,
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।
ओंकारं बिन्दुसंयुक्तं, नित्यं ध्यायन्ति योगिनः
कामदं मोक्षदं चैव, ओंकाराय नमो नमः ।। १ ।।
अविरलशब्दघनौघप्रक्षालितसकल-भूतलमलकलङ्का।
मुनिभिरुपासिततीर्था सरस्वती हरतु नो दुरितान् ।।२।।
अज्ञानतिमिरान्धानां ज्ञानाञ्जनशलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ।।३।।

श्री परमगुरुवे नमः, परम्पराचार्य गुरुवे नमः सकलकलुषविध्वंसकं, श्रेयसां परिवर्धकं, धर्मसम्बन्धकं, भव्यजीवमनः प्रतिबोधकारकमिदं शास्त्रं श्री (ग्रन्थ का नाम) नामधेयं, अस्य मूल ग्रन्थकर्तारः सर्वज्ञदेवास्तदुत्तरग्रन्थकर्त्तारः श्रीगणधरदेवाः प्रतिगणधरदेवास्तेषां वचोनुसारमासाद्य श्री (आचार्य का नाम) आचार्येण विरचितम्, श्रोतारः सावधानतया शृण्वन्तु ।

मंङ्गलं भगवान् वीरो, मङ्गलं गौतमो गणी।
मङ्गलं कुन्दकुन्दाद्यो, जैनधर्मोस्तु मङ्गलम् ॥

आत्मकीर्तन

हूं स्वतन्त्र निश्चल निष्काम, ज्ञाता दृष्टा आतमराम ॥टेक॥
मै वह हूं जो है भगवान्, जो मै हूं वह है भगवान।
अन्तर यही ऊपरी जान, वे विराग यहां राग वितान ॥१॥
मम स्वरूप है सिद्धसमान, अमितशक्ति सुखज्ञान निधान।
किन्तु आशवश खोया ज्ञान, बना भिखारी निपट अजान ॥२॥
सुख दुख दाता कोई न आन, मोह राग रुष दुखकी खान।
निजको निज परको पर जान, फिर दुखका नहि लेश निशान ॥३॥
जिन शिव ईश्वर ब्रह्मा राम, विष्णु बुद्ध हरि जिसके नाम।
राग त्याग पहुंचे निज धाम, आकुलता का फिर क्या काम ॥४॥
होता स्वयं जगत परिणाम,, मै जगका करता क्या काम।
दूर हटो परकृत परिणाम; सहजानन्द रहूं अभिराम ॥५॥

एक भक्त पुजारी

शास्त्र सुनै मालाये फेरी, प्रतिदिन बना पुजारी।
किन्तु रहा जैसे का तैसा, हुआ न मन अविकारी ॥
साठ सालकी उम्र हो चली, फिरभी ज्ञान न जागा।
सच तो होगा यह कह देना, जीवन रहा अभागा ॥

नहालिया होगया शुद्ध, आ खडा हुआ प्रभु पद में।
त्याग सका न वासना मन की, डूबा गहरे मद में ॥
इधर धूप क्षेपण करता मन उधर सुलगता जाता।
भावशून्य केवल शरीर, पूजाका पुन्य कमाता ॥२॥

कहता फिर पूजा है निष्फल, सङ्कट नही मिटाती।
वही मशक्कत वही गरीबी, सुख न सामने लाती ॥

]

हो न पैसा भी इतना, जो सब पर रोब जमाता।
शीत वायु फैन से लेता, या मोटर दौड़ाता ॥ ३ ॥
नहीं सोचता यह पूजा क्या? जिसमे चित चञ्चल है।
बहू बेटियों पर कुदृष्टि, या अरु कोई हलचल है॥
जिसको कहते है पूजा, जिसके हम भक्त पुजारी।
उसको पुण्य कथा सुनलो, शिक्षाप्रद कल्मष-हारी ॥४॥
भक्त लीन था प्रभु पूजा मे, निज विकारता खोकर।
घर से एक खबर आती है, दुखकर और भयङ्कर॥
नौ जवान इकलौता बेटा, अभी सांप ने काटा।
चल जल्दी घर, तोड दिया आहो ने सन्नाटा ॥५॥
सुनता है सुनकर कहता है, मै ही क्या कर लूंगा।
पूजा छोड भगू, आखिर जीवन तो डाल न दूंगा॥
सुनकर स्त्री मन्दिर मे रोती रोती आती है।
कहती है कठोर हो, क्या पूजा अब भी भाती है ॥६॥
अरे! छोड चलदो पूजा को, फिर भी समय मिलेगा।
चला गया बच्चा तो दुख, दिलसे न कभी निकलेगा॥
ऐसी भी पूजा क्या, जो बच्चे का रहम भुलाती।
जल्दो चलो, खोफ से मेरी, धडक रही है छाती ॥७॥
हाय! अचेत पड़ा है बे-सुध, तन मे भरा जहर है।
मुंह से झाग दे रहा है, पल पल प्राणो का डर है॥
सब तुमको धिक्कार रहे, कहते ये कैसा नर है।
निरमोही के सीने मे दिल है, अथवा पत्थर है? ॥८॥
बोला जाकर जो-उपाय-समझो, वह करो कराओ।
मेरी पूजा मे न प्रियतमे, बाधा तुम पहुंचाओ॥
पूजा को तुम व्यर्थ समझकर हो ऐसा कहती हो।
लेकिन यह सच्चा उपाय है, पर तुम भूल रही हो ॥९॥

प्रभु से अधिक कौन है, विषहर कौन अधिक उपकारी।
जिसकी चरण शरण मे जाऊं, बनकर दीन भिखारी ॥
इन चरणों की सेवा से जो, फल दुनियां पाती है।
वैसी वस्तु मिसाल देखने मे न कही आती है ॥१०॥

प्रभु पूजा मेरा उपाय है, जो सङ्कट मोचक है।
अब तो दुःख के सबब और भी, यह अति आवश्यक है ॥
नारी चली क्रोध मे डूबी, रोती और बिलखती।
विवश हताश दर्द सांसो पर, जीवन कायम रखती ॥११॥

भक्त लगा पूजा मे, प्रभु छवि को अपने में खोने।
सोचा नही हुआ क्या आगे, क्या जाता है होने ॥
इतने मे बच्चे को लेकर, गृहिणी फिर आ धमकी।
भीड साथ मे थी, रोते सब लेकर सूरत गम की ॥१२॥

वेदी के समीप बच्चे को, नाखुश होकर डाला।
कहने लगी बचालो इसको, पूजा करके लाला ॥
पूजा महामन्त्र है इसका, वह ही जहर हरेगी।
जो न बचा पाई तो सचमुच बनी बात बिगडेगी ॥१३॥

नही भक्त ने उत्तर मे, भूले भी शब्द निकाला।
प्रभु की नजरों मे अपनी आंखों को बेशक डाला ॥
उसी लगन से पूजा मे, वह हुआ दृढव्रती तन्मय।
फिर जय हो जाने मे क्या हो भी सकता था संशय ॥१४॥

मुर्झाये मन मुदित हुये, मुख खिची हर्ष की रेखा।
जब निर्विष होते बालक को सबने सन्मुख देखा ॥
उठा कुमार नीद से सोकर ही जैसे जागा हो।
जीवन की दुंदुभि श्रवण कर, महाकाल भागा हो ॥१५॥

धन्य धन्य जय के नारों से, सबने गगन गुञ्जाया।
लोगों ने अचरज माता ने, अपना बच्चा पाया ॥

कहने लगे धन्य पूजा, और धन्य अनन्य पुजारी।
श्रद्धा और भक्तिमय पूजा, है अतीव सुखकारी ॥१३॥
"भगवत्" पूजा की महानता, कहले किसका बस है।
किसमे इतनी ताकत है, किसमे इतना साहस है?

देवस्तवन

(अनुवादक पं० नाथूरामजी प्रेमी)

शक्र[1] सरीखे शक्तिवानने, तजा गर्व गुण गाने का।
किन्तु न मैं साहस छोड़ूंगा, विरदावली[2] बनाने का॥
अपने अल्पज्ञान से हीं मैं, बहुत विषय प्रकटाऊंगा।
इस छोटे वातायन[3] मे ही सारा नगर दिखाऊंगा ॥१॥
तुम सब-दर्शी देव, किन्तु तुमको न देख सकता कोई।
तुम सबके हो ज्ञाता, पर तुमको न जान पाता कोई॥
'कितने हो', 'कैसे हो' यों कुछ कहा न जाता है भगवान।
इसमे निज अशक्ति बतलाना, यही तुम्हारा स्तवन महान॥
बालक सम अपने दोषों से जो जन पीडित रहते है।
उन सबको हे नाथ! आप भवताप-रहित नित करते है॥
यो अपने हित और अहित का, जो न ध्यान धरने वाले।
उन सबको तुम बाल-वैद्य हो, स्वास्थ्यदान करने वाले ॥३॥
भक्तिभाव से सुमुख आपके रहने वाले सुख पाते।
और विमुख जन दुख पाते है राग द्वेष नहि तुम लाते॥
अमल सुदुतिमय चारु-आरसी, सदा एकसी रहती ज्यो।
उसमे सुमुख विमुख, दोनों ही देखें छाया ज्यों की त्यो ॥४॥
प्रभु की सेवा करके सुरपति बीज स्वसुख के बोता है।
हे अगम्य! अज्ञेय! न इससे, तुम्हे लाभ कुछ होता है॥

---

१ इन्द्र। २ स्तोत्र। ३ खिड़की।

जैसे छत्र सूर्य के सन्मुख, करने से दयालु जिनदेव।
करने वाले को होता, सुखकर आतपहर स्वयमेव ॥५॥
धनिको को तो सभी निधन लखते है, भला समझते हैं।
पर निधनों को तुम सिवाय जिन, कोई भला न कहते है॥
जैसे अन्धकारवासी उजियाले वाले को देखे।
वैसे उजियालावाला नर, नहिं तमवासी को देखे॥६॥
बिन जाने भी तुम्हे नमन करने से जो फल फलता है।
वह औरों को देव मान, नमने से भी नहि मिलता है॥७॥
जो इस जगके पार गये, पर जाय न पाय जिनका पार।
ऐसे जिनपति के चरणों की, लेता हूं मै शरण उदार॥८॥

वीर-शासन

जिसकी दया-दृष्टि से हिंसक जन्तु बने थे दया निधान।
किया असंख्यों जीवधारियों का जिसने जगको कल्याण॥
मृग, शावक औ शेर, अजा-जल एक घाट पर पीते थे।
एक ठोर मिल मोद मनाते सभी भेड़िये-चीते थे॥
हिंसा-सी पिशाचनी को दे डाला जिसने निर्वासन।
वन्दनीय उस वीर-प्रभु का धन्य धन्य वह प्रिय शासन॥१॥
ऊँच नीच का भेद मिटाकर बांधा समता का सम्बन्ध।
भर दी नर-रूपी पुष्पों मे दया भाव की नूतन गन्ध॥
राग द्वेष दुर्भाव मिटाकर हृदय सुमन सब दिये मिला।
बिखरी मानवता के माला के मोती सब दिये मिला॥
दिया अहिंसा की देवी को अति ऊंचा पावन आसन।
वन्दनीय उस वीर प्रभु का, धन्य-धन्य वह प्रिय शासन॥२॥
जिनके चरणों पर इन्द्रादिक नाना रत्न चढाते थे।
ध्यानमग्न जिनके शरीर से वन पशु देह खुजाते थे॥

ग्रीष्म निदाघ समय मे जिनकी छाया को अपनाते थे।
हाथी सूंड रख जिस मुनिवर के चरणो मे सो जाते थे ॥
खग करते थे निकट बैठकर णमोकार का उच्चारण।
वन्दनीय उस वीर-प्रभु का धन्य धन्य वह प्रिय शासन ॥३॥
खिल उठती थी उषा देखकर जिनका दिव्य अलौकिक तेज।
प्रकृति बिछा देती थी नीचे हरी मखमली दूर्वा-सेज ॥
मेघ तान देते थे जिनके शिर पर शीतल छाया छत्र।
दर्शन करने मानों प्रभु के होते थे नभ पर एकत्र ॥
प्रभु-तन आभा बिजली बनकर करती थी नभ मे गर्जन।
वन्दनीय उस वीर प्रभु का धन्य धन्य वह प्रिय शासन ॥४॥

श्रवणबेल्गोल स्तवन

तुम प्राचीन कलाओं का आदर्श विमल दरशाते
भारतके ध्रुव गौरव-गढ पर जैन-केतु फहराते
कला-विश्व के सुप्त प्राण पर अमृत-रस बरसाते
निधियो के हत साहस मे नवनिधि-सौरभ सरसाते
आओ इस आदर्श कीर्तिके दर्शन कर हरषाओ
वन्दनीय हे जैनतीर्थ तुम युग-युगमे जय पाओ ॥१॥
शुभस्मरण कर तीर्थराज हे शुभ्र अतीत तुम्हारा
फूल-फूल उठता है अन्तस्तल स्वयमेव हमारा
सुरसरि-सदृश बहा दो तुमने पावन गौरव-धारा
तीर्थक्षेत्र जग मे तुम हो देदीप्यमान ध्रुवतारा
खिले पुष्प की तरह विश्वमे नवसुगन्ध महकाओ
वंदनीय हे जैनतीर्थ तुम युग-युगमे जय पाओ ॥२॥
दिव्य विंध्यगिरि भव्य चन्द्रगिरि की शोभा है न्यारी
पुलकित हृदय नाच उठता है हो बरबस आभारी

श्रुत-केवली सुभद्रबाहु सम्राट् महा यश धारी
तप तप घोर समाधिमरण कर यही कीर्ति विस्तारी
उठो पूर्वजो की गाथाये जगका मान बढाओ
वंदनीय हे जैनतीर्थ तुम युग-युगमे जय पाओ ॥३॥

सात-आठसौ शिलालेख का है तुममे दुर्लभ धन
श्रावक-राजा सेनानी श्राविका-आर्यिका मुनिजन
धीर-वीर-गम्भीर कथाएँ धर्म-कार्य सञ्चालन
उक्त शिलालेखों मे है इनका सुन्दरतम वर्णन
दर्शन कर इस पुण्य क्षेत्रका जीवन सफल बनाओ
वंदनीय हे जैनतीर्थ तुम युग-युगमे जय पाओ ॥४॥

पशु रक्षा पर प्राण दिये जिन लोगो ने हँस हँसकर
वीर-वधू सायिर्ब+लडी पति-संग समरके स्थल पर
चन्द्रगुप्त सम्राट मौर्यका जीवन अति उज्ज्वलतर
चित्रित है इसमे इनस बका स्मृति-पट महामनोहर
आ-आ एक बार तुम भी इसके दर्शन कर जाओ
वंदनीय हे जैनतीथ तुम युग-युगमे जय पाओ ॥५॥

मन्दिर अति-प्राचीन कलामय यहा अनेक सुहाते
दुर्लभ मानस्तम्भ मनोहर अनुपम छवि दिखलाते
यहां अनेकानेक विदेशी दर्शनार्थ है आते
यह विचित्र निर्माण देख आश्चर्य चकित रह जाते
अपनी निरुपम कला देखने देशवासियो ! आओ
वंदनीय हे जैनतीर्थ तुम युग-युगमे जय पावो ॥६॥

प्रतिमा गोम्मटदेव बाहुबलि की अति गौरवशाली
देखो कितनी आकर्षक है चित्त-लुभाने वाली
बढा रही शोभा शरीर पर चढ लतिका शुभशाली

+ इनका प्राकृत नाम शावियब्बे है ।

जिनको दिव्य कलाओ ने अपने हाथों ही ढाली
उन्नति के मूल केन्द्र मे जीवन ज्योति जगाओ
वंदनीय हे जैनतीर्थ तुम युग-युगमे जय पाओ ।।७।।
ऊंचे सत्तावन सुफीट पर नभ से शीश लगाये
शोभा देती जैन धर्म का उज्ज्वल यश दरशाये
जिसने कौशल-कला-कलाविद के सम्मान बढाये
देख-देख हैदर-टीपू-सुल्तान जिसे चकराये
आओ इसका गौरव लख अपना सम्मान बढाओ
वंदनीय हे जैनतीर्थ तुम युग-युगमे यश पावो ।।८।।
गङ्ग-वंश के राचमल्ल नृप विश्व-कीर्ति-व्यापक है
नृप-मन्त्री चामुण्डरायजी जिसके संस्थापक है
जो निर्माण हुआ नौसे नब्बे मे यशवर्द्धक है
राज्यवश मैसूर आजकल जिसका संरक्षक है
उसकी देख रेख रक्षा मे अपना योग लगाओ
वंदनीय हे जैनतीर्थ तुम युग-युगमे जय पाओ ।।९।।
कहे लेखनी पुण्य-तीर्थ क्या गौरव-कथा तुम्हारी
विस्तृत कीर्ति-सिन्धु तरने मे है असमर्थ विचारी
नत मस्तक अन्तस्तल तन-मन-धन तुम पर बलिहारी
शत-शत नमस्कार तुम को हे नमस्कार अधिकारी
फिर सम्पूर्ण विश्वमे अपनी विजय-ध्वजा फहराओ
वंदनीय हे जैनतीर्थ तुम युग-युगमें जय पाओ ।।१०।।

नेमिनाथ–स्तव

त्रिभुवनगुरु स्वामी जी, करुनानिधि नामी जी। सुनि अन्तर जामी मेरी वीनती जी ।। मै दास तुम्हारा जी, दुखिया बहु भारी जी। दुख मेटनहारा, तुम जादौपती जी ।। भरम्यौ संसाराजी चिर ।वपति भंडारा जी। कहि सार न सारे, चहुंगति डोलियोजी

दुख मेरु समाना जी, सुख सरसों–दाना जी । अब जान धरि ज्ञान, तराजू तोलिया जी ।। थावर तन पायाजो, त्रसनाम धराया जी । कृमि कुंथु कहाया, मरि भँवरा भया जी ।। पशुकाया सारीजी, नानाविधि धारीजो । जलचारी थलचारी, उडन पखेरुआ जी ।। नरकन के माही जी, दुख और न काहीं जी । अति घोर जहा है, सरिता खारकीजी ।। पुनि असुर संघारै जो, निज बैर विचारै जो । मिल बाधै अरु मारै, निरदय नारकी जी ।। मानुष अवतारै जी, रह्यो गरभमंझारैं जी । रटि रोयौ जनमत, वारै मै घनो जी ।। जोवन तन रोगी जी, कै बिरहवियोगी जी । फिर भोगो बहुविधि, विरधपनाकी वेदनाजी ।। सुरपदवी पाई जी, रम्भा उर लाईजो । तहा देखि पराई सम्पति भूरियो जी ।। माला मुरझानी जी, अब आरति ठानी जो । थिति पूरन जानो, मरत विसूरियो जी ।। यौ दुख भवकेरा जी, भुगतौ बहुतेरा जी । प्रभु ! मेरे कहतै, पार न है कहो जी ।। मिथ्यामदमाता जी, चाहो नित साताजी । सुखदाता जगत्राता, तुम जानै नही जो । प्रभु भागनि पाये जो, गुन श्रवण सुहाये जी । तकि आयौ सब सेवकको, विपदा हरौ जी ।। भववास वसेरा जी, फिरि होय न मेरा जो । सुख पावै जन तेरा, स्वामी ! सो करौ जी ।। तुम शरनसहाईजी, तुम सज्जन भाईजो । तुम-भाई तुम्ही बाप, दया मुझ लीजिये जी । 'भूधर' कर जोरै जी, ठाडा प्रभु ओरै जी । जिनदास निहारो, निरभय कीजिये जी ।।१८।।

पथिक–सन्देश

(रचियता श्री पं० छोटेलालजो)

अरे ! क्यों इधर भटकता है ?

मूढ पथिक ! क्यों इस अटवो के निकट फटकता है ? अरे०।।

यह संसार महा अटवो है विषय चोर दुख रूप ।

लूट रहे धोखा दे-दे कर, तेरो निधि चिद्रूप ।।

शीघ्र क्यों नहीं सटकता है ।।१।। अरे०

[illegible] सम हैं ये नीरस, क्यो बैठा है आय ?
[illegible] यहा से अरे पथिक ! तू अब मत धोखा खाय ।
यहां तू व्यर्थ ठिठकता है ॥२॥ अरे०॥

इस बन के भीतर रहते है, पंच-इन्द्रियमय चोर ।
उनका नृत्य मनोहर है ज्यो बन मे नाचे मोर ॥
देख क्यों व्यर्थ बहकता है ॥३॥ अरे०॥

पथरीली यह भूमि भयानक खड़े झाड झखाड ।
तेरे सर पर खडा हुआ है काल सिंह मुह फाड ॥
अभी आ तुझे गटकता है ॥४॥ अरे० ॥

आगे तेरे महा भयानक हैदुर्गम पथ देख ।
फंसा आज तू बीच भंवर मे, इसमे मीन-न-मेख ॥
देखकर हृदय धडकता है ॥५॥ अरे० ॥

कई बार धोखा खाकर तू खोया सब धन माल ।
बचा खुचा धन यहा खोयेगा होगा अब कंगाल ॥
व्यर्थ तू यहा अटकता है ॥६॥ अरे० ॥

तू क्षण-सुख पा करके मूरख बैठा है सुख मान ।
किन्तु लुटेरा खडा सामने लेकर तीर कमान ॥
झपट सब रकम झटकता है ॥७॥ अरे०॥

इस अटवी के गहन स्थल मे क्यो तू रहा लुभाय ।
बिछा जाल माया का यहा पर सभी रहे पछताय ॥
देख कर हृदय धड़कता है ॥८॥ अरे० ॥

इधर-उधर क्या देख रहा है, मनो-विनोदी राग ।
इनके भीतर छुपी हुई है, महा भयानक आग ॥
इन्ही मे महा कटुकता है ॥९॥ अरे० ॥

खाता ठोकर तू पथ-पथ पर, पाता है सन्ताप ।
इधर-उधर तू भटक-भटक कर आता अपने आप ॥
गठरियां यही पटकता है ॥१०॥ अरे० ॥

क्यो उन्मत्त भया है मूरख, आख खोलकर देख ।
इस जीवन के पथ मे तेरे, पडी भयानक रेख ।।
भाग्य हर जगह अटकता है ।।११।। अरे० ।।

स्वार्थ-पूर्ण मय इस जंगल मे है 'सरिता' भरपूर ।
इसने तेरे पथ को अब तो किया बहुत ही दूर ।।
इधर क्यो व्यर्थ ढुलकता है ।।१२।। अरे० ।।

पहले तो तू इस अटवी मे आया था कर प्यार ।
अब क्यों सिर पकड पकड कर रोता है हर बार ।।
खडा क्यो व्यर्थ ढुलकता है ।।१३।। अरे० ।।

जीवन-शकट भयानक तेरा उलझ गया अब आय ।
पागल बना मोह-माया मे विषय-वृक्ष फल खाय ।।
हृदय मे यही खटकता है ।।१४।। अरे ।।

तेरी निधि का रक्षक भाई यहा न दीखे कोय ।
'लगे आग जब कूप खुदावे, कैसे रक्षा होय ।।
खडा क्यो यहाँ सिसकता है ।। १५ ।। अरे० ।।

यहाँ बैठ तू भूल गया है अपने पथ की राह ।
आगे तेरा क्या होवेगा, जरा नही परवाह ।।
हृदय मे यही कपटता है ।। १६ ।। अरे० ।।

इस जंगल मे जो कोई आया, वही रहा पछताय ।
किन्तु आज तू यहा बैठ कर मौजे रहा उडाय ।।
विषय-विष यहाँ महकता है ।। १७ ।। अरे० ।।

जरा देख तू आख खोलकर मत मन मांहि फूल ।
तेरे पथ मे बिछे हुये है, कंटक-वृक्ष बंबूल ।।
अकड मे कहाँ मटकता है ।। १८ ।। अरे० ।।

इस अटवी मे आ पथ भूला बना प्रचुर अज्ञान ।
मोह लुटेरा एक क्षणक मे नाश करे विज्ञान ।।

अभी वह आन टपकता है ॥ १९ ॥ अरे० ।

अरे गठरिया पथिक ! उठाले यहां बैठ मत भूल ।
उस पथ का तू पथिक नही है, क्यो चलता प्रतिकूल ॥
यहाँ क्यों खडा लटकता है ॥ २० ॥ अरे० ।

यहाँ बैठ क्या सोच रहा है, समय नही अब देख ।
आयु दिवाकर पार कर रहा, अस्ताचल की रेख ॥
अभी तो सूर्य चमकता है ॥ २१ ॥ अरे० ।

तेरा पथ कुछ दूर नही है, इसमे है इक भूल ।
दृष्टि बदल कर इस पथ से फिर उस पथ के अनुकूल ॥
इधर क्यो व्यर्थ लपकता है ॥ २२ ॥ अरे०

मोह-वारुणी पीकर मूरख, 'सत्पथ' दिया भुलाय ।
उस 'नगरी' का तू पथ तज कर इधर भटकता आय ॥
हुई क्यो नही विरकता है ॥ २३ ॥ अरे० ॥

इस प्रकार सन्देश-श्रवण कर पथिक गया घबराय ।
मुक्ति-मार्ग से च्युत होकर मै, इस 'पथ' पहुंचा आय ॥
श्रवण अब पडी भनकता है ॥ २४ ॥ अरे०

हाथ जोडकर पथिक कहे गुरु किया महा उपकार ।
इस नगरी के विषम मार्ग से मुझको वेग निकार ॥
मार्ग यह बहुत कसकता है ॥ २५ ॥ अरे०

हो प्रसन्न गुरु देव दया निधि, दीना मार्ग बताय ।
'शिव नगरी' मे पहुच पथिक वह बना चिदानन्द राय ।
चरण "छोटे" नित नमता है ॥ २६ ॥ अरे०

इति ।